ऋषि युग्म की झलक-झाँकी

भाग-1

प्रकाशक

श्री वेदमाता गायत्री ट्रस्ट (TMD)

श्रीरामपुरम्, गायत्री नगर-शांतिकुंज, हरिद्वार

(उत्तराखण्ड) पिन- 249411

प्रथम संस्करण 2011 **मूल्य- 66/-**

ऋषि युग्म की झलक-झाँकी

प्रकाशक :-
श्री वेदमाता गायत्री ट्रस्ट (TMD)
श्रीरामपुरम्, गायत्रीनगर-शान्तिकुञ्ज-हरिद्वार
(उत्तराखण्ड) 249411

प्रथम संस्करण - 2011

प्रतियाँ -10,000

मूल्य - 65/-

सम्पर्क सूत्र :-

गायत्रीतीर्थ- शान्तिकुञ्ज, हरिद्वार (उत्तराखण्ड) भारत
फोन-(01334) 260602, 260309, 260328 फैक्स-260866
Internet:www.awgp.org Email:shantikunj@awgp.org

हमारे आत्मीय स्वजनो!

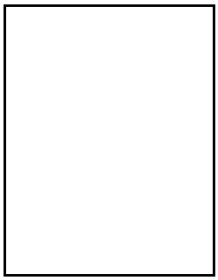

परम पूज्य गुरुदेव-वन्दनीया माताजी अपने परिजनों को प्रेम-आत्मीयता के साथ दिव्य पोषण देते रहे हैं। सबके व्यक्तित्व में उत्कृष्टता, भावनाओं एवं विचारों में श्रेष्ठता के दिव्य तत्त्व भरते रहे हैं। सबके दुःखों-कष्टों में वे हमेशा साथ रहकर धीरज एवं हिम्मत बढ़ाते रहे हैं। अब वे सभी परिजन अपनी अनुभूतियों को, अपनी गुरुसत्ता के दिव्य अनुदानों को अभिव्यक्त कर रहे हैं। इस जन्म शताब्दी की विशिष्ट वेला में वे किसी भी प्रकार उनके अनुदानों का ऋण उतारने की बड़ी कसक लिये हुए हैं।

आप सबकी श्रद्धा-भावना, समर्पण-साधना और अधिक बढ़े, इसी भाव से उनके दिव्य संस्मरणों को "ऋषि युग्म की झलक झाँकी" नाम की इस पुस्तक में आप सबके सम्मुख लाया जा रहा है। निश्चित ही यह पुस्तक संग्रहणीय होगी। यह हर कठिन अवसर पर प्रेरणा-प्रकाश देने वाली एवं जीवन जीने की कला समझने में बहुत उपयोगी सिद्ध होगी, ऐसा हमारा सुनिश्चित विश्वास है।

हमारे विराट् गायत्री परिवार के परिजनों के अनेकानेक ऐसे संस्मरण केवल उनके चित्त की स्मृतियों में ही भरे पड़े हैं, आशा है हमारे नैष्ठिक परिजन अपने सम्पर्क के पुराने कार्यकर्ताओं से ऐसे संस्मरण कलमबद्ध करवायें, या ऑडियो-वीडियो सीडी बनाकर यहाँ भेजते रहें, ताकि आगे भी इसी पुस्तक के अन्य अनेकों खण्ड प्रकाशित होते रह सकें। पूज्यवर के दिव्य, आकर्षक, चुम्बकीय व्यक्तित्व के अन्य अनेकों प्रसंग इसी प्रकार उल्लिखित किये जाने में वे अपना सहयोग प्रदान करेंगे, ऐसी हमारी आकांक्षा है।

आप सबके सर्वांगीण उत्कर्ष की स्नेहपूर्ण शुभकामनाएँ ।

आपकी बहिन

(शैलबाला पण्ड्या)

अनुक्रमणिका

भूमिका ---------- 5

1. ममता की मूर्ति, प्यार के सागर ---------- 7

2. यह तो गूँगे का गुड़ है ---------- 28

3. गुरुसत्ता के साथ मनोविनोद के क्षण ----------121

4. हम पाँच शरीरों से काम कर रहे हैं ---------- 133

5. साक्षात् शिव स्वरूप---------- 158

6. वे तंत्र के भी मर्मज्ञ थे---------- 178

7. भविष्य द्रष्टा हमारे गुरुदेव---------- 184

8. बच्चो! हमारा जन्म-जन्मांतरों का साथ है -------- 198

9. लाखों का जीवन बदला ---------- 212

10. बेटा! हम सदा तुम्हारे साथ रहेंगे ----------219

11. जिसने जो माँगा, वो पाया ---------- 228

12. भागीदारी की, नफे में रहे ---------- 247

13. उनकी चेतना आज भी सक्रिय है ---------- 251

भूमिका

यदा-यदा हि धर्मस्य.... की प्रतिज्ञा निभाने वाले परम स्रष्टा जब धरती पर अवतरित होते हैं, तब स्वयं को इतना गुप्त रखते हैं कि उनके सान्निध्य में निरन्तर कार्यरत व्यक्ति भी उन्हें ठीक से नहीं जान पाते। कभी झलक भी मिलती है, तब उन्हें एकटक देखते हुए यह सोचते हैं कि क्या ये सचमुच ईश्वर रूप हैं ? उनके इस प्रकार सोचते ही मायापति अपनी माया से उन्हें आच्छादित कर देते हैं व फिर अति सामान्य की तरह सब के साथ वही सामान्य जीवन क्रम चलता रहता है। उन्हें भान ही नहीं हो पाता कि वे उस परमसत्ता के साथ, उनके अंग-अवयव बन कर जीवन जी रहे हैं।

यही तो है लीलापति की लीला। ''सोई जानइ जेहि देहु जनाई'' की उक्ति पूर्णत: तब चरितार्थ होती है जब उनकी असीम अनुकम्पा से कोई-कोई भक्त उन्हें जान पाता है। जानने के बाद भी उनकी आकांक्षा के अनुरूप साथ चलने की सामर्थ्य जुटाने हेतु भी उनकी कृपा की आवश्यकता होती है। तभी तो अर्जुन जैसे समर्पित अभिन्न कृष्ण सखा को भी कहना पड़ गया कि ''कार्पण्य दोषोपहृत स्वभाव:...। कायरता के दोष से मेरा स्वभाव आहत हो गया है। धर्म के विषय में मैं मोहित चित्त हो गया हूँ, अत: मैं आपसे पूछता हूँ जिस कार्य से मेरा निश्चित भला हो, वही मार्ग बताइये।'' तब हम सामान्य जनों की क्या बिसात कि उनकी कृपा के बिना उन्हें पहचान सकें, उनकी राह चल सकें।

प्रस्तुत पुस्तक में ऐसे ही स्वजनों के गुरुसत्ता के साथ जुड़े प्रसंगों को प्रकाश में लाने का प्रयास किया गया है, जिससे भावी पीढ़ी भी पिछली पीढ़ी के कार्यों को जाने व समझे। अपनी समस्याओं के निदान हेतु उससे मार्ग दर्शन प्राप्त कर सके व अपनी श्रद्धा और समर्पण को निरंतर बढ़ाती रह सके।

साथ ही पूज्यवर के साथी, सहचर, सहयोगी, कदम से कदम मिलाकर चलने वाले, हर आज्ञा पर खड़े रहने वाले, निर्देशों को आँख मूँद कर मानने वाले, स्वयं असीम कष्ट सहकर भी कार्य पूर्ण कर संतोष प्राप्त कर उछलने-कूदने वाले बन्धु भी अपनी अनुभूति को तरोताजा कर रोमांचित हो सकें।

कभी पूज्य गुरुदेव ने कहा था कि बेटा हमने इतने अनुदान बाँटे हैं कि

यदि उन सबका लेखा-जोखा रखा जाये तो 18 महापुराण भी कम पड़ जायेंगे। वे परिजन जिन्होंने निज नयनों से उन्हें प्रत्यक्ष में भले ही न देखा हो, किन्तु उनके विचारों पर, उनके आदर्शों पर मर मिटने को तैयार हो गये व उनकी योजना को पूरा करने हेतु अपना जीवन समर्पित कर दिया। जो अपने सांसारिक कार्यों से समय, साधन, श्रम बचा-बचा कर गुरुकार्यों में होम रहे हैं, मिशन के विस्तार में अपना सहयोग देकर तन-मन-धन से युग निर्माण के आकांक्षी हैं। वे सभी स्वजन-बन्धु प्रस्तुत पुस्तक से प्रेरणा, प्रकाश, मार्गदर्शन, उत्साह, उमंग एवं कार्य पथ पर बढ़ने का साहस प्राप्त कर सकेंगे, ऐसा हमारा विश्वास है।

इन यादों में वह शक्ति है कि हर परिजन अपने कर्तृत्व के अनुसार यह अनुभव कर सकेगा कि हमारी समर्थ गुरुसत्ता ने जो असीम प्यार-दुलार, स्नेह-सम्मान, ममता, करुणा, कृपा, आशीर्वाद स्थूल रूप में अपने साथियों पर उड़ेला है, उसे अपने सूक्ष्म रूप में आज भी उड़ेल रहे हैं। हमारी श्रद्धा, निष्ठा जितनी सशक्त एवं सार्थक बनकर सक्रियता में परिवर्तित होगी, उतना ही हम उनकी कृपा के अधिकारी बन सकेंगे।

ऋषिसत्ता से जुड़े संस्मरणों को पहले भी प्रकाशित किया जाता रहा है। स्मारिकाओं में, प्रज्ञा अभियान पाक्षिक में, अखण्ड ज्योति पत्रिका में एवं वाङ्मय में भी कुछ विशिष्ट संस्मरण छपते रहे हैं। किन्तु जन्मशताब्दी की इस महत्त्वपूर्ण वेला में परिजनों के संस्मरणों को विशेष तौर पर इकट्ठा किया जा रहा है। आने वाले समय में एक शृंखलाबद्ध रूप से इस विषय पर भी पुस्तकें निकाली जायेंगी। यह पुस्तक उसका एक नमूना भर है। अतः जागृत परिजनों से अनुरोध है कि वे इस पुस्तक से प्रेरणा लेकर उन परिजनों के संस्मरणों को, जो पूज्य गुरुदेव के सहयोगी रहे हैं और बहुमूल्य यादें अपने अन्दर छिपाये बैठे हैं, लिखित रूप में अथवा आडियो-वीडियो रिकार्डिंग के रूप में, जैसे भी संभव हो सके, शान्तिकुञ्ज भेजें, ताकि हम इस शृंखला को आगे बढ़ा सकें।

-महिला मण्डल, शांतिकुंज

1. ममता की मूर्ति प्यार के सागर

पूज्य गुरुदेव एवं वंदनीया माताजी प्यार-आत्मीयता, दया, करुणा, ममता की साक्षात् प्रतिमूर्ति थे। उन्होंने इस मिशन को स्नेह-वात्सल्य की नींव पर खड़ा किया है। प्रत्येक परिजन यही महसूस करता है कि उन्होंने मुझ पर इतना ममत्व लुटाया है कि सगे माँ-बाप भी क्या लुटाते होंगे। उन्होंने युग निर्माण योजना के इस संगठन को गायत्री परिवार के नाम से भी संबोधित किया है। भाव यह है कि हम सब एक ही परिवार के सदस्य हैं।

वसुधैव कुटुम्बकम के मर्म को उन्होंने अपने जीवन से समझाने का प्रयास किया है। वे कहते हैं, ''मैं अधूरा प्यार करना नहीं जानता। मैंने जिससे भी प्यार किया है, पूरा प्यार किया है।'' एक जगह पर वे लिखते हैं- '' कोई कहे कि तुम्हारे गुरु से बड़ा कोई ज्ञानी है तो मान लेना। यदि कोई कहे कि तुम्हारे गुरु से बड़ा कोई दूसरा तपस्वी और सिद्ध-समर्थ है तो भी मान लेना पर यदि कोई कहे कि तुम्हारे गुरु से ज्यादा प्यार करने वाला कोई है तो बेटा! कभी मत मानना। मेरा प्यार तुम लोगों के साथ हमेशा रहेगा। मेरे शरीर के रहने पर और शरीर के न रहने के बाद भी।'' वे कहते थे, ''मैंने अपने बच्चों से बहुत प्यार किया है।'' सन् 1971 के विदाई उद्‌बोधन में वे कहते हैं, ''...प्यार.. प्यार..प्यार। यही हमारा मंत्र है। आत्मीयता, ममता, स्नेह और श्रद्धा यही हमारी उपासना है।'' आज भी यह मिशन उनके इसी सूत्र के आधार पर आगे बढ़ रहा है।

फिर भी उनका स्थूल स्नेह जिन परिजनों ने पाया है, उसका आनंद तो वे ही जानते हैं। वास्तव में ऋषिसत्ता ने अपने बच्चों पर जो स्नेह लुटाया, वह अतुलनीय, अद्वितीय, असीम है। परिजनों को लिखे गये उनके पत्रों में ही इतनी आत्मीयता, इतना प्यार झलकता है कि उन्हें पढ़ते समय लगता है, जैसे वे सामने खड़े होकर हमें दुलार रहे हैं तो जब प्रत्यक्ष में मिलते होंगे तो कितना वात्सल्य, कितना ममत्व लुटाते होंगे, इसकी कोई सहज ही कल्पना कर सकता है। यहाँ हम परिजनों के कुछ संस्मरण व उन्हें लिखे पत्रों के कुछ छोटे-

छोटे अंश प्रकाशित कर रहे हैं, जिनसे उनके अनोखे स्नेह और वात्सल्य की झलक मिलती है।

गुरुजी-माताजी ने हम सबको अपना अंग-अवयव कहा ही नहीं अपितु अपने पत्रों में किस प्रकार व्यक्त किया है, जानें-समझें.....

वे संबोधन स्वरूप **'हमारे आत्मस्वरूप'** शब्द का प्रयोग करते थे। कितनी गहरी भावनाएँ छिपी हैं इस संबोधन में। एकत्व का भाव। पढ़ने वाले की क्या मनोदशा होती होगी ? मन कितना आह्लादित हो जाता होगा ? सहज ही कल्पना कर सकते हैं।

सन् 1971 में पूज्य गुरुदेव साधना हेतु हिमालय चले गये थे। उन दिनों में 30-10-1971 को अपने एक निकटस्थ परिजन को माताजी के द्वारा लिखे गये पत्र के अंश कुछ इस प्रकार हैं-

''....अत्यधिक व्यस्तता के कारण उत्तर जल्दी नहीं लिख पाई। पर ऐसा कोई दिन नहीं गया होगा, जिस दिन तुम दोनों को स्मरण न किया हो। तुम दोनों हमारी आँखों की पुतलियों की तरह हो। हमारा वात्सल्य तुम्हारे लिये हर घड़ी उमड़ता रहता है। तुम्हारी हर परिस्थिति का पूज्य आचार्य जी को पता है। ऐसा ही मानना चाहिये। भले ही शारीरिक दृष्टि से वे कितने ही सघन एकांत में क्यों न हों।.... ''

एक अन्य परिजन को माताजी 2-5-1971 को लिखे गए एक पत्र में लिखती हैं -

''.....आप हमें अपने सगे बच्चों की तरह याद आते रहते हैं। अपनी अंत:करण की भावनाएँ, अपना स्नेह किन शब्दों में व्यक्त करें ?..... ''

9-2-1971 को एक परिजन को वे लिखती हैं-

''..... आप बच्चों के अंतरंग जीवन में घुले-मिले रहने से कितनी प्रसन्नता होती है, इसे शब्दों में कैसे व्यक्त करें ? आप हमारे सगे बेटे की तरह हैं। यह संबंध अनेकों जन्मों की साधना द्वारा प्रगाढ़ किये हैं। आप अनेक जन्मांतरों तक हमारे स्नेह सूत्र में ऐसे ही बंधे रहेंगे। हमारा वात्सल्य वर्षा की तरह आप दोनों पर, बच्चों पर निरंतर बरसता रहेगा।..... ''

29-3-1970 के इस पत्र के शब्दों की गहराई नापी नहीं जा सकती...

''....आपको परमात्मा ने श्रद्धा की साक्षात् प्रतिमूर्ति बनाकर भेजा है। किसी भी माँ का अपनी नन्हीं संतान के लिये जिस तरह हृदय उमड़ता रहता है,

उसी तरह आपको सदैव अपने हृदय से लगाये रखने का मन बना रहता है। आप बच्चे हमें प्राणों से भी प्रिय लगते हैं।... ''

प्रस्तुत पत्र में पूज्य गुरुदेव का स्नेह और सतत संरक्षण का आश्वासन समझने योग्य है।

''हमारे आत्म स्वरूप,

आपका और बेटी श्रीपर्णा का पत्र मिला। होली का गुलाल भी। पत्र पढ़ते समय लगता है, आप दोनों सामने ही बैठे हैं। होली का हमारा आशीर्वाद और माताजी का स्नेह आप चारों को इस पत्र के साथ भेज रहे हैं।

हम लोग भविष्य में कहीं भी क्यों न रहें, आप लोगों को कभी अकेलापन अनुभव न होने देंगे। आप लोग अपने घर, आँगन, छत और कमरे में हमें बैठा, टहलता अनुभव करते रहेंगे।... ''

4-9-1970 को पूज्य गुरुदेव एक परिजन को लिखते हैं-

''हमारे आत्मस्वरूप,

आपका पत्र मिला। कई बार पढ़ा। आपकी भावनाएँ उमड़-उमड़ कर हम तक तो सदा ही पहुँचती रहती हैं। पर जब पत्र आता है तो उनमें ज्वार सा आ जाता है। पत्र लिखते समय लगता है, तुम लोग सामने ही बैठे हो।.... ''

17-8-1970 को पूज्य गुरुदेव एक बहन को लिखते हैं -

''... तुम हमारी बेटी की तरह हो। हमसे कुछ न कहो तो भी क्या पिता अपनी संतान के सुख की चिंता नहीं किया करते। तुम्हारे लिये जो भी आवश्यक होगा हम सदैव करते रहेंगे।... ''

28-8-1971 को माताजी एक बहन को पत्र में लिखती हैं-

''... कोख के बच्चे की साज-सँभाल किस तरह की जाती है वह एक माँ ही जानती है। अभी तक जिस तरह तुम्हारे हित का संरक्षण करते रहे हैं, आगे भी उसी तरह करते रहेंगे।... ''

ऐसे ही 20-5-1971 के इस पत्र में एक परिजन की श्रद्धा-निष्ठा को प्रोत्साहित करते हुए वे लिखती हैं-

''... आपकी श्रद्धा हमारा जीवन और प्राण है। यह निष्ठाएँ ही इस देश को नई सामर्थ्य प्रदान करेंगी।... ''

3-8-1971 के इस पत्र के शब्दों को देखें-

''.... तुम्हारी साधना निष्ठा का हृदय से सम्मान करती हूँ। आने वाली पीढ़ी के लिये यह संस्कार और निष्ठा वरदान बनेगी। उसके लिये कोटि-कोटि आत्मायें तुम्हारा उपकार मानेंगी।.... ''

वहीं इसी संबंध में 8-9-1970 में पूज्य गुरुदेव एक परिजन को लिखते हैं-

''...नव निर्माण की दिशाधारा को साकार बनाने में जिस श्रद्धा और तत्परता के साथ संलग्न हैं, उसे देखकर हमारा रोम-रोम पुलकित हो उठता है। आप जैसे कर्मठ स्वजनों के बलबूते पर ही हमने इतने रंगीन सपनों को साकार करने की आशा बाँधी है।... ''

14-10-1970 को एक अन्य परिजन को वे लिखते हैं-

''... पुण्य पर्व दशहरे पर भेजी तुम्हारी हार्दिक शुभकामनाएँ मिलीं। तुम्हारी यह श्रद्धा हमें कितनी शक्ति देती है, उसे हम शब्दों में व्यक्त नहीं कर सकते। तुम दोनों तो हमारे प्राण हो। हम अंत:करण से सदैव ही तुम्हारे साथ जुड़े रहेंगे। इस पुण्य पर्व पर हम अपनी हार्दिक शुभकामनाएँ और आशीर्वाद भेज रहे हैं।... ''

ऐसे असंख्यों पत्र हैं। प्यार-आत्मीयता एवं अपने कार्यों का श्रेय अपने शिष्यों को देने की कला तो कोई गुरुजी-माताजी से ही सीखे।

प्रत्यक्षत: अपने व्यवहार द्वारा स्नेह-आत्मीयता एवं वात्सल्य लुटाता उनका स्वरूप दर्शाते कुछ संस्मरण भी यहाँ प्रस्तुत हैं।

स्वयं रेत पर बैठ जाते

डॉ. अमल कुमार दत्ता, शान्तिकुञ्ज

गुरुजी माताजी का प्यार असाधारण, अलौकिक था। मैं उनसे क्या जुड़ा, उन्होंने मुझे जोड़ लिया। मेरा तो बस प्यार का अधिकार था। कुछ ऐसा सोच लें कि जैसे अचानक ही किसी लड़के या लड़की को प्यार हो जाता है। उनका अपनापन, प्यार भरी बातें, प्रेम से खिलाना इसी सबने मुझे जोड़ लिया। गुरुजी शाम को जब घूमने जाते तो मथुरा में यमुना किनारे हमें भी साथ ले जाते। वह रेत पर अपना तौलिया बिछाकर कहते थे, ''बैठो'' और स्वयं रेत पर बैठ जाते थे। उनका यह प्यार पागल बना देने वाला प्यार था। मैं उनके साहित्य और अखण्ड ज्योति का भक्त बन गया।

नयन-नयन से हृदय-हृदय से करुणा भरी विदाई

श्रीमती यशोदा शर्मा, शान्तिकुञ्ज

कन्या शिविर की विदाई के वह पल आज भी वैसे ही सजीव हैं। ''हम रो रहे थे। आँसू थम नहीं रहे थे। स्वाभाविक है कि रोते समय नाक भी बहने लगती है। परम पूज्य गुरुदेव समझाते भी जा रहे थे कि बेटा, फिर भी आते रहना और अपने हाथों से आँसू भी पोंछते जा रहे थे।

मेरी आँखों से आँसू बहकर गले तक जा रहे थे और नाक भी बह रही थी। गुरुदेव ने अपने हाथों से आँसू तो पोंछे ही साथ में मेरी नाक भी पोंछी। उनके हाथ में कोई रुमाल नहीं था फिर भी उन्हें नाक पोंछने में भी कोई संकोच नहीं हुआ। ऐसा प्यार, ऐसा दुलार भला कैसे भुलाया जा सकता है।''

माताजी शिविर समाप्त होने पर विदाई गीत गाया करती थी। ''नयन-नयन से हृदय-हृदय से करुणा भरी विदाई।'' उनके स्वरों में इतना दर्द भरा रहता था कि हम सब सुबक-सुबक कर रो देते थे। ऐसा लगता था जैसे-माँ के घर से विदा हो रहे हैं। उनके आँचल से बिछुड़ने का किसी का मन नहीं करता था। कोई ऐसा व्यक्ति नहीं होगा, जो शान्तिकुञ्ज से विदा होते समय रोया न हो। ऐसा अलौकिक प्यार था, गुरुजी-माताजी का।

मैं हूँ इसकी दादी

श्रीमती कृष्णा उपाध्याय, शान्तिकुञ्ज

मेरे दूसरे बेटे सुनील का जन्म मथुरा में हुआ। वन्दनीया माताजी मुझे लेकर अस्पताल गईं। वहाँ मेरे साथ ही थीं। बच्चे के जन्म के बाद, जब नर्स ''लेबर रूम'' से मुझे व बच्चे को बाहर लेकर आई, तब उसने आवाज लगाई- ''इसकी दादी कौन है ?'' माताजी ने झट से कहा, ''मैं हूँ इसकी दादी।'' नर्स बोली, ''लड़का हुआ है। खाली हाथ नहीं दूँगी।''

''कौन खाली हाथ माँग रहा है ? मैं तो खाली हाथ लूँगी भी नहीं।'' और माताजी ने सबको मन पसन्द न्यौछावर देकर बालक को गोद में ले लिया।

स्वयं जगत् जननी के हाथ से न्यौछावर पाकर पता नहीं, न्यौछावर पाने वालों ने अपने भाग्य को सराहा या नहीं। किन्तु मेरी आँखों में उस समय कृतज्ञता के आँसू थे। मैंने अपने व अपने बच्चे के भाग्य की सराहना की कि जाने किस पुण्य से यह शुभ घड़ी मिली जो मेरे बच्चे को स्वयं जगन्माता अपनी

गोद में खिला रही हैं। उसके बाद भी वे सुबह, शाम दोनों समय दूध लेकर स्वयं रिक्शे से अस्पताल आतीं। मुझे और बच्चे को दूध पिलाकर, हम दोनों को सँभालकर जातीं और बार-बार कहतीं-''छोरी! तू दूध पीने के लिये संकोच मत करना। जितना पियोगी उतना दूध बढ़ा दूँगी। बिलकुल भी परेशान मत होना।''

तपोभूमि आने के बाद भी घीयामंडी से दूध भेजतीं व प्रसूता को ही पिलाने का निर्देश देतीं। इस प्यार में कायल होकर ही बालक उनके अपने हुए। इतना बड़ा संगठन इसी प्यार के सहारे उन्होंने विनिर्मित किया।

आज भी सोचती हूँ तो लगता है, निश्चित ही हमारी कोई पूर्व जन्म की तपस्या होगी, जिससे हमें ऐसे माता-पिता मिले। उन्होंने बहुत-बहुत प्यार दिया।

जब भी उन पलों की याद आती है तो आँखें सजल हो जाती हैं।

यह मेरी बेटी नहीं, बेटा है

श्रीमती सावित्री गुप्ता, शान्तिकुञ्ज

अखण्ड ज्योति पत्रिका के माध्यम से हम लोग पूज्य गुरुदेव से जुड़े। यह पत्रिका हमारे यहाँ, हमारा धोबी लाकर देता था। लेख बहुत पसंद आये। पत्रिका में पता लिखा था, सो मथुरा पत्र डाल दिया। तत्काल जवाब आ गया। यह सिलसिला चलता रहा। हर हफ़्ते पूज्यवर के पत्र आ जाते, जवाब हम भी लिखते रहते।

एक बार पूज्यवर को नागपुर आना था। सो उन्होंने लिखा-''सावित्री! मैं नागपुर आ रहा हूँ, तू भी आ जाना। जिस बोगी में मालाएँ लटकी हों, उसी में चढ़ जाना। वहाँ हम मिल जायेंगे।''

चूँकि अभी तक पूज्यवर के दर्शन नहीं हुए थे, अतः असमंजस था। मेरी बेटी, बेबी तब नागपुर में पढ़ती थी। बेबी से भी मुलाकात हो जायेगी, सोचकर नरखेड़, घर से चली और माला वाली बोगी में चढ़ गई। चढ़ते ही पूज्यवर ने आगे बढ़कर कहा-''सावित्री! आ गई तू। धोबी तरुणकर कैसा है?'' सुनकर मुझे बहुत आश्चर्य हुआ। हम कभी पहले मिले नहीं और नाम लेकर पुकार रहे हैं! साथ ही पत्रिका देने वाले का भी नाम मालूम है। उसके उपस्थित न होने पर भी उनका हाल जानना चाहते हैं..? कितने प्रश्न मन में उठे, और उनकी सहजता ने हृदय को छू लिया व जैसे, परिवार में पिता के साथ बातचीत में कुछ भान नहीं होता। उसी प्रकार प्रथम परिचय में ही बिना किसी बनावट के मैं उनके साथ घुल-मिल गई। उन्होंने अपने पास में बिठाया। पीठ

पर हाथ फेरा व कुशल क्षेम पूछी। इसी प्रकार बातचीत करते नागपुर पहुँच गये।

नागपुर में श्री शरद पारधी जी के यहाँ रुके। उनके पिता श्री मोरोपन्त पारधी-मराठी अखण्ड ज्योति पत्रिका के सम्पादक थे। इसलिये गुरुदेव जब भी नागपुर आते, उनके यहाँ अवश्य जाते। हम लोग भी गुरुदेव के साथ शरद जी के घर गये। वहाँ बहुत लोग थे। पूज्यवर के स्वागत के बाद सबका नाश्ता हुआ। उसके बाद गोष्ठी हुई। गोष्ठी में उन्होंने मुझे पास में बिठाया और सभी को सम्बोधित कर कहा-''यह मेरी बेटी नहीं, बेटा है। बहुत काम करेगी।'' वहाँ से गोष्ठी लेकर वे महासमुन्द के हजार कुण्डीय यज्ञ हेतु निकले। उन्होंने मुझे पूछा-''महासमुन्द चलेगी क्या?'' मैंने कहा-''गुरुदेव! मैं घर में कहकर नहीं आई हूँ, इसलिये नहीं जा सकती।''

पूज्यवर ने कहा, ''ठीक है, मथुरा आना।'' और महासमुन्द के लिये रवाना हो गये। जब मैं शान्तिकुञ्ज आ गई तब तो उनका प्यार, आशीर्वाद व संरक्षण पाकर हम निहाल ही हो गये।

मेरे लिये टिफिन जरूर भिजवाती थीं

श्री अशोक दाश , शान्तिकुञ्ज

माताजी प्यार लुटाने के भी अवसर खोजती रहती थीं। अक्सर ही कुछ न कुछ अपने हाथों से बना कर खिलातीं। कभी बाजरे की रोटी, कभी हलवा। एक दिन बोलीं ''लल्लू, आज मैं तुम लोगों को गरीबों का हलवा बनाकर खिलाती हूँ।'' उन्होंने बेसन का नमकीन हलवा बनाकर खिलाया। मुझे बहुत ही पसंद आया। घर आकर पत्नी को बताया। पत्नी ने चौके में रहने वाली बहनों से उसकी विधि पूछी, तो माताजी ने स्वयं उसे उसकी विधि बताई। इतना ही नहीं, जब भी माताजी की रसोई में वह बनता, वह मेरे लिये टिफिन जरूर भिजवाती थीं। उन्हें सबका ध्यान रहता था, किसको क्या पसंद है। जब जिसकी पसंद की जो चीज बनती, वह उसके लिये थोड़ा सा बचाकर जरूर रखती थीं।

मैंने तुझे नमकीन हलवा सिखाने के लिये बुलाया है

श्रीमती मणि दाश, शान्तिकुञ्ज

एक दिन दाश जी माताजी के पास नमकीन हलुआ खा कर आये और बोले कि बहुत स्वादिष्ट था। तुम उसे जरूर सीखना। मैंने चौके की एक बहन से

उसकी विधि पूछी। उसने मुझे बताया कि बेसन का घोल बना कर उसे बनाते हैं। उसने माताजी से भी कह दिया। एक दिन सुबह-सुबह साढ़े चार बजे माताजी का संदेश आया कि मुझे माताजी ने बुलाया है।

मैं बहुत घबराई कि इतनी सुबह माताजी ने क्यों बुलाया है? मुझसे कोई गलती हो गई है क्या? मैं डरते-डरते माताजी के पास पहुँची। माताजी हँसकर बोली, डरती क्यों है? मैंने तुझे नमकीन हलवा सिखाने के लिये बुलाया है। मैंने देखा, रसोई घर में गैस चूल्हे पर बड़ा सा भगोना रखा है। माताजी ने बेसन घोला और फिर उसे बनाने लगीं। मैं माताजी से बोली, माताजी मैं बनाती हूँ। माताजी बोलीं, ''ना लाली, तू नहीं कर पाएगी।'' थोड़ी देर में माताजी ने उस पर ढक्कन ढक दिया और बोलीं, ''अब इसे एक तरफ से ढक्कन हटाकर 45 मिनट चलाना है।'' मैं फिर बोली, ''लाईए माताजी, मैं करती हूँ।'' इस पर माताजी पुन: बोलीं, ''नहीं, तेरे हाथ में फफोले पड़ जायेंगे। मैं, माँ हूँ न बेटा! मुझे पता है। तू देख, मैं कैसे बनाती हूँ।'' मैंने घड़ी देखी माताजी लगातार 45 मिनट तक उसे चलाती रहीं।

मैं भाव विभोर हो कर माताजी को देखती रह गई। जब तक माताजी थीं, तब तक जब कभी भी वह हलवा बनता, माताजी टिफिन में भर कर दास जी के लिये जरूर भेजती थीं।

छककर कढ़ी खा

वे शान्तिकुञ्ज में रहने वाले हम लोगों पर ही नहीं अपितु शिविर में आये हुए भाई-बहनों पर भी ऐसा ही प्यार लुटाती थीं। एक बार एक शिविरार्थी भाई ने माताजी से कहा, ''माताजी आज मैं जा रहा हूँ। मैं एक महीने रहा पर इस बार कढ़ी खाने को नहीं मिली।'' माताजी ने कहा, ''अच्छा बेटा! बैठ।'' फिर उन्होंने चौके से एक बहन को बुलाया और उन सज्जन के लिये कढ़ी बनाने को कहा। वे सज्जन सकुचाये और मना करने लगे, पर माताजी ने उन्हें अपने सामने भोजन कराया। बोलीं, ''बेटा छककर कढ़ी खा।'' इतना ही नहीं रास्ते के लिये भोजन भी बाँध कर दिया।

लो बाजरे की टिक्की खाओ

उन दिनों शान्तिकुञ्ज में थोड़े से ही परिवार रहते थे। गुरुजी माताजी के पास आना-जाना, बातचीत करना भी सहज था। माताजी के पास तो कोई भी

कभी भी चला जाता था। एक दिन सावित्री जीजी ने माताजी से कहा, ''माताजी, बाजरे की टिक्की खाए बहुत दिन हो गए।'' माताजी ने तुरंत स्टोर वाले भाई से पुछवाया, ''बाजरा आ गया है क्या?'' वह बोला माताजी अभी नहीं आया है। माताजी ने उसे कहा ''जैसे ही आये मुझे बताना।'' अगले दिन, सुबह-सुबह 8:00 बजे ही माताजी ने बुलवा भेजा और बोलीं, ''लो बाजरे की टिक्की खाओ'' और साथ में दो-चार बाँध कर भी दे दीं।

शान्तिकुञ्ज की बहुत सी बहनें माताजी के साथ बिताये उन पलों को अक्सर याद करते हुए बताती हैं

प्रारंभ के दिनों में आस-पास का क्षेत्र विकसित नहीं था। छोटा-छोटा सामान लेने के लिये भी हरिद्वार जाना पड़ता था। माताजी सबके सामान की सूची तैयार करवा लेतीं और एक दो लोगों को भेजकर सबका सामान मँगवा लेतीं। फिर स्वयं ही सबको वितरित करतीं।

यूँ तो गुरुजी-माताजी के साथ बिताया हर क्षण त्यौहार जैसा ही था। पर त्यौहारों का तो अपना अलग ही मजा था। माताजी गीत गवातीं, ढोलक बजवातीं, सबको हँसाती भी रहतीं। त्यौहार के दिनों में माताजी के पास सबका भोजन होता था। माताजी कई प्रकार के पकवान बनाती थीं। हम सब शान्तिकुञ्ज की बहनें माताजी के पास पकवान बनवाने जाती थीं। माताजी एक तरफ बैठतीं और लोई (रोटी बेलने, कचौड़ी भरने हेतु आटे का गोला) बनाती जातीं। उनके काम में इतनी फुर्ती थी कि वे पूरे आटे के पेड़े बना देतीं और हम लोग सब मिलकर आधा भी नहीं बेल पाते थे। कभी-कभी वह कहतीं अच्छा, तुम सब मिलकर लोई काटो, मैं बेलती हूँ। हम लोग उसमें भी पिछड़ जाते थे। हम सब मिलकर लोई बनाते और माताजी सब बेलकर कहतीं, इतने लोग लोई बना रहे हो और मैं अकेली बेल रही हूँ, फिर भी पिछड़ जा रहे हो। इतना प्यार, माताजी ने दिया कि कभी लगा ही नहीं कि हम घर-बार छोड़कर परिवार से दूर रह रहे हैं।

हमारी बहू को मेंहदी तो लगा

श्री महेंद्र शर्मा जी व मुक्ति दीदी, शान्तिकुञ्ज

महेंद्र शर्मा जी ने बताया, ''मुझे हरी मिर्च व धनिया की चटनी बहुत पसंद थी। माताजी अक्सर मेरे लिये वह चटनी पिसवा कर रखती थीं।

एक दिन मैं माताजी के पास किसी काम से गया। माताजी के पास एक कटोरी में कुछ हरा-हरा सा रखा दिखाई दिया। मैंने सोचा चटनी रखी है। मैंने माताजी से पूछा, ''आज चटनी बनी है क्या?'' माताजी बोलीं, ''न लल्लू! मेंहंदी धरी है। आज करवाचौथ है, ले थोड़ी मेंहंदी मुक्ति के लिये भी ले जा, वो भी लगा लेगी।'' मैंने कहा, ''माताजी ये सब महिलाओं का काम है। मैं नहीं करता।'' फिर मज़ाक में कहा, ''मेरे यहाँ 21वीं सदी नहीं आयेगी माताजी, कि ये सब महिलाओं के काम करता फिरूँ, मैं?.. और... मेंहंदी ले जाकर दूँगा?'' कहकर मैं मेंहंदी लिये बिना ही नीचे आ गया।''

मुक्ती दीदी- ''कुछ समय बाद मैं किसी काम से गुरुजी के पास गई। उन दिनों शान्तिकुञ्ज में थोड़े से ही लोग थे और काम खूब रहता था। हम लोग दिन भर काम में व्यस्त रहते थे। गुरुजी ने मुझसे पूछा, ''मुक्ति तूने मेंहंदी नहीं लगाई।'' मैंने कहा, ''गुरुजी समय नहीं मिला, अभी लगा लूँगी।'' गुरुजी बोले, ''महेंद्र को बता देना, उसकी भी 21वीं सदी आयेगी और जरूर आयेगी। बेटा, तेरे घर में भी 21वीं सदी आयेगी।''

मैंने सोचा पता नहीं, गुरुजी क्या कह रहे हैं। मैं माताजी के पास गई तो माताजी ने कहा, ''मुझे पता है, तैने मेंहंदी नहीं लगाई होगी। महेंद्र को ले जाने को बोला तो वो यहीं छोड़ गया।'' फिर निर्मला भाभी (माताजी की बहू) को बोलीं, ''निर्मला, हमारी बहू को मेंहदी तो लगा।'' मैंने कहा, ''माताजी अब समय ही कहाँ है? पूजा होने वाली है और मुझे पूजा का सामान भी लाना है।'' माताजी बोलीं, ''अरे, पूजा में अभी आधा घण्टा है। तू मेंहंदी लगा फिर या ई संग बैठ के पूजा भी कर लेना।'' माताजी ने नई चूड़ियाँ मँगवाईं, अपने हाथ से पहनाईं और पूजा आदि करने के बाद ही मैं वापिस आई।

कमरे में लौट कर जब मैंने गुरुजी की बात बताई तो इन्होंने माताजी के साथ हुई बातचीत बताई। हम दोनों हैरान थे कि गुरुजी को सब बात कैसे पता हो जाती है? वास्तव में वे दोनों एक ही थे। कोई नीचे माताजी से बात करता, ऊपर गुरुजी को स्वत: ही वह बात पता हो जाती। कभी गुरुजी से कोई बात करता तो माताजी को नीचे सब पता हो जाती थी।

हम लोग अक्सर गुरुजी की डाँट भी सुनते थे। डाँट सुनकर नीचे उतरते तो माताजी पहले ही आवाज लगा कर बुला लेतीं और प्यार-दुलार

लुटाकर मन हल्का कर देतीं। हम लोग सोचते ही रह जाते कि माताजी को कैसे पता चल गया कि गुरुजी ने हमें डाँट लगाई है, पर वो तो जगत्जननी थीं। सबके दिल का हाल-चाल उन्हें पता रहता था। उनका प्यार पाते ही हम लोगों को जैसे पंख लग जाते थे और हम गुरुजी की डाँट भूलकर दुगुने उत्साह से काम में लग जाते। ऐसा हम सभी कार्यकर्ता महसूस करते रहे हैं।

जब गुरुजी ने बारिश में खड़े होकर दीक्षा दी

श्रीमती मिथिला रावत बताती हैं कि यह शक्तिपीठों की प्राणप्रतिष्ठा के समय की बात है। 26 जनवरी 1982 को छतरपुर में गुरुदेव का कार्यक्रम चल रहा था। अगला कार्यक्रम वल्लभगढ़ में था। हम गुरुदेव को लेने छतरपुर पहुँचे। गुरुदेव को सुबह 8:00 बजे छतरपुर पहुँचना था। गाड़ी लेट थी सो गुरुदेव 2:00 बजे पहुँचे। लोगों का उत्साह देखते ही बनता था। उस दिन खूब बारिश हो रही थी। फिर भी स्टेशन से शक्तिपीठ तक जगह-जगह लोग गुरुदेव के स्वागत के लिये छाते लिये, भीगते हुए खड़े थे। सबसे मिलते-मिलाते गुरुदेव 7:00 बजे शक्तिपीठ पहुँच पाये। पंडाल में जनता दीक्षा लेने के लिये बैठी थी। देर हो जाने व तेज बारिश के चलते आयोजकों ने कार्यक्रम में परिवर्तन करना चाहा तो लोगों ने कहा कि हम गुरुजी के दर्शनों के लिये बैठे हैं, हमें तो दीक्षा भी लेनी है।

गुरुजी तक संदेश पहुँचा तो गुरुजी बोले, ''अच्छा बेटा! यदि हमारे बेटे इस बारिश में भी हमें सुनना चाहते हैं और दीक्षा लेना चाहते हैं तो हम तैयार हैं। गुरुदेव के लिये मंच पर कुर्सी रखी गई। आधा घण्टा गुरुजी ने प्रवचन दिया। सबको दर्शन दिया। छतरी के नीचे खड़े-खड़े ही उन्होंने दीक्षा दी। वे थके हुए भी थे, चाहते तो मना भी कर सकते थे। पर भक्तों की इच्छा का मान रखने वाले भक्त वत्सल, वे भला कैसे मना कर सकते थे?

कार्यक्रम के पश्चात् जैसे ही मैं गुरुदेव से मिलने पहुँची, गुरुदेव हमें देखते ही बोले बेटा! तू क्यों चली आई? क्या मैं बच्चा हूँ, जो तू लेने चली आई? अगले दिन 27 तारीख को हम लोग वल्लभगढ़ के लिये रवाना हुए। गुरुजी ने मुझे भी अपने साथ ही बिठा लिया। बोले, ''चल! बैठ, बैठ, बैठ। रास्ते भर कितनी बातें करते गये। मैं थोड़ा संकोच से बैठी थी। बोले बेटा! ठीक से बैठ जा। थोड़ी-थोड़ी देर में ध्यान भी देते रहते कि मैं ठीक से तो बैठी हूँ। रास्ते में एक जगह लघुशंका के लिये गाड़ी रुकवाई। मुझसे बोले, ''बेटा! तू भी

चली जा।'' फिर इधर-उधर नजर दौड़ाई और बोले, ''जा! उधर झाड़ी में चली जा।'' गिलास में पानी लिये खड़े रहे। मैं लौटी तो बोले, ''ले! पानी ले ले।'' स्वयं पानी दिया। इतनी आत्मीयता, इतना प्यार, इतनी व्यावहारिकता, कोई पिता भी क्या दे सकता है, जो गुरुजी ने दिया।

हम शान्तिकुञ्ज आये हुए थे। बड़ी बेटी का रिश्ता रावत जी जहाँ करना चाहते थे, वहाँ के लिये वह तैयार नहीं थी। जिसकी चार बेटियाँ हों, उनकी शादी के लिये पिता को चिंता होना तो स्वाभाविक ही है। रावत जी रात में हमें बहुत नाराज हुए। गुस्से में यह भी कह गये कि जा अपने बाप के पास जा। वहीं जाकर कर लेना इसकी शादी। हम रात भर खूब रोये। सुबह होते ही गुरुजी ने हम तीनों को बुलाया और रावत जी से बोले, तू इस पर नाराज क्यों होता है? ये मेरी बड़ी प्यारी बेटी है। इस पर नाराज मत हुआ कर।'' और बोले, ''जाओ।'' हम लोग लौट आये।

उसी दिन मुझे घर भी लौटना था। बाकी परिवार घर पर ही था। मैं अपना सामान उठा कर चलने ही वाली थी कि मन में आया, जाते-जाते गुरुजी से मिल लूँ। मैं दौड़ कर गुरुजी के पास चली गई। गुरुजी अपने कमरे में टहल रहे थे। मैंने प्रणाम किया और पता नहीं क्या हुआ, मैं जोर-जोर से रोने लगी। गुरुजी ने मुझे छोटे बच्चे की तरह अपने सीने से लगा लिया। मेरे आँसू पोंछे। प्यार से वे मुझे बेबी बुलाते थे। बोले, ''रो मत बेबी! मैं हूँ न तेरा बाप। मैं करूँगा तेरी बेटियों की शादी। जैसे तू कहेगी, जैसे ब्राह्मण से तू कहेगी, सर्विस वाला, बिजनेस वाला जैसा लड़का कहेगी वैसा ढूँढ़ दूँगा। तू चिंता मत कर। बेटा! मैं तेरा पिता हूँ।''

फिर बोले, ''अब बेटा तू आ जा। बार-बार कहता हूँ, तू सुनती नहीं।'' हम शान्तिकुञ्ज आ गये। गुरुजी कहते बेटा लड़कियों की शादी की जिम्मेदारी मेरी है। हमारी सब समस्याऐं उनकी हो गईं। खूब संघर्ष सहा, पर पग-पग पर उन्हें साथ खड़े पाया। इतना प्यार, इतना दुलार उन्होंने दिया कि हमारे पास बताने के लिये शब्द भी नहीं हैं।

क्यों सिकुड़ा बैठा है?

श्री लक्ष्मण अग्रवाल, बिलासपुर

शक्ति पीठों के उद्घाटन हेतु जब छत्तीसगढ़ में पूज्यवर का कार्यक्रम चल रहा था, तब मैंने सोचा, क्यों न गुरुदेव के सान्निध्य लाभ का सौभाग्य प्राप्त

किया जाय। घर-दुकान का काम बच्चों को समझाकर एक माह गुरुदेव के साथ रहूँगा। यह सोचकर कार-ड्राइवर व मैं भिलाई हेतु निकल पड़े, क्योंकि गुरुदेव वहाँ के उद्घाटन के बाद सड़क मार्ग से आने वाले थे।

भिलाई के कार्यक्रम के बाद गुरुदेव हमारी गाड़ी में बैठे। मैं अपने सौभाग्य को धन्य मान रहा था। वहाँ से रायपुर आये, इस बीच पूज्यवर ने मुझे अपने पास ही बैठाया। मुझे थोड़ा संकोच हो रहा था अत: मैं सिकुड़ा हुआ बैठा था।

गुरुदेव ने चुटकी ली-क्यों, सिकुड़ा हुआ बैठा है? मैं अछूत हूँ क्या? मुझसे कुछ भी जवाब देते नहीं बना। फिर मैं सहज होकर ठीक से बैठ गया। ऐसे थे गुरुदेव! छोटी-छोटी बात का भी ध्यान रखते थे।

बेटा जयंतिलाल! मैं यहाँ हूँ

श्री जयंतीलाल पटेल, राजनांदगांव

यह 1969 की बात है। उन दिनों मैं गुजरात में रहता था। एक बार अहमदाबाद में गुरुदेव का कार्यक्रम था। संयोग से मैं खरीदी करने गया हुआ था। स्टेशन पर मैंने परचा लगा देखा। सोचा रात को गुरुजी के पास मिलने चला जाऊँगा। रात में मुझे थोड़ी देरी हो गई। घर खोजते-खोजते रात के 12:30 बज गये थे। मणिनगर में, मैं घर खोज रहा था कि इतने में एक छत पर से आवाज आई, ''बेटा जयंतिलाल! मैं यहाँ हूँ। तू यहाँ आ जा।'' मैंने ऊपर देखा, छत पर गुरुजी खड़े थे। उन्होंने एक परिजन से कहा कि जाओ दरवाजा खोल दो और इन्हें ऊपर ले आओ। मुझे आश्चर्य हुआ कि गुरुजी को इतनी रात में भी पता चल गया कि मैं रास्ता ढूँढ़ रहा हूँ और वे छत पर से मुझे बुला रहे हैं। जैसे ही मैं ऊपर पहुँचा, गुरुजी बोले, ''आओ बेटा, मैं तुम्हारा ही इंतजार कर रहा था।''

रात्रि का एक बज रहा था, फिर भी गुरुजी ने मुझसे बातचीत की। फिर मुझे सोने के लिये भेज दिया। इतना स्नेह, इतनी आत्मीयता, बच्चों का ऐसा इंतज़ार। वहाँ कैसे न व्यक्ति सब कुछ न्यौछावर कर दे।

आओ बच्चो तुम्हें माताजी के दर्शन करा दूँ

श्री मदनलाल नामदेव, करही (खरगोन)

बात 1964 सितंबर की है। मैंने अपने दो साथियों श्री दीपचंद राठौर और अन्तरसिंह मंडलोई के साथ संकल्प किया -''मथुरा पहुँचकर पूज्य आचार्य जी से जब तक नहीं मिलेंगे, तब तक भोजन नहीं करेंगे।'' सो शाम 7 बजे के

लगभग मथुरा पहुँचते ही साइकिल रिक्शा किया। किन्तु प्राचार्यजी के आग्रह व निर्देश से द्वारकाधीश की आरती व दर्शन के मोह के कारण हम रात साढ़े आठ के लगभग तपोभूमि पहुँचे। वहाँ पहुँचने पर बाहर से ही बताया गया कि वे घीयामण्डी चले गये हैं और साढ़े आठ बजे सो जाते हैं। अत: अब मिलना ही हो तो प्रात:काल आना। अब उनसे मिलना संभव नहीं है। परन्तु हमारा मन उनके दर्शनों को छटपटा रहा था। सो पूर्ण आत्मविश्वास से घीयामण्डी के लिए रिक्शा मोड़ लिया।

दरवाजा ठोका-आवाज लगाई। दरवाजा खुला और खोलने वाले के पीछे-पीछे उस भूतहा मकान की छत पर हम पहुँचे। हमारे इष्टदेव पूज्यवर पुरानी खाट पर, मात्र धोती पहने बैठे थे। जैसे ही आँखे मिली। हम नजदीक पहुँचे और अपनी पूजा के फूल, श्रीफल उनके श्रीचरणों में चढ़ाते, उसके पूर्व ही उन्होंने कहा कि मैं कब से तुम्हारी राह देख रहा हूँ। हम अपनी सुध-बुध भूल गये और उनका अपार प्रेम पाकर अनुग्रहीत हो गये। उन्होंने पकड़कर गले लगाया और जबरन अपने पास बिठा लिया। तीनों से अलग-अलग पारिवारिक प्रश्न पूछे-समाचार जाने। जिसने हमें चमत्कृत, विस्मृत और आह्लादित कर दिया। फिर वे श्रीकृष्ण-अर्जुन और सत्यनारायण कथा के गूढ़ार्थ कहते हुए धर्म की सामयिक परिभाषा समझाने लगे। लगभग बीस मिनट बाद उन्होंने कहा, ''आओ बच्चो तुम्हें माताजी के दर्शन करा दूँ।'' उन्होंने माताजी को आवाज लगाई- कहा, ''तुम्हारे बेटे आये हैं।''

एक साँवली सी साधारण पोशाक वाली महिला सामने थी। मुख मंडल पर आभा। हमें तब तक भी नहीं मालूम था कि वे कौन थीं और पूज्यवर का उनसे क्या रिश्ता है। फिर गुरुजी ने अखण्ड ज्योति और उनकी पूजा स्थली (आसन) दिखाई, और कहा कि बेटा, अब अपने प्राचार्यजी और साथियों को लेकर प्रात: तपोभूमि आना, हम वहाँ मिलेंगे। अब हमें उन फूलों व श्रीफल और भेंट का ध्यान आया, जो अब तक हमारे हाथों में थे। संकोच के मारे हमने वे वहीं, माताजी के चरणों में रख दिये। पूज्यवर को प्रणाम किया, विदा हुए। ऐसा उच्चस्तरीय असीम प्यार पाकर हमारे वे क्षण चिरस्मरणीय हो गये। उस आनन्द की अनुभूति आज भी हृदय में अंकित है।

मेरा हनुमान आ गया।

श्री श्रीकृष्ण अग्रवाल जी, शान्तिकुञ्ज

एक बार परम वंदनीया माताजी को रक्षा कवच हेतु चाँदी के ताबीज की आवश्यकता पड़ी। उन्होंने, सुबह 4.00 बजे मुझे फोन किया।

''बेटा, पचास हजार चाँदी के ताबीज लाना है। तू दिल्ली चला जा। वहाँ से ले आना।'' मैंने कहा, ''माताजी, सोनी जी से कह देता हूँ। वह दिल्ली जाते रहते हैं, ले आयेंगे।''

माताजी ने कहा–''नहीं बेटा, मुझे जल्दी जरूरत है। इसीलिये तुझे सुबह चार बजे कह रही हूँ। तू अभी चला जा। यदि प्रणाम करने का मन हो तो मैं किवाड़ खुलवाये देती हूँ। तू प्रणाम कर जा।''

मैंने कहा–''माताजी, अगर ऐसी बात है तो मैं अभी चला जाता हूँ। तैयार तो हो ही चुका हूँ। आप मुझे फोन पर ही आशीर्वाद दे दें, क्योंकि प्रणाम करने आपके पास आऊँगा तो दरवाजा खोलने आदि में समय लगेगा। तब तक मैं बहुत आगे निकल जाऊँगा।''

माताजी ने कहा–''मेरा आशीर्वाद है बेटा, तू जा।'' और मैं चला गया। पाँच बजे हरिद्वार से बस में बैठकर साढ़े दस बजे दिल्ली पहुँचा। घण्टे भर में खरीददारी हो गई। दोपहर 12:00 बजे बस में वापसी हेतु बैठा। शाम 5:00 बजे शान्तिकुञ्ज पहुँच गया। शाम को ही वन्दनीया माताजी को ताबीज देने पहुँचा।

माताजी जैसे मेरा इंतजार ही कर रही थीं। मुझे आते देख बोलीं, ''मेरा हनुमान आ गया।'' उनके इन प्यार भरे शब्दों को सुनते ही मेरी सारी थकान गायब हो गई। ऐसा लगा जैसे शक्ति संचार हो गया हो।

बाद में इन्हीं चाँदी के ताबीजों में रक्षा कवच भरकर व साथ में रुद्राक्ष रखकर परम वन्दनीया माताजी ने एक-एक प्रतीक अपने सभी गायत्री परिजनों को दिया था। यह अपने जाने के बाद भी उनकी रक्षा करने का आश्वासन था। जिसका लाभ गायत्री परिवार के परिजन आज भी उठा रहे हैं।

मैं, तेरी माँ हूँ

श्री प्रेम जी भाई काका जी, शान्तिकुञ्ज

सन् 83 में मैं हरिद्वार, कच्छी आश्रम आया था। वहाँ केवल मूँग पर एक माह का उपवास कर रहा था। ब्रह्मवर्चस् के श्री जेठा भाई पी. ठक्कर जी कच्छी आश्रम आते थे। एक दिन वे मुझे शान्तिकुञ्ज लाये। उन्होंने मुझे शान्तिकुञ्ज घुमाया व माताजी से भी मिलाया।

मैंने माताजी को प्रणाम किया तो उन्होंने पूछा–कोई तकलीफ है क्या? मैंने कहा–माताजी और तो कोई तकलीफ नहीं है, बस एक पीड़ा है, मेरी माँ जब मैं डेढ़ साल का था, तभी गुजर गई थी। सौतेली माँ ने बहुत सताया, अत: मैं माँ के प्यार से वंचित रहा। बस यही पीड़ा मुझे सताती है।

माताजी ने तुरन्त कहा–''बेटे! मैं, तेरी माँ हूँ। तू यहाँ का हो जा। मेरा काम कर। मन से चिन्ता छोड़ दे, मैं तुझे सँभाल लूँगी। तू हमेशा मुझसे मिलते रहना।''

उनकी वाणी में न जाने क्या जादू था, मुझे लगा, जैसे मेरी माँ मिल गई। अप्रैल, सन् 1985 में, मैं अपना सब कारोबार समेट कर हमेशा के लिये शान्तिकुञ्ज आ गया। माताजी का असीम प्यार पाया। यही मेरी अनमोल निधि है।

हमें हँसी आ गई

श्रीमती प्रेरणा वाजपेई, शान्तिकुञ्ज

अंतिम दिनों में माताजी का स्वास्थ बहुत खराब था। मैं, अंशू और जीजी (आद० शैल जीजी) बारी-बारी से हर समय उनकी सेवा में रहते थे। हम लोग उन्हें एक पल के लिये भी अकेला नहीं छोड़ते थे। उतने कष्ट में भी हमने देखा माताजी की ममता हर पल उमड़ती रहती थी। एक दिन अंशू मुझसे कहकर गई कि आज मैं थोड़ी देर से आऊँगी। तब तक तुम रुकना। मुझे देर तक रुका हुआ देखकर माताजी बोलीं, ''तू जा। खाना खा, तुझे भूख लगी होगी।'' मैंने कहा, ''खा लूँगी माताजी, अंशू अभी आती ही होगी।'' माताजी बोलीं, ''तू जा, क्यों चिंता करती है? मैं तो हूँ।'' जबकि माताजी स्वयं ही अत्यधिक बीमार थीं। उनकी बात सुनकर मैं और शैल जीजी जोर से हँस पड़े। पीड़ा के कारण माताजी हँस नहीं सकीं, पर वो भी मुस्कुरा दीं। किसी भी स्थिति में उनका अपना माँ का भान गया नहीं। वो जगदम्बा जो थीं।

बेटी! तू आ गई

डॉ. मंजू चोपदार, शान्तिकुञ्ज

एक दिन डाकिया एक पत्रिका लाया। जिसका नाम था ''अखण्ड ज्योति''। उसके साथ एक पत्र भी था जो घीयामण्डी, मथुरा से लिखा गया था। लिखा था, ''इस पत्रिका का उड़िया में अनुवाद करो।'' मुझे आश्चर्य हुआ। मैं वहाँ न तो किसी को जानती थी और न ही ऐसा कोई पत्र व्यवहार हुआ था, जिससे वह पत्रिका भेजते। फिर भी मैंने उत्सुकतावश उसे पढ़ा, अनुवाद किया व भेजा। उन्हें पसंद आया और क्रम चल पड़ा। इस तरह दो वर्ष अनुवाद करते व्यतीत हो गया।

दो साल तक गुरुदेव का साहित्य पढ़ने व अनुवाद करने पर, मेरा मन उनके प्रति श्रद्धा से भर गया। अत: उनसे मिलने, दर्शन करने की तीव्र इच्छा होने लगी। किन्तु उन दिनों हरिद्वार के लिये कोई सीधी गाड़ी नहीं थी, इसलिये कुछ दिन यूँ ही बीते।

एक दिन मैं अपने आप को रोक नहीं पाई। पाँच सौ रुपये रखे और घर में बिना किसी को बताये अकेले ही ट्रेन में बैठ गई। दूसरे दिन दिल्ली उतरी। कुली से पूछताछ कर रात को मसूरी एक्सप्रेस में बैठ गई। सबेरे हरिद्वार पहुँची। दिसम्बर माह की कड़कड़ाती ठंड और ऊपर से स्टेशन पर पहुँचते ही जम कर बारिश होने लगी। हरिद्वार में इतनी ठण्ड होगी, इसकी मुझे कल्पना भी नहीं थी। मैंने स्वेटर वगैरह भी नहीं रखा था, ठंड से काँप रही थी। तीन दिन से खाया-पिया भी नहीं था। चलने से पहले कुछ भी सोचा नहीं था। अब हरिद्वार पहुँचने के बाद सोचने लगी, अकेली आ तो गई, गुरुजी को कभी देखा भी नहीं है। पता नहीं वे मुझे पहचानेंगे कि नहीं। यदि नहीं पहचाना तो क्या होगा? आदि-आदि।

इसी प्रकार सोचते-सोचते, ताँगा पकड़ा व शान्तिकुञ्ज पहुँची। पूज्य गुरुदेव नीचे ही मिल गये। देखते ही उन्होंने कहा, ''बेटी! तू आ गई।''

न जाने मुझे क्या हुआ, मैं रोने लगी। उन्होंने मुझे बहुत प्यार किया, सिर पर हाथ रखा व कहा, ''अरे! तू तो ठंड से काँप रही है। जा, माँ से मिल ले।'' मैं जब ऊपर माताजी के पास पहुँची तो गुरुजी ने माताजी से कहा- ''छोरी को कपड़े दो, स्वेटर भी नहीं लाई।'' माताजी ने मुझे कपड़े दिये। स्वेटर

पहनाया व स्वयं पास बिठा कर खाना खिलाया। मुझे बहुत चैन मिला और मैं सो गई। बाद में उठकर घर पर फोन किया कि मैं हरिद्वार में हूँ, तब तक घर के लोग काफी परेशान थे।

फिर मेरा मन हुआ कि आई हूँ तो एक अनुष्ठान कर लूँ। मैंने अनुष्ठान किया। मेरे मन में बार-बार विचार आने लगा कि पूर्णाहुति पर गुरुजी माता जी को क्या दूँ? मेरे पास पैसे कम थे अत: मैंने पूर्णाहुति के दिन गुरुजी माताजी की आरती उतारी, पूजा की व अपनी चूड़ी, हार और अँगूठी उतार कर दे दी। माताजी ने सिर पर हाथ रखा, बहुत प्रसन्न हुईं व मुझे प्रसाद स्वरूप मिठाई व फल दिये। रास्ते का खाना एवं टिकिट की व्यवस्था भी की। इस प्रकार गुरुदेव-माताजी से मेरा प्रथम मिलन अविस्मरणीय बन गया।

तेरे घर क्या है ?

श्री अगाधू महापात्र, दन्तेवाड़ा (बस्तर)

घटना शक्तिपीठों की प्राण-प्रतिष्ठा के समय की है। दन्तेवाड़ा के प्रमुख कार्यकर्ता श्री अगाधु महापात्र जी ने उद्घाटन हेतु पत्र लिखा। तब जवाब मिला-''गुरुवर दौरे पर निकल चुके हैं। अब संभव नहीं है।'' क्षेत्रों से सम्पर्क करने पर भी वहाँ के व्यवस्थापकों ने मना कर दिया। अत: हताश होकर निर्माण कार्य शिथिल करा दिया और बुझे मन से बैठ गए।

अचानक एक दिन प्रात: आठ बजे एक कार्यकर्ता आया और कहा-''कल गुरुजी यहाँ उद्घाटन के लिये आ रहे हैं, तैयारी रखें।'' वे हर्ष विह्वल हो गए। गुरुदेव आये, उद्घाटन हुआ। वे बेचारे बहुत गरीब थे। अत: पूज्यवर व उनके सहयोगियों के भोजन का इंतजाम एक इंजीनियर साहब के घर किया गया। चाहते तो बहुत थे कि पूज्यवर को अपने घर भोजन कराते। पर केवल गुरुदेव को निमंत्रण कैसे दें? सबकी व्यवस्था कर पाना उनके लिये संभव नहीं था। पर महाकाल से कुछ छिपा रहता है भला।

पूज्यवर ने उद्घाटन के बाद कहा-''अगाधू, भोजन का क्या इंतजाम है?'' ''गुरुजी, इंजीनियर साहब के घर भोजन की व्यवस्था की गई है।'' अगाधू जी ने उत्तर दिया।

''अच्छा! तेरे घर क्या है?'' कहते हुए गुरुजी उनके घर की ओर बढ़ गए। वे चुप रह गए। कैसे कहें? इच्छा तो बहुत थी कि गुरुवर मेरे घर में

भोजन करते। पर इतनी बड़ी व्यवस्था नहीं कर सकता था, क्योंकि गुरुजी के साथ कई लोग थे।

घर में माँ ने प्रसाद स्वरूप थोड़ी सी खीर बनाई थी, शायद गुरुदेव आ जायें। सो उसी को गुरुदेव को रोटी के साथ कटोरी में दे दिया। गुरुदेव बड़े प्रेम से खीर की प्रशंसा करते हुए खाये जा रहे थे। सभी कार्यकर्ता खड़े थे, व अगाधु जी भाव-विभोर थे। लीलापति की लीला देख सभी धन्य हो रहे थे। ऐसा था, उनका स्नेह। कहीं तो सभी के खाये बिना खाते नहीं, और कहीं अकेले ही भक्त का मान बढ़ा रहे थे।

वह विलक्षण प्यार की अनुभूति थी

श्री जयराम मोटलानी, शान्तिकुञ्ज

उन्हें सबका ध्यान रहता था। मैं उन दिनों नया-नया ही शान्तिकुञ्ज आया था। 1989 का गुरु पूर्णिमा पर्व था। गुरुजी का प्रणाम चल रहा था। हम कुछ भाई भोजन परोसने में तल्लीन थे। प्रणाम का क्रम पूरा होने जा रहा है, इसका हमें पता नहीं चला। तभी एक भाई हमारे पास आए और बोले, ''चलो सब लोग, गुरुजी बुला रहे हैं, प्रणाम का क्रम समाप्त होने वाला है।''

हम लोग उन भाई के साथ चल दिये। उन्होंने बताया कि जैसे ही प्रणाम का क्रम पूरा होने वाला था। पूज्यवर ने कहा, ''देखना उधर कुछ बच्चे भोजन परोस रहे हैं। उन्होंने प्रणाम नहीं किया है। उन्हें बुला लाओ।'' ऐसे थे वे दूरद्रष्टा। उनकी निगाह सब पर रहती थी।

1989 में ही पूज्य गुरुदेव ने कार्यकर्ताओं से 11 वर्ष तक घर न जाने का संकल्प पत्र भरवाया था। मैं उस समय शान्तिकुञ्ज में नहीं था। अत: संकल्प पत्र नहीं भर पाया था पर मन ही मन संकल्प कर लिया था। सन् 1992 में मैं टोली में गया था। मेरी छोटी बहन की शादी थी। घर से मेरे लिये बार-बार पत्र आ रहा था। शान्तिकुञ्ज से भी मुझे लौट आने के लिये कहा गया पर मैंने मना कर दिया कि मैं शादी में नहीं जाऊँगा।

तब माताजी ने एक भाई को भेजा व मुझे लौट आने का संदेश भिजवाया। मैं जब माताजी के पास पहुँचा तो माताजी ने पूछा, ''लल्लू तेरी बहन की शादी है। जाता क्यों नहीं?'' मैंने कहा, ''माताजी मैंने 11 वर्ष तक घर न जाने का संकल्प लिया है।'' इस पर माताजी बोलीं, ''संकल्प किसे दिया था,

मुझे ही न। मैं ही कह रही हूँ कि जा।'' माताजी ने मुझे 1000 रुपये दिये और कहा, ''बेटा, बहन की शादी है न, यह बहन को देना।''

उनकी लीला ही न्यारी थी। कभी तो वे घर जाने के लिये मना करतीं और कभी टोली में से भी वापिस बुला कर भेज देती थीं। इसके पहले एक बार घर वालों का बहुत दबाव पड़ रहा था तो मैंने माताजी से घर जाने के लिये पूछा, तब वे बोली थीं, ''न बेटा न, घर जाओगे तो खेती-बाड़ी और काम धंधे में फँस जाओगे।'' फिर मेरे सिर पर हाथ रखा और इतना प्यार दिया, लगा कि उनसे अधिक प्यार करने वाला संसार में और कोई नहीं है। वह विलक्षण प्यार की अनुभूति थी।

वह सुअवसर मुझे फिर कभी नहीं मिला

श्रीमती रुक्मिणी माहेश्वरी, शान्तिकुञ्ज

सन् 1980 की बात है। किसी प्रकार का अभाव न होते हुए भी हमें मानसिक शान्ति नहीं थी।

तब मेरी बड़ी बहन श्रीमती सरला रानी ने गायत्री चालीसा दिया व मंत्र लेखन हेतु कहा। इससे प्रभावित होकर हम गुरुदीक्षा हेतु शान्तिकुञ्ज आये। पूज्य गुरुदेव-वंदनीया माताजी के दर्शन किए। माताजी ने भोजन प्रसाद हेतु कहा, पर एकादशी उपवास के कारण मैंने भोजन नहीं किया। केवल पतिदेव ने किया।

दूसरे दिन पुनः दर्शन, प्रणाम, यज्ञ किया। समय होने पर भोजन के लिये गये, तब माताजी भोजन से पूर्व एक रोटी व चटनी अपने कर कमलों से दिया करती थीं। दूसरे दिन भी मैंने रोटी व चटनी नहीं ली, क्योंकि प्रदोष व्रत था। माताजी ने कहा-''छोरी! तू भी थाली ले ले, प्रसाद खा ले।'' लेकिन मैं नहीं बैठी।

दोपहर में माताजी से वापस जाने की अनुमति लेने गये, तब उन्होंने कहा, ''यहाँ तो तूने भोजन नहीं किया। अब तुझे बाजार में जाकर दस रुपये का कुछ खिलायेगा। बेटा! उपवास का अर्थ कुछ त्याग करना होता है।''

माताजी की बात का गूढ़ अर्थ मैं नहीं समझ पाई। हम हरिद्वार चले गये। वहाँ जो हमने फल मिठाई लिये, वे ठीक दस रुपये के थे। अब तो माताजी के शब्द मेरे कानों में गूँजने लगे तथा पश्चात्ताप के आँसू भी बहने लगे।

अगले माह पुनः शान्तिकुञ्ज आये। गुरुदेव ने दीक्षा संस्कार कराया, किन्तु तब तक माताजी ने रोटी चटनी देना बंद कर दिया था। माताजी के हाथ का वैसा प्रसाद पाने का सुअवसर मुझे फिर कभी नहीं मिल पाया। मैं इस बात को पूर्णतः यहाँ आ जाने के बाद समझ पाई कि माताजी के उस प्रसाद में उनका कितना प्यार भरा था। उनके तप का वह महाप्रसाद था, जिसे मैंने ग्रहण नहीं किया, इसका पश्चात्ताप मुझे आज भी कम नहीं है।

डॉ. अमल कुमार दत्ता

मैं, अक्सर गुरुदेव से आध्यात्मिक प्रगति के लिये प्रश्न पूछता रहता था।

मैंने पूछा, ''गुरुदेव! आप सदैव विभिन्न प्रकार के संकल्प कराते रहते हैं, यदि इस बीच किसी का शरीर न रहा व संकल्प अधूरा रहा, तब क्या होगा?''

गुरुदेवः-बेटे! शान्तिकुञ्ज एक ऐसा स्थान है, जहाँ जो भी सत्संकल्प किये जायेंगे, पूर्ण होंगे। बस, आपका पूर्ण प्रयास होना चाहिए। यदि संकल्प के बीच शरीर न भी रहा तो भी मैं उसे पूर्ण कर दूँगा।

प्रश्नः- और यदि शरीर रहते संकल्प टूट जाय, तब क्या करें?

गुरुदेवः- फिर वही संकल्प करना चाहिए।

प्रश्नः- साधारण व्यक्ति जिसमें साधारण संस्कार हैं। हम अपनी आध्यात्मिक उन्नति के लिये क्या करें?

गुरुदेवः- सतत सम्बन्ध, सतत प्रयास।

प्रश्नः- आत्मा की आवाज कैसे सुनी जाय?

गुरुदेवः- अपना परिष्कार कर, श्रद्धा-विश्वास से, जीवन का आदर्श लक्ष्य तथा आत्मीयता का विस्तार करके सुनी जा सकती है।

प्रश्नः- दुख कैसे दूर किए जायें?

गुरुदेवः- अज्ञान, अभाव और आसक्ति को हटाकर दुख दूर किए जा सकते हैं।

2. यह तो गूँगे का गुड़ है

वे परिजन जो पूज्य गुरुदेव के साथ मथुरा से जुड़े और फिर उनके बुलाने पर शान्तिकुञ्ज भी आ गये। यहीं के हो कर रह गये। जिन्हें गुरुदेव ने नींव के पत्थर कहा है उनके पास इतने संस्मरण हैं कि यदि सबको प्रकाशित किया जाय तो वाङ्मय के 108 खण्ड भी कम पड़ जायेंगे। उनके निजी जीवन के अनुभवों को तो वे प्रकट भी नहीं करना चाहते। यदि कभी करते भी हैं तो उन्हें प्रकाशन में लाना नहीं चाहते। वे उन क्षणों को याद कर भाव-विभोर होकर बस यही कहते हैं, ''यह तो गूँगे का गुड़ है। जो स्वाद हमने चखा है, उसे बयान करने के लिये शब्द नहीं हैं। बेटा! हमारा जीवन सफल हो गया। हम तो जन्म-जन्मांतरों के लिये अपने गुरु के ऋणी हो गये हैं। हर जन्म उनके साथ रहें, बस यही तमन्ना है।''

एक बात जो सब कोई कहते हैं, वह यह कि गुरुदेव का जीवन-व्यवहार अति सरल और सादगी भरा था। उनके सादे वेश को देखकर पहली नज़र में तो हर कोई आश्चर्य से भर जाता था कि यही वे उच्च कोटि के संत हैं जिनसे मैं मिलने आया हूँ। संत इतने सरल भी होते हैं। जाने कौन सा चुंबक था, क्या आकर्षण था उनके भीतर कि फिर उस क्षण भर की मुलाकात में ही वह उनका होकर रह जाता था।

सादगी के आवरण में वे स्वयं के अलौकिक स्वरूप को छिपाये रहते थे। उनके साथ रहते हुए हमने अपनी आराध्य सत्ता के विभिन्न रूपों का दर्शन किया है। कभी-कभी हँसी-मजाक करते हुए या सहज बातचीत के क्रम में वे अपने-आप को प्रकट भी करते थे। अचानक कुछ ऐसे वाक्य बोल जाते कि हमें लगता कि कहीं वे अवतारी चेतना तो नहीं, परंतु जब तक हमारा ध्यान उनके संकेतों की ओर जाता, वे बात पलट देते थे।

जब कभी किसी परिजन पर कष्ट पड़ा या हृदय से किसी ने उन्हें पुकारा तब उन्होंने उसे अपने भगवत् स्वरूप के दर्शन भी कराये हैं। यहाँ, जो

परिजन उनके साथ लंबे समय तक रहे हैं, उनमें से कुछ थोड़े से परिजनों के थोड़े से संस्मरण दिये जा रहे हैं। शेष परिजनों के संस्मरण पाठकगण अगले संस्करण में पढ़ सकेंगे।

श्री देवराम पटेल

(श्री देवराम पटेल जी 1971 में मथुरा के विदाई समारोह के बाद पूज्य गुरुदेव के आदेशानुसार उनके साथ ही शान्तिकुञ्ज आ गये थे। तब से वे सपरिवार शान्तिकुञ्ज में ही स्थाई रूप से निवास कर रहे हैं। प्रस्तुत हैं,उनके संस्मरण उन्हीं के शब्दों में)

गुरुजी जब युग निर्माण की नींव रख रहे थे, तब उन्होंने स्वयं को सरलता व सादगी के आवरण में इस प्रकार छिपा कर रखा कि उनके साथ रहने वाला भी जान नहीं पाया कि वह साक्षात् भगवद् चेतना के साथ है। और जब लोगों ने उन्हें पहचानना प्रारंभ किया तब उन्होंने स्वयं को एक कमरे में कैद कर लिया। अपने जीवन काल के अंतिम कुछ वर्षों में गुरुजी ने सबसे मिलना छोड़ दिया था।

श्री देवराम पटेल जी बताते हैं कि मथुरा में, मैं जब शुरू–शुरू में आया तो एक दिन मैंने उनके पैर पकड़ लिये। मुझे पता नहीं चला कि क्या हुआ। मैं बहुत देर तक उनके पैर पकड़े रहा। जब बहुत देर हो गई तो गुरुजी बोले अब छोड़ दे और मेरे कंधे पकड़कर मुझे उठाया। फिर बोले, अब तो आ गये, अब कहाँ जाओगे? बात साधारण थी पर अलौकिक थी, क्योंकि उसके बाद मैं उन्हीं का हो गया। साधारण में भी कितनी असाधारण बात कह दी थी उन्होंने, इसका रहस्य तो वे ही जानते थे। 1969 में मैंने उनके दर्शन किये, 1969 में ही मैंने मथुरा में नौ दिन का सत्र किया। 1970 में तीन माह का समयदान और सन् 1971 में मथुरा से विदाई के समय गुरुजी के साथ मैं शान्तिकुञ्ज आ गया। शान्तिकुञ्ज आया तो फिर यहीं का हो गया।

शान्तिकुञ्ज का निर्माण

पटेल जी बताते हैं, गुरुदेव के साथ हरिद्वार आने वाले व शान्तिकुञ्ज के निर्माण कार्य की देखरेख करने वाले पहले कार्यकर्ता श्री रामचंद्र जी थे। सन् 1968 में रामचंद्र जी मथुरा आये थे। उसी समय गुरुजी ने हरिद्वार में शान्तिकुञ्ज

के लिये जमीन ली थी। उन्होंने रामचंद्र जी से कहा, ''तुम हमारे काम के लिये शान्तिकुञ्ज चलो।'' रामचंद्र जी बोले, ''गुरुजी, वहाँ रहने की कुछ व्यवस्था हो जाये, तब तो मैं जाऊँ।'' तब गुरुजी बोले, ''बनने पर तो बहुत लोग पहुँच जायेंगे। तुम बनाने में हमारा सहयोग करो।''

रामचंद्र जी गुरुजी के साथ हरिद्वार आ गये। यहाँ आकर एक झोंपड़ी बनाई गई। जिसमें रामचंद्र जी रहने लगे। उसमें केवल एक खाट डालने जितनी ही जगह थी। उन दिनों गुरुजी मथुरा में ही रहते थे। गुरुजी के जीवन में इतनी सादगी थी कि शान्तिकुञ्ज के निर्माण कार्य की देखरेख करने जब भी आते उसी झोंपड़ी में उनके लिये खाना बनता। रामचंद्र जी बाहर खाट बिछा देते। गुरुजी वहीं बैठ कर खना खा लेते। सोने के लिये सप्तऋषि आश्रम चले जाते।

एक बार रामचंद्र जी ने कहा, ''गुरुजी, कम से कम दो खाट पड़ने लायक जगह तो बना दो। आप बाहर बैठते हैं तो अच्छा नहीं लगता। गुरुजी बोले, ''कैदी जेल में रहता है न, तो इसको जेल मान लो।'' इस प्रकार कितनी सरलता से उन्होंने सामंजस्य बिठा कर चलने की बात समझा दी।

स्वयं के प्रति कठोर

गुरुजी अपने निजी खर्च के संबंध में बड़े कठोर रहते थे। यह सन् 1968-69 की बात है। शान्तिकुञ्ज अभी बन ही रहा था। चारों ओर जंगल था। ईंट लाने, ठेकेदार से बात करने व अन्य बहुत से कार्यों के लिये शहर जाना पड़ता था। उन दिनों इस क्षेत्र में आवागमन का कोई साधन नहीं था। गुरुजी के मन में आया एक साइकिल खरीद लेते हैं। अपने साथ ज्यादा पैसा वे लाये नहीं थे अतः आधा पैसा स्वयं दिया व आधा पैसा रामचंद्र जी से लिया और साइकिल खरीद ली गई। उसी साइकिल से रामचंद्र जी के साथ साइकिल पर पीछे बैठ कर ईंट भट्ठे वाले के पास चले जाते।

जहाँ भी जाते सामान नकद ही खरीदते थे उधार कभी नहीं करते थे, न ही किसी से अनावश्यक सेवा ही लेते। एक बार एक भट्ठे वाले के पास ईंट का आर्डर दिया और पैसा भी दिया। भट्ठे वाले ने कहा, ''हम आपको स्कूटर पर छोड़ देते हैं।'' इस पर गुरुजी बोले, ''नहीं, नहीं, हमारी तो रामचंद्र जी की साइकिल ही ठीक है।''

माताजी भी अपने लिये खर्च के मामले में बहुत ही कठोर थीं। अन्य सामान के विषय में भी समझातीं, ''देखो, कम कीमत में बढ़िया सामान होना चाहिये। दो-चार दुकान घूमो और दाम पूछो व सामान देखो। जहाँ कम दाम में बढ़िया सामान मिले, वहाँ से लो, क्योंकि नकद ले रहे हो।''

प्रारंभ में जब बगीचा लगाया गया तो गुरुजी रामचंद्र जी के साथ स्वयं सब नर्सरियों में जाते थे। वहाँ से पौध आदि खरीद कर लाते थे। बगीचा लगाने में उनकी मदद भी करते। स्वयं कुदाली लेकर गड्ढे भी बनाते। बारिश के दिनों में नेकर पहन लेते और सिर पर पॉलीथीन की थैली लपेट लेते। वे गड्ढे खोदते जाते और रामचंद्र जी बताया करते थे कि मैं, उनमें पौधे रोपता जाता।

गुरुजी का व्यवहार इतना सरल था कि उन्हें देखकर कोई समझ ही नहीं पाता था कि वे इतने बड़े महापुरुष हैं। एक बार वे नीचे किसी काम में व्यस्त थे। उन्हें भूख लगी। ठण्ड के दिन थे। बगीचे में टमाटर, मूली आदि लगा था। रामचंद्र जी पौधों को पानी दे रहे थे। उस समय यहाँ दो-चार ही परिवार थे। कोई मूली को पूछता तक नहीं था।

गुरुजी ने दो मूली उखाड़ी। रामचंद्र जी से उसे धुलवाया, कटवाया और बोले, ''जाओ, माताजी से नमक ले आओ'' और उन्होंने वहीं बैठकर मूली खा ली और बोले ''नाश्ता हो गया, चलो काम करते हैं।''

समय का सदुपयोग

गुरुजी समय को इतना महत्त्व देते थे कि किसी कारणवश एक क्षण भी यदि खाली हो तो उसके सदुपयोग की बात सोचते। एक दिन एक सज्जन उनसे मिलने आने वाले थे। उनको देर हो गई। गुरुजी उनका इंतजार कर रहे थे। उन्होंने सोचा, कोई और काम नहीं है तो चलो, भोजन ही कर लेते हैं। उन्होंने माताजी को फोन किया ''माताजी, भोजन करने आ जाऊँ।'' माताजी बोलीं, ''अभी तो एक ही बजा है!'' गुरुजी 3:00-4:00 बजे तक भोजन करते थे। बोले, ''अच्छा! अभी एक ही बजा है क्या? अच्छा! अच्छा! ठीक है।''

हम 10-11 बजे के लगभग कभी गुरुजी के पास जाते तो कभी-कभी वे लेख लिख रहे होते। हम चुप-चाप जाकर खड़े हो जाते और उनका लेखन पूरा होने का इंतजार करते। गुरुजी लेख पूरा हो जाने पर जब नज़र उठा कर मुझे खड़ा देखते तो कहते, ''अरे! कब से खड़े हो? बोल देते! तुम्हारा इतना समय

बरबाद नहीं होता।'' गुरुजी, ''आप लिख रहे थे। आपको डिस्टर्ब होता।'' ''अरे! मैं बाद में भी लिख लेता।'' इस प्रकार वे दूसरों के समय को भी महत्त्व देते थे।

कार्य की तल्लीनता

काम की धुन इतनी रहती थी कि एक बार सुबह-सुबह चार बजे ही सबको बुला लिया। हम सब आँख मलते हुए भागे-भागे गुरुजी के पास पहुँचे। जब कभी कोई महत्त्वपूर्ण योजना उनके मन में आती तो वे समय का इंतजार नहीं करते थे। कभी भी बुला लेते थे, फिर चाहे सुबह के चार ही क्यों न बजे हों ?

काम के आगे भोजन को भी उन्होंने कभी महत्त्व नहीं दिया। हम कभी भी पहुँच जाते थे। कभी-कभी समय का ध्यान नहीं रहता था, तो ऐसे समय भी पहुँच जाते, जब वे भोजन कर रहे होते। भोजन करना बीच में ही छोड़कर पूछते, ''बताओ क्या काम है ?'' मुझे अक्सर काम के ही सिलसिले में जाना पड़ता था। मैं चुप रहता, नहीं बताता तो भी खाना बीच में ही छोड़कर उठ जाते। कहते, ''अच्छा चलो।'' माताजी कभी-कभी स्नेह भरी नाराजगी प्रकट करतीं ''दुष्ट लोग, आचार्य जी को भोजन भी करने नहीं देते।''

भोजन ठीक से नहीं करने पर काम करते-करते उन्हें भूख भी लग जाती थी। माताजी उन्हें भुने चने दे देती थीं। कभी भूख लगने पर उन्हें ही मुट्ठी भर खा लेते।

उन दिनों गुड़िया दीदी, (गुरुजी की पोती) यहीं रहती थी। वह गुरुजी के आस पास डोलती रहती, कहती ''दादाजी, चीज दो।'' गुरुजी कहते, ''जा, माताजी से ले ले।'' वह कहती, ''दादाजी, आपके पास चने हैं न।'' गुरुजी हँसते और ''अच्छा, अच्छा! ले लो,'' कहकर उसे दे देते।

गुरुजी बड़े व्यावहारिक थे। एक दिन गुरुजी की खटिया के पास एक साँप आ गया और फन फैला कर बैठ गया। फुफकारने लगा। गुरुजी खटिया पर लेटे थे। जैसे ही उन्होंने देखा, तत्काल कहा, ''ये काल है, मारो इसे। किसी को काट देगा तो ?'' हम सब खड़े थे। सोच रहे थे, कैसे मारें ? गुरुजी बोले ''अच्छा! तुम लोग नहीं मारते। लाओ, मैं मार देता हूँ।'' उस समय जाँजगीर चाँपा के एक भाई, श्री छेदी लाल साहू जी आये हुए थे। वे तुरंत लाठी लेकर आये और उस साँप को मार दिया।

दिव्य शक्ति सम्पन्न गुरुदेव

गुरुजी दिव्य शक्तियों से सम्पन्न थे, पर उनका व्यवहार इतना सरल था कि जैसे बड़े साधारण हों। वे सदा स्वयं को छिपाये रहे। इसीलिये कहते भी थे, ''मुझे मेरा काम कर लेने दो, जिसके लिये मैं आया हूँ। अभी लोग जान जायेंगे, तो हर की पैड़ी तक लाईन लग जायेगी। इसलिये तुम लोग मुझे चुप-चाप काम कर लेने दो। मेरे जाने के बाद लोग मुझे जानेंगे।''

हम लोग कभी-कभी काम की अधिकता के कारण गुरुजी से मिलने नहीं जाते थे। सोचते थे कि काम तो गुरुजी का ही कर रहे हैं। व्यर्थ उनका भी और अपना भी समय क्यों खर्च करें। तब कभी-कभी गुरुजी कहते थे, तुम लोग अभी आ नहीं रहे हो। आगे चलकर मेरी चरण पादुका पर प्रणाम करने के लिये भी धक्के खाओगे, इतनी लम्बी लाईन लगी रहा करेगी।

मेरा परिवार गुरुजी से जुड़ा तो बहुत पहले से था पर मैं पहली बार जनवरी 1969, में बिलासपुर में गुरुजी से मिला। गुरुजी वहाँ एक सभा में आये थे। उस समय बिलासपुर में 'ग्रेजुएट कान्फ्रेंस, ठाकुर छेदीलाल सहकारी सभा कक्ष' में उन्होंने कहा था, ''यह स्थान नोट कर लो। मेरा यह भाषण नोट कर लो और समय नोट कर लो। ये भाषण मैं कहाँ-कहाँ कर रहा हूँ, पता लगा लेना।'' उस सभा में बिलासपुर के कर्मठ कार्यकर्ता श्री रामाधार विश्वकर्मा जी व उमाशंकर चतुर्वेदी जी भी थे। इन दोनों भाईयों ने बाद में पता लगाया था। गुरुजी का वह प्रवचन उसी समय में पाँच जगहों में हुआ था। जिसमें से एक कलकत्ता, एक ग्वालियर में हुआ था।

एक बार गुरुजी ने पत्र व्यवहार के क्रम में बुलाया। एक चिट्ठी दिखाते हुए उन्होंने पूछा, ''इसे जानते हो?'' उस समय चौके में टीकमगढ़ की एक लड़की रहती थी, सुधा श्रीवास्तव, उसके पिता हरी राम श्रीवास्तव जी का पत्र था। मैंने कहा, ''जानता हूँ गुरुजी, सुधा के पिता जी हैं।'' पत्र में समाचार लिखा था, उन्हें पुत्र प्रप्ति हुई है। गुरुजी बताने लगे, ''यह साल भर पहले आया था और मेरे साथ घूमने गया था। मैंने इसे खोद-खोद कर पूछा तब इसने बस इतना ही बताया कि मेरी छः लड़कियाँ हैं।''(गुरुजी हर मिलने वाले से उसका हाल-चाल, कष्ट-कठिनाई पूछते थे।)

फिर बोले, ''बेटा, इसे माताजी की तरफ से चिट्ठी लिख देना कि तुम्हारी सारी लड़कियों की शादी हम अच्छे घरों में कराएंगे और तुम्हारा लड़का संस्कारवान् होगा।'' ❀

गुरुजी अपने संकल्पों के बड़े पक्के थे। जो एक बार निश्चय कर लिया है वह फिर टूट नहीं सकता। मथुरा छोड़ने पर उन्होंने अपने निजी परिवार के कार्यों से मुक्त हो जाने का संकल्प ले लिया था। एक बार माताजी बिमार थीं। सतीश भाई साहब को चिट्ठी लिखनी थी। माताजी जिस भाई के द्वारा उन्हें पत्र लिखवाती थीं, वे किसी कारणवश अपने घर गये हुये थे। गुरुजी बोले चिट्ठी पटेल लिख देगा। माताजी बोलीं अगर देवराम लिख देगा तो सतीश यह समझेगा कि माताजी बहुत बीमार हैं। वह परेशान हो जायेगा, इसलिये लाईये मैं ही अपने हाथ से धीरे-धीरे लिख देती हूँ। माताजी ने ही चिट्ठी लिखी किन्तु गुरुजी ने नहीं लिखी। कारण, वे मथुरा से विदाई ले चुके थे। अपने नियमों के प्रति बहुत कठोर थे। परिवार से विदाई ले ली, तो ले ली। सारा विश्व ही मेरा परिवार है। फिर उतने छोटे परिवार को ही कैसा महत्त्व ?

शान्तिकुञ्ज की महत्ता

गुरुजी शान्तिकुञ्ज में ठहरने, विशेषत: रात रुकने को बहुत महत्त्व देते थे। माताजी अपनी गोष्ठियों में भी कहती थीं, ''बेटा, रात को जब तुम लोग सो जाते हो, तब हम और गुरुजी एक-एक के सिरहाने जाते हैं और तुम लोगों की ब्रेन वाशिंग करते हैं। जन्म-जन्मांतरों के कुसंस्कारों को साफ करते हैं।''

ठहरने के संदर्भ में गुरुजी चाहते थे कि परिजन शान्तिकुञ्ज में ही ठहरें भले ही थोड़ी-बहुत असुविधा होती हो पर आश्रम के वातावरण में ही रहें। एक बार श्री रामाधार जी शान्तिकुञ्ज आये। उन दिनों शान्तिकुञ्ज बहुत छोटा था। रामाधार जी परिवार समेत आये थे व परमार्थ आश्रम में ठहरे थे। गुरुजी ने पूछा, ''बेटा कहाँ ठहरा है ?'' वह बोले, ''गुरुजी, यहाँ दिक्कत होती इसलिये परमार्थ आश्रम में ठहरा हूँ।'' गुरुजी ने तुरंत डॉक्टर साहब को बुलाया और बोले, ''प्रणव, इन बच्चों के लिये शान्तिकुञ्ज में जगह नहीं है, इसलिये तुम लोग भी बाहर ही ठहरो।'' फिर उन्हें बोले, ''जाओ तुरंत अपना सामान लाओ और यहीं ठहरो। जैसी भी जगह मिले।''

उन्हें अपनी भूल का एहसास हुआ। वे तुरंत गये, अपना सामान ले आये और शान्तिकुञ्ज में ही रुके। ❀

गुरुजी प्रेरणाप्रद चीजों को सदा महत्त्व देते थे। गांधी पिक्चर तब नई-नई आई थी। हरिद्वार में भी दिखाई जा रही थी। उस समय गुरुजी ने सबको 2-2 रुपये दिये थे और गांधी पिक्चर देखने के लिये कहा था।

इसी प्रकार तब स्लाईड प्रोजेक्टर अभी नया-नया ही आया था। उन्होंने मिशन के प्रचार प्रसार के लिये स्लाईड बनवाईं और बाकायदा उसका प्रशिक्षण दिला कर परिजनों को प्रचार-प्रसार हेतु तैयार व प्रोत्साहित किया।

स्नेह सलिला माताजी

माताजी, गुरुजी की छाया के रूप में रहीं। उन्हें लोग जान भी नहीं पाये। वे गुरुजी की आड़ में स्वयं को छिपाये रहीं। लोगों ने उनका स्वरुप तो तब जाना जब वे अश्वमेध यज्ञों में गईं। लोगों ने माताजी के प्रवचन सुने, उनके आशीर्वादों से निहाल हुए, तब लोग उन्हें जान पाये। गुरुजी का संदेश देश-विदेश में फैला कर, थोड़े ही समय में अपना स्वरूप दिखा कर जल्दी ही उन्होंने अपनी लीला समेट ली।

माताजी का पत्राचार

माताजी के पास हजारों चिट्ठियाँ आती थीं। सबको पढ़ना, जवाब देना कठिन काम था, पर वे बड़ी सहजता से करती चली जाती थीं। प्रारंभ के दिनों में हमें भी एक दिन में 80-90 पत्र लिखने पड़ते थे। उतनी चिट्ठी पढ़ना और जवाब देना सरल काम नहीं था। हम कैसे करते थे, यह हमें भी नहीं पता। ऐसा लगता था जैसे कोई दिमाग में बैठ कर लिखा रहा है। कभी-कभार एक-आध चिट्ठी का जवाब हम पढ़ लेते तो स्वयं आश्चर्य करते थे। ऐसी विलक्षण शक्ति थी माताजी की।

कभी-कभी माताजी बोलतीं, तुम लोग सोचते हो बढ़िया चिट्ठी से बढ़िया आशीर्वाद मिलेगा। हम आशीर्वाद देंगे, तभी तो आशीर्वाद मिलेगा? कलेक्टर की चिट्ठी कलर्क लिखता है, पर जब तक उस पर कलेक्टर के दस्तखत नहीं होते, उसकी क्या कीमत? जब हम दस्तखत करेंगे, तभी तो उसकी कीमत होगी।

वह तो बस माँ थीं

वात्सल्य इतना था कि अपनी माँ भी क्या ध्यान रखती होगी? उन दिनों माताजी के पास ऊपर चौके में ही चाय बनती थी। हम पहले चाय नहीं पीते थे। यहाँ आये तो माताजी के दर्शन के पश्चात् चुप-चाप नीचे उतरने लगते

तो माताजी जाने कैसे देख लेती थी। तुरंत बोलतीं, छोरा भाग रहा है, बुला। फिर पूछतीं चाय नहीं पी ? यहाँ ठण्ड है, चाय नहीं पियेगा तो मरेगा क्या ? चल ! चाय पी।

कभी-कभी परिजनों को डाँट कर भी भोजन करा देतीं। एक बार एक परिजन श्री एस. एन. सिंह जी आये। वे बोले, ''माताजी मैं तो रोटी ही खाता हूँ। चावल मुझे नुक्सान करता है।'' इस पर माताजी बोलीं, ''देख बेटा, इसे चावल ही चावल खिलाना। देखती हूँ, कैसे नुक्सान करता है ?'' और वास्तव में उन्हें कुछ नहीं हुआ।

प्राण प्रत्यावर्तन शिविर में आखिरी दिन सबको पूड़ी-कचौड़ी खिलाती थीं। साथ में रास्ते के लिये बाँध कर भी देती थीं। कहतीं, ''इतने दिन उपवास किया है, मन ललचायेगा, पर तुम लोग बाहर की चीज मत खाना। इसे ले जाओ, रास्ते में यही खाना। घर पहुँचकर घर का बना खाना ही खाना।'' ❁

श्री देवराम पटेल जी की पत्नी बताती हैं कि जब वे सन् 1971 में शान्तिकुञ्ज आईं तो उन दिनों में यहाँ चारों ओर जंगल था। कोई विशेष आबादी भी नहीं थी। कुछ भी सामान लाना हो तो शहर जाना पड़ता था। मैं भरा-पूरा घर छोड़ कर आई थी, मेरी भाषा भी थोड़ी अलग थी। सो मुझे घर की बहुत याद आती थी। पर माताजी तो माताजी, वह सबके मन की बात जान जाती थीं। एक दिन मुझे बुलाया और बोलीं, ''घर की याद आती है ? माँ की याद आती है ? मैं हूँ न तेरी माँ। तू मेरे पास आ जाया कर। मैं तुम्हारी माँ, बाप सब हूँ। लो पानी पियो।'' उन्होंने मुझे अपने हाथ से पानी पिलाया। मेरा मन भर आया, पर उस दिन के बाद मुझे कभी घर की याद नहीं आई। लगा ही नहीं कि मैं घर से कहीं बाहर हूँ।

सुबह माताजी के साथ आरती करते। भजन गाते। माताजी कुछ न कुछ बात व चुटकुला आदि सुनाकर खूब हँसाती। एक बार बोलीं, ''चलो छोरियो ! चूल्हा बनाते हैं।'' गये तो देखा, माताजी ने खूब सुंदर मिट्टी का चूल्हा बना कर रखा था। क्योंकि हम छत्तीसगढ़ के हैं, सो हमें रोटी बनानी नहीं आती थी। माताजी ने अपने हाथ से हमें रोटी बेलना सिखाया। कहतीं, ''आ छोरी ! तुझे रोटी बनाना सिखाऊँ।'' बाजरे की रोटी, मक्के की रोटी, पूरी, कचौरी, माताजी

सब कुछ बनाना जानती थीं। रोटी तो वो फटाफट हाथ से ही बनाती थीं। उसके लिये उन्हें चकले-बेलन की जरूरत नहीं पड़ती थी।

माताजी सब काम जानती थीं। शायद ही कोई काम ऐसा होगा, जो उनसे छूटा हो। गाना-बजाना, लिखना-पढ़ना, सिलना आदि वे सब जानती थीं। प्रारंभ के एक दो साल तो ऐसे कटे, जैसे हम माताजी के साथ पिकनिक मना रहे हों। माताजी दिन भर हँसते-हँसाते किसी न किसी काम में व्यस्त रखती थीं। दोपहर के समय खाना बनाना व गाना-बजाना सब होता। माताजी ढोलक बहुत बढ़िया बजाती थीं।

वे हारमोनियम लेकर बैठतीं तो किसी भी गीत की धुन तुरंत निकाल लेती थीं। माताजी का प्रिय गीत था, ''मैंने तेरी गीता गाई। टूटी फूटी भाषा में भर, जग के कानों तक पहुँचाई। .....गंगा से गंगा जल लेकर, गंगा को जलधार चढ़ाई।'' उनके पास से हम लोग काम करके, नाच-गाकर आनंदित होकर लौटते। वे सदा कुछ न कुछ नया सिखाती रहतीं।

उनकी दृष्टि हर चीज पर रहती। एक बार बोलीं, ''छोरी तेरा ब्लाऊज पुराना हो रहा है।'' फिर उन्होंने कपड़ा निकाला और बोलीं, ''चल, मैं तुझे ब्लाऊज सिलना सिखाती हूँ।'' उन्होंने दराती (हसिया) से ब्लाऊज काटा। मैं देख कर हैरान रह गई। सूई-धागा लेकर हम लोगों को ब्लाऊज-पेटीकोट सिलना सिखाया। स्वयं के लिये भी सिला। हम सबने सूई-धागे से ब्लाऊज-पेटीकोट सिल कर पहने।

माताजी, हम लोगों की चूड़ी, बिंदी, साड़ी-ब्लाऊज आदि हर छोटी-बड़ी चीज का ध्यान रखती थीं। कभी-कभी बुलातीं और पूछतीं, कोई तकलीफ तो नहीं है, फिर लड्डू, मिठाई, चूड़ी-बिन्दी, साड़ी आदि देकर झोली भर कर भेजतीं। जाने कौन सा ऐसा अक्षय भण्डार था उनके पास। फिर धीरे-धीरे कन्या शिविर आदि शुरू हुए तो माताजी की व्यस्तता बढ़ती गई। उतनी व्यस्तता में भी वे एक-एक का ध्यान रखती थीं। कभी भी बुलातीं, ''उस छोरी के पास साड़ी नहीं है,'' कहकर, बुलाकर साड़ी देतीं। उसके पास अमुक चीज नहीं है, कहकर कुछ देतीं। इस प्रकार सबकी छोटी से छोटी आवश्यकता का भी वह ध्यान रखती थीं। इतना ध्यान तो साक्षात् जगदम्बा ही रख सकती हैं। ❁

कभी-कभी हम लोग मिलने जाते, तब माताजी लिख रही होतीं। वे हम लोगों से बात भी करती जातीं और लिखती भी जातीं। सब हाल-चाल पूछतीं और एक दो बात कहकर खूब हँसाती भी, पर हमने देखा इतना सब करते हुए भी कलम उनकी बराबर चलती रहती। बात करते-करते भी कलम रुकती नहीं थी। जैसे दोनों अलग-अलग दिमाग से किये जा रहे हों।

तू तो जा नहीं सकती

सन् 1986 में मैं बहुत बीमार पड़ी। मुझे लकवा हो गया था। मैं बिल्कुल बिस्तर से लग गई। मेरा उठना-बैठना, चलना-फिरना, खाना-पीना आदि सब बंद हो गया था। डॉक्टर बोले कि अब यह नहीं बचेंगी। एक माह से भी अधिक समय हो गया था। मैं बिस्तर से उठ भी नहीं सकती थी। सबने मेरे बचने की उम्मीद छोड़ दी थी। तब बच्चे लोग मुझे गोद में उठाकर माताजी के दर्शनों के लिये ले गये। माताजी ने मुझे देखा और कहा, ''तुझे, क्या हुआ है छोरी?'' ऐसा कहकर, एक थपकी टाँग पर, एक कंधे पर और एक पीठ पर दी। बस तीन थपकी दीं और बोलीं, ''बेटी, क्या हो गया? चिंता मत कर..., ठीक हो जाएगी। बिल्कुल ठीक हो जाएगी... बिल्कुल ठीक हो जाएगी... बिल्कुल ठीक हो जाएगी।'' तीन बार कहा फिर बोलीं, ''तू तो जा नहीं सकती। तेरे छोटे-छोटे बच्चे हैं। चिंता मत कर, तू ठीक हो जाएगी।''

माताजी के आशीर्वाद से मैं अगले ही दिन न केवल बिस्तर से उठकर खड़ी हुई, बल्कि स्वयं चल कर शौचालय तक गई। मुझे चलते देखकर बच्चे चिल्लाने लगे, ''माँ, चल मत, तू गिर जाएगी।''

उन दिनों हम ऋतंभरा भवन में रहते थे। ''मैं चल रही हूँ!'' सुनकर पास-पड़ौस वाले सब कार्यकर्ता इकट्ठे हो गए। सब मुझे चलते हुए देखकर हैरान थे। जिसने भी सुना, सब काम छोड़कर मुझे देखने दौड़ पड़ा। मुझे आज भी वो दृश्य याद है, जब मुझे देखने के लिये मेला जैसा लग गया था। उस दिन सबने माताजी की शक्ति को अपनी आँखों से देखा था। उस भगवती की लीला को जाना था।

उस दिन के बाद से आज तक 25 वर्ष (1986-2011) हो गये, मैं पूर्णतः स्वस्थ हूँ। ❀

श्रीमती यशोदा शर्मा

(श्री गौरीशंकर शर्मा जी 1970 में भीलवाड़ा में पूज्य गुरुदेव के सम्पर्क में आये। यशोदा बहिन ने 1975 में शान्तिकुञ्ज में कन्या सत्र किया। कालांतर में श्री गौरी शंकर शर्मा जी एवं श्रीमती यशोदा शर्मा 1982 में पूज्य गुरुदेव के बुलाने पर स्थाई रूप से शान्तिकुञ्ज आ गये। वर्तमान में श्री गौरीशंकर शर्मा जी, शान्तिकुञ्ज में व्यवस्थापक के रूप में कार्यरत हैं।)

लाली! खाना क्यों नहीं खाया ?

मैं जब कन्या सत्र में शान्तिकुञ्ज आई थी तो हमारा ग्रुप सबसे बड़ा ग्रुप था। उस सत्र में 250 लड़कियाँ थीं। कुछ विवाहित भी थीं; पर सबके लिये एक सा नियम था। हम लोगों का बैच सर्वाधिक शरारती भी गिना गया।

हमारा सत्र शुरु हुए 5-6 दिन ही हुए थे। हम लोग देखते थे कि कभी-कभी कुछ सीनियर लड़कियाँ घण्टी लगने से पहले ही खाना खा लेती हैं। उस दिन हमें भी थोड़ा जल्दी भूख लग आई। हमारे साथ की बहनें भी बोलीं कि आज अभी से भूख लग रही है। हमने सोचा, चलो आज हम भी जल्दी भोजन कर लेते हैं।

हम चार लोग ऊपर भोजनालय में गए और थाली और पानी का गिलास लेकर बैठ गए। भारती अम्मा और सोमा अम्मा रोटी सेक रही थीं। हमें यूँ बैठे देखकर वे आपस में इशारा कर मुस्कुराईं; पर बोलीं कुछ नहीं। हमें लगा कि शायद हमसे कुछ गल्ती हो गई है। पर फिर सोचा कि अब तो बैठ ही गए हैं, अब क्या करें? बैठे रहते हैं। वे दोनों कुछ देर तक आपस में इशारा कर मुस्कुराती रहीं, फिर अचानक भारती अम्मा उठीं और हमारे सामने से थाली उठाकर ले गईं, बोलीं कुछ नहीं।

हमें बहुत अपमान महसूस हुआ। हम चुपचाप नीचे उतर आये। भोजन की घण्टी बजी, सबने भोजन कर लिया; पर हम चारों भोजन करने नहीं गये। भूख तो बहुत लग रही थी; पर मन में आता कि इतने अपमान के बाद अब कैसे जायें?

उन दिनों जब सब भोजन करते थे तो माताजी सामने बैठती थीं। इतने लोगों में भी उन्हें पता चल गया कि हम चारों भोजन करने नहीं आये हैं। उन्होंने

हमें बुलवाया। हिम्मत बटोर कर हम लोग गये। माताजी अपने कमरे में थीं। हम वहीं चले गये। माताजी ने पूछा, ''लाली! खाना क्यों नहीं खाया?'' माताजी के इतना पूछते ही हमारी रुलाई फूट गई। हम फफक-फफक कर रोने लगे और फिर सब बात बताई। कहा, ''माताजी वो हमें हमारी गलती बतातीं, हमें समझा देतीं, हमें बुरा नहीं लगता। पर इस व्यवहार से अब हम खाना खाने कैसे जायें?''

माताजी ने भारती अम्मा और सोमा अम्मा को बुलाया और उक्त व्यवहार के लिये डाँट लगाई। फिर आगे से किसी के भी साथ ऐसा व्यवहार करने के लिये मना किया। फिर बोलीं, ''अब इन छोरियों के लिये गरम-गरम खाना बनाओ।'' माताजी ने दुबारा खाना बनवाया और अपने सामने बिठाकर खूब लाड़-प्यार लुटाते हुए खाना खिलाया। वह क्षण ऐसे थे कि अपनी सगी माँ भी शायद इतना प्यार न लुटाती होगी। उस दिन माँ जगदम्बा का प्यार पाकर हम धन्य हो गए। ऐसे न जाने कितने ही क्षण अनेकों परिजन अपने हृदय में समेटे हुए हैं। आज भी जब हम उन पलों को याद करते हैं तो वो पल सजीव हो उठते हैं।

समझाने की कला

गुरुजी का समझाने का तरीका बड़े गजब का था। कन्या शिविर में अक्सर गुरुदेव पारिवारिकता के संबंध में प्रवचन करते और छोटी-छोटी बातें भी इस ढंग से बताते कि समझ में आ जाता कि उनका कितना महत्त्व है और वे मन में गहराई तक उतरती चली जातीं।

गुरुदेव कहते, ''बच्चियो, तुम जहाँ भी रहो परिवार में स्नेह-आत्मीयता का संचार करती रहो। सबको मिलाने का काम करो, बिखेरने का नहीं। अगर तुम्हारे पास कोई बहू अपनी सास की निंदा करती है, तो कहना अरे! तुम्हारी सास तो तुम्हारी बहुत तारीफ कर रही थी। अगर तुम्हारे पास कोई सास अपनी बहू की निंदा करती है, तो कहना अरे! आपकी बहू तो आपकी बहुत तारीफ कर रही थी। इस तरह परिवार में कलह की जगह प्रेम का संचार होता है। तुम यहाँ से जाकर यही करना। रूठे को मनाना, टूटे को बनाना।'' ❁

बड़ी से बड़ी बात को भी वे बड़े ही मधुर ढंग से समझाते, बिल्कुल एक सच्चे अभिभावक की तरह। यह कन्या सत्र की बात है। हमारा बैच सबसे बड़ा और शरारती बैच था। एक दिन कुछ लड़कियाँ भारती अम्मा जी से किसी

कारण नाराज हो गईं। और भी कुछ छोटे-मोटे कारणों से अधिकतर लड़कियाँ उनसे नाराज रहती थीं। सो उन लड़कियों ने मिलकर योजना बनाई कि आज हम हड़ताल करेंगे। जब भोजन की घण्टी लगी तो न तो वे खुद भोजन करने गईं और न ही किसी और को जाने दिया। दो-तीन बार घण्टी बजी पर कोई नहीं गया। तब माताजी को बताया गया। माताजी ने दो-तीन लड़कियों को बुलवाया और सब बात मालूम की।

गुरुजी तक बात पहुँची। गुरुजी ने सबकी गोष्ठी बुलाई और बड़े प्यार से बोले, अच्छा! तुम सब लोग नाराज हो! सब आज भूखे हो! बेटा, भोजन से कैसी नाराजगी? इस तरह तो तुम लोग स्वयं को ही सजा दे रहे हो। जिससे नाराज हो, उसका तो मजा हो गया। उसका काम बच गया। इतना सब खाना फिकेगा तो नहीं। अभी नहीं खाया तो शाम को खाना पड़ेगा।''

''बेटा, नाराजगी प्रकट करने का यह तरीका सही नहीं है। सही तरीका तो यह है कि तुम लोग दुगना खाना खा जाओ। जिससे कि वह परेशान हो, उसे दुबारा भोजन बनाना पड़े। स्वयं को सजा देने में क्या समझदारी है?'' उनकी प्यार-दुलार भरी डाँट सुनकर सबकी नाराजगी दूर हो गई। सबको भूख भी लगी ही थी। सबने फटाफट थाली उठाई और भोजन करने बैठ गये। ०००

गुरुजी माताजी को बहुत साज-श्रृंगार पसंद नहीं था। बस माताजी मेंहंदी सदा लगाकर रखती थीं। उनके पैरों में मेंहंदी सदा लगी रहती थी। शान्तिकुञ्ज में वशिष्ठ, विश्वामित्र भवन के सामने व प्रवचन हॉल के दोनों ओर उन्होंने मेंहंदी के बगीचे लगवा रखे थे। हम सबसे तो वे मेंहंदी लगाने के लिये कहती ही थीं, साथ ही शिविर में भी जो बहनें आतीं उनसे भी कहतीं, ''ये तुम्हारा मायका है। मेंहंदी जरूर लगा कर जाना।''

सावन के महीने में वे झूला डलवाती थीं। हम लोग खूब झूला-झूलते और मेहंदी लगाते। उनके साथ बिताये क्षण तो वास्तव में अविस्मरणीय हैं। जितना काम करते, उतनी ही मस्ती भी करते थे।

गुरुजी-माताजी मनोरंजन को भी बहुत महत्त्व देते थे।

उनका कहना था कि मनोरंजन स्वस्थ ढंग का होना चाहिये जिसमें आनंद तो आये ही साथ में कुछ सीखने को भी मिलता रहे। वे चाहते थे कि हमारे बच्चे-बच्चियाँ अपने परिवार से दूर यहाँ आये हैं, तो उन्हें अपने परिवार

की याद न सताये और वे सब कुछ सीख सकें। उनके अंदर बहुमुखी प्रतिभा हो। इसके लिये वे कभी-कभी मनोरंजन का कार्यक्रम भी रखते थे। जिसमें प्रेरणाप्रद दृष्टांत आधारित एकांकी, लघु नाटिका, प्रहसन, गीत-संगीत, प्रवचन आदि प्रस्तुत करवाये जाते। गुरुजी बैण्ड, परेड, लाठी चलाना आदि का प्रशिक्षण ही नहीं दिलवाते थे बल्कि, उसका प्रदर्शन भी करवाते और माताजी के साथ स्वयं भी उसमें शामिल होते।

1976 -77 में गुरुजी ने टी.वी. मंगवाया और हम सबने माताजी के साथ बैठकर सबसे पहली फिल्म जो देखी वह थी आनंद और दूसरी अनुराग। मनोरंजन के साथ-साथ सबको उसकी प्रेरणाएँ भी समझाईं। गुरुजी को आनंद फिल्म बहुत पसंद आई थी। वह अक्सर उसके बारे में चर्चा किया करते थे। राजेश खन्ना का नाम उन्हें याद हो गया था। किसी को ज़्यादा बना-ठना देखते तो कहते, ''तू राजेश खन्ना है क्या? बेटा! लोकसेवी को सादगी से रहना चाहिये।''

उस जमाने में जादूगर, कठपुतली वाले अपना खेल दिखाने, बाईस्कोप वाले बाईस्कोप लेकर गली मोहल्ले में आते थे। कभी कोई शान्तिकुञ्ज की तरफ आ जाता तो वह भी दिखवाते और बाद में समझाते भी कि यह सब हाथ की सफाई है।

सन् 1985-86 के आस पास महात्मा गाँधी जी पर फिल्म बनी। जब हरिद्वार की टाकीज़ में वह आई तो गुरुजी ने माताजी से कहकर सबको 2-2 रुपये दिये और कहा, ''जाओ सब लोग गाँधी पिक्चर देख कर आओ। उससे संकल्पनिष्ठा की, देश सेवा की प्रेरणा लेकर आओ।'' जिसने भी देखी एक प्रेरणा मिली कि देश के हित के लिये हमें किस प्रकार निज सुख वैभव का त्याग करना चाहिये और समाज के लिये काम करना चाहिये।

स्वावलंबन का महत्त्व

माताजी सिलाई, कढ़ाई, बुनाई, खिलौने बनाना, जैम, जैली, अचार, मुरब्बे आदि विभिन्न प्रकार के स्वावलंबन का प्रशिक्षण भी दिलाती थीं। यदि कोई किसी विशेष विद्या का जानकार आ जाता और उसे सिखा सकना संभव होता तो गुरुजी-माताजी कहते, ''हमारी छोरियों को भी सब सिखा कर जाना।'' साथ ही हम लोगों को भी उसका महत्त्व बताकर सीखने के लिये प्रेरित करते।

वे कहती थीं कि महिलाओं को जरूरत के सब काम सीखना चाहिये। कृष्णा उपाध्याय भाभी जी बताती हैं कि जब वे शान्तिकुञ्ज आईं तब थोड़े से ही परिवार शान्तिकुञ्ज में रहते थे। मुश्किल से 10-12 परिवार थे। माताजी हम सबको सिलाई, कढ़ाई, बुनाई आदि सीखने के लिये कहतीं। शुरू के दिनों में सिलाई मशीन नहीं थी तो उन्होंने सूई-धागे से भी सिलना सिखाया। फिर सिलाई मशीनें भी मँगाई गईं। कौशल्या जीजी सबको सिलाई सिखाती थीं। माताजी सबका ध्यान रखती थीं, कौन कितना सीख रहा है। मैंने सिलना तो सीख लिया था पर, कटिंग करने में मुझे डर लगता था। एक दिन माताजी ने कौशल्या जीजी से कहा कि अब तुम उपाध्याय की बहू को कटिंग करके नहीं दोगी। वह खुद कटिंग करेगी फिर सिलकर मुझे दिखायेगी।

माताजी ने बच्चों के कपड़े-नेकर, कमीज़ आदि हम लोगों से सिलवाये। मैंने डरते-डरते कटिंग की और सिलाई करके माताजी को दिखाया। जब हम लोग उन्हें दिखाने गये तो बोलीं, ''देखो अब तुम्हारे इतने पैसे बच गये न। नहीं तो अभी इतने पैसे दर्जी को देने पड़ते। अब इस बचत से तुम लोग दूसरी आवश्यक चीजें खरीद सकते हो।'' इस प्रकार माताजी ने स्वावलंबन के साथ-साथ मेहनत करना, बचत करना और कम पैसे में भी कुशलतापूर्वक अपनी गृहस्थी चलाने के गुर हम लोगों को सिखाये।

तेरा प्रमोशन हुआ ?

सन् 1974 में मेरे पति श्री गौरीशंकर शर्मा जी जब प्राणप्रत्यावर्तन शिविर पूरा होने पर गुरुजी से मिलने गये तो गुरुजी ने पूछा, ''तेरा प्रमोशन हुआ या नहीं।'' इन्होंने कहा, ''नहीं हुआ गुरुजी।'' तब गुरुदेव ने कहा, ''जा, तेरा प्रमोशन हम करवा देंगे।'' जब वे जोधपुर वापिस आये तो पहली जनवरी के दिन आफिस में बैठे सोच रहे थे, अगर मेरा प्रमोशन हो जाता तो इतना वेतन हो जाता कि में आराम से वी.आर.एस. ले लेता। इतनी देर में इनके एक दोस्त ने आकर कहा, ''शर्मा, भई बधाई हो, तेरा प्रमोशन हो गया।'' इन्हें लगा मज़ाक कर रहे हैं, भला यह कैसे संभव है। लेकिन जब लैटर देखा तो विश्वास हुआ और गुरुजी की बात याद आई, ''जा मैं तेरा प्रमोशन करा दूँगा।''

उनको ठीक तो मैं करूँगा

सन् 1982 में हम पूर्ण रूप से शान्तिकुञ्ज आ गये। बहुत से संस्मरण हैं, उनके अलौकिक स्वरूप की एक झलक जो हमारे पूरे परिवार के लिये चमत्कार स्वरूप है वह बताती हूँ। यह घटना 19 जनवरी सन् 1989 की है। मेरे देवर, श्री हरिशंकर शर्मा, जो दिल्ली में सर्विस करते हैं, परिवार सहित घूमने गये थे। उन्हें भीलवाड़ा से फोन आया कि पिताजी कोमा में हैं, शीघ्र आ जावें। उन्होंने आगे का प्रोग्राम कैन्सिल कर दिया व सीधे भीलवाड़ा पहुँच गये। देखा, पिता जी कोमा में थे। किसी बात की सुध नहीं। सो परिवार को वहीं घर पर छोड़कर वे सीधे हरिद्वार आ गये। यहाँ आकर घर में इतना ही बताया कि मैं आप लोगों को लेने आया हूँ, पिताजी कोमा में हैं और मैं गुरुजी से मिलने जा रहा हूँ।

वे सीधे ऊपर गुरुजी के पास चले गये व गुरुजी से बताया कि गुरुदेव, पिताजी कोमा में हैं, अत: मैं भैया-भाभी को लेने आया हूँ। गुरुजी ने कहा- ''अच्छा! पिताजी कोमा में हैं?'' कुछ रुके, फिर बोले-''क्या नाम है?'' देवरजी ने बताया, ''श्री सीताराम शर्मा।''''क्या उमर है?'' 80 वर्ष।''कहाँ रहते हैं?''''भीलवाड़ा'' उस समय गुरुदेव कमरे में ही अपने दोनों हाथ पीछे की ओर बाँधे टहल रहे थे, उन्होंने कागज पेन उठाया और अपने प्रश्नों के उत्तर नोट किए।

कुछ देर सोचते रहे फिर कहा-''अच्छा! तू लेने आया है तो ले जा, देख कर आ जायगा। उनको ठीक तो मैं करूँगा।'' श्री हरिशंकर जी को कुछ समझ में नहीं आया। सोचने लगे देख कर आ जायगा! कैसे कह रहे हैं? पिताजी तो कोमा में हैं, हो सकता है कुछ दिन रुकना पड़े। मन ही मन सब तर्क-वितर्क चलता रहा। उन्होंने गुरुजी से कुछ कहा नहीं। इतने में गौरीशंकर जी ऊपर पहुँच गये। गुरुदेव ने उनके कुछ कहने से पूर्व ही कहा- ''यह तुझे लेने आया है। ऐसा कर, तू घर चला जा। पिताजी को देखकर आ जाना।'' उन्होंने आदेश शिरोधार्य किया और दोनों भाई आ गये तथा हम सबने भीलवाड़ा हेतु प्रस्थान किया। वहाँ पहुँचने पर देखा, पिताजी एकदम स्वस्थ थे। डाक्टरों सहित सभी आश्चर्य चकित थे। 'यह कैसे हुआ?'

घर में सब से बातचीत की तो पता चला जिस क्षण गुरुवर ने पता ठिकाना नोट किया था, उसी क्षण से उनमें चेतना आने लगी थी और हमारे पहुँचने तक तो वे अच्छे भी हो गये थे। वृद्धावस्था-रुग्णता के कारण थोड़ी

कमजोरी तो थी, पर उन्हें देखकर कोई कोमा की स्थिति का अन्दाजा भी नहीं लगा सकता था। हम सभी को गुरुजी के उस कथन ''उनको ठीक तो मैं करूँगा'' और ''देखकर आ जायेगा'' का रहस्य समझ में आ गया था।

ठीक होने के एक माह बाद पिताजी शान्तिकुञ्ज आये। दूसरे दिन माताजी से मिलने गए, तो माताजी ने पिता जी से हाल-चाल पूछा। फिर बोलीं, ''बहू खाना खिलाती है कि नहीं?''

क्योंकि, भोजन में परहेज चल रहा था। लम्बे समय से वे केवल उबला भोजन ही ले रहे थे। सो बोले, ''अब, खाना कहाँ माताजी? उबले भोजन में कुछ स्वाद तो होता नहीं।''

माताजी ने कहा, ''आप तो राजस्थान के हो। आपको तो दाल-बाटी-चूरमा बहुत अच्छा लगता होगा?''

तो वे बोले, ''कहाँ! दाल बाटी चूरमा?'' और पिता जी ने उन्हें दाल-बाटी-चूरमा पर एक कविता सुनाई।

कविता सुनने के बाद माताजी ने कहा, ''बेटा! कल मैं तुम्हें दाल-बाटी-चूरमा, सब खिलाऊँगी। उसके बाद डॉ. जो कहे सो करना।''

अगले दिन माताजी ने टिफिन भर कर दाल-बाटी-चूरमा भेजा व पिता जी ने छक कर खाया। हमें डर भी लग रहा था कि एक-डेढ़ महीने बाद पिताजी भारी भोजन कर रहे हैं, पर माताजी पर विश्वास भी था सो कुछ नहीं बोले। उस दिन से पिताजी ने सब परहेज छोड़ दिया। 3-4 दिन बाद प्रणाम के समय माताजी ने पूछा, ''छोरी! तेरे ससुर की तबीयत कैसी है?''

मैंने कहा, ''माताजी तबीयत तो ठीक है, पर परहेज नहीं करते, सो डर लगता है।''

तब माताजी ने कहा, ''छोरी! तू तो, उनको जो इच्छा हो सो खिला। नहीं तो तेरे भी मन में रह जाएगी और उनको भी इसके लिये वापस आना पड़ेगा।''

इसके बाद वे साल भर स्वस्थ रहे। अगले वर्ष फिर उसी तारीख को बीमार पड़े और 21 जनवरी 1990 को शरीर छोड़ दिया। आज भी जब हम उन पलों को याद करते हैं, तो ऐसा लगता है, जैसे उनकी सब इच्छाओं को पूर्ण करने व जन्म-मरण के चक्र से मुक्त करने के लिये ही गुरुदेव ने उन्हें एक वर्ष का जीवन दान दिया था। ❁

श्री महेंद्र शर्मा जी एवं श्रीमती मुक्ति शर्मा

(श्री महेन्द्र शर्मा जी 1969 में भिलाई में पूज्य गुरुदेव के सम्पर्क में आये। उसके बाद लगातार संपर्क में रहे, क्षेत्र में ही समयदान करते रहे, टोलियों में जाते रहे। 1977 में पूज्य गुरुदेव के बुलाने पर सपरिवार स्थाई रूप से शान्तिकुञ्ज आ गये।)

तू नहीं माँगता, तो मुझे दे

1969 में हम गुरुदेव से जुड़े। मैं उन दिनों भिलाई में काम करता था। भिलाई में गुरुजी का कार्यक्रम था। उसी कार्यक्रम में मैंने दीक्षा ली। अगले दिन मैं पण्डाल में सबसे पीछे बैठा था। गुरुजी ने एक कार्यकर्ता से मेरी ओर इशारा करके कहा, ''उस लड़के को बुलाओ।'' वे मुझे गुरुजी के पास ले गये। गुरुजी ने मुझसे पूछा-''तुम सिगरेट पीते हो?'' मैंने कहा, ''नहीं, गुरुजी'' गुरुजी ने कहा-''मुझसे झूठ बोलते हो? आज के बाद सिगरेट मत पीना।'' मैं कभी-कभी सिगरेट पीता था। मुझे हैरानी हुई, गुरुजी को कैसे पता चला। उस दिन के बाद मैंने कभी सिगरेट नहीं पी।

उसके बाद मैं मथुरा आने-जाने लगा। दादा गुरुजी के निर्देश पर, सन् 1971 में पूज्य गुरुदेव ने मथुरा छोड़ दिया। पूज्य गुरुदेव मथुरा विदाई सम्मेलन के बाद हिमालय चले गए। कहाँ गए? कब लौटेंगे? किसी को भी इस सम्बन्ध में कोई जानकारी नहीं थी। कुछ समीपवर्ती लोगों के पूछने पर उन्होंने कहा कि वे तो अपनी मार्गदर्शक सत्ता के हाथों की कठपुतली भर हैं।

हमें बड़ा दुःख हुआ। अब आगे साधना के बारे में किससे पूछेंगे? कौन मार्गदर्शन देगा? २ वर्ष का समय निकल गया। कैसे गया, पता भी नहीं लगा? अचानक सुनने में आया गुरुदेव हिमालय से लौट आए हैं और विशेष साधनाएँ सिखाने हेतु कुछ विशिष्ट व्यक्तियों को बुला रहे हैं। हमने भी हिम्मत करके प्राण-प्रत्यावर्तन साधना के लिए आवेदन भेजा। आश्चर्य तब हुआ जब भिलाई के सभी कार्यकर्त्ताओं को छोड़कर स्वीकृति हमारे ही नाम आई। सभी ने इसे गुरु कृपा कहा। सत्र प्रारम्भ हुआ अन्तिम दिन पूज्य गुरुदेव ने सबको एक-एक करके कमरे में बुलाया और बात की। वन्दनीया माताजी भी साथ ही थीं। उन्होंने माताजी की ओर संकेत करते हुए कहा कि ''इस लड़के को

पहचान गई ? ये वो ही है।'' वन्दनीया माताजी के ''अच्छा-अच्छा'' कहते ही हमारे अन्दर कम्पन सा हो गया। गुरुदेव ने पास बैठाकर कहा कि ''जीवन का लक्ष्य क्या है, पता है ?'' हमने कहा, ''हिमालय जाना चाहते हैं।'' उन्होंने कहा, ''अभी समय अनुकूल नहीं है, आगे हम अवश्य ले जाएँगे।'' और बोले, ''आज जो भी इच्छा हो, हमसे माँग लो।'' हमने कहा, ''यदि इस वरदान को आप भविष्य के लिए सुरक्षित रख सकें तो अच्छा हो।'' वे अपने स्थान से उठे और बोले, ''तू नहीं माँगता, तो मुझे दे। मैं माँगता हूँ।'' भारी चिन्ता में पड़ते हुए हमने इतना ही पूछा ''आप क्या चाहते हैं ?'' उन्होंने कहा, ''सम्पूर्ण समर्पण करना है। तुम्हारा श्रम हमारे लिए, चिन्तन हमारे लिए, समय भी अब हमारा ही होगा। तुम अपने विषय में कुछ भी नहीं जानते हो।'' बिना हमारे बताए ही उन्होंने हमारा गाँव, घर, सम्बन्धी सभी बता दिए। फिर कहा, ''पिछली बार तुम बीच में भाग गए थे। इस बार ऐसा न हो।'' और तत्काल उन्होंने अपने लैटर पैड से कागज निकालकर हमसे पूर्ण समर्पण का संकल्प लिखवा लिया। उस दिन के बाद से आज तक कठिन से कठिन समय में भी वन्दनीया माताजी और गुरुदेव सामने खड़े दिखाई देते हैं।

मेरे लिए क्या लाई है ?

मैं शान्तिकुञ्ज में ही पहली बार गुरुजी-माताजी से मिली। भिलाई की ही एक कार्यकर्ता, विजया बहन मुझे अपने साथ ले कर आई थी। उनका मन था हरितालिका तीज की पूजा शान्तिकुञ्ज में करेंगे। उसी अनुसार कार्यक्रम बनाया और 4-5 दिन के लिये ही आये थे। मैं बेटे मनीष को पड़ोसी के पास छोड़ कर आई थी।

शान्तिकुञ्ज पहुँचकर जैसे ही मैं माताजी से मिली, पता नहीं मुझे क्या हुआ, मेरी रुलाई फूट गई। माताजी ने अपनी गोद में मुझे भर लिया और मेरे सिर पर प्यार भरा हाथ फिराने लगीं। मैं और भी जोर से रोने लगी। विजया बहन मुझे चुप हो जाने के लिये बोलीं तो माताजी बोलीं, ''रो लेने दे इसे, जी हल्का हो जायेगा। बहुत दिनों बाद माँ से मिली है न तो रोना तो आयेगा ही।'' और माताजी प्यार से मेरा सिर सहलाती रहीं। विजया बहिन ने माताजी से कहा, ''माताजी अब तो आप इन्हें पकड़ ही लो।'' तब माताजी बोलीं, ''अब तो मैंने जकड़ लिया, अब कहाँ जायेगी ?''

जब हम लोग हरितालिका तीज की पूजा करने गये, तो गुरुजी-माताजी दोनों ही बैठे थे। बहिनें उन्हें रोली-चन्दन लगाकर पूजा कर रही थीं। दोनों ऐसे मस्त बैठे थे, जैसे साक्षात् शिव-पार्वती बैठे हों। बहिनों ने रोली-चावल लगाकर उन्हें खूब रंग दिया था। जब मेरी बारी आयी, तो माताजी गुरुजी से बोलीं, ''ये है हमारी बेटी, सुबह मैंने बताया था न। पहचाना इसे?'' गुरुजी ने गौर से मुझे देखा। मेरे हाथ में माताजी के लिए भेंट थी। उसे देखकर माताजी बोलीं, ''तू तो हरितालिका व्रत नहीं करती। तेरे यहाँ तो करवा चौथ होती है।'' मैंने कहा, ''जी माताजी, पर मैंने सोचा पूजा तो कर ही लेती हूँ।'' फिर बोलीं, ''ये सब क्या है? इसकी क्या जरूरत थी? बेटा, तेरा तो सब कुछ मेरा ही है।'' जल्दी-जल्दी में गुरुजी के लिए, मैं कुछ खरीद नहीं पाई थी, सो उनके लिए मैंने कुछ पैसे हाथ में रखे। उन्हें देखकर विजया बहिन ने कहा, ''गुरुजी को पैसे मत चढ़ा देना। वे बहुत नाराज होंगे।'' सो मैंने वह पैसे रूमाल में रख दिये। जैसे ही गुरुजी को प्रणाम किया, वे बोले, ''मेरे लिए क्या लाई है?'' मेरे हाथ में माताजी का दिया प्रसाद था, मैंने कहा, ''यही है।'' उन्होंने कहा, ''ला खिला।'' और मुँह खोल दिया। मेरे हाथ में आधा केला था, मैंने वही खिला दिया। विजया बहन ने कहा, ''गुरुजी मैं भी खिलाऊँगी।'' तो उन्होंने उनके हाथ से भी प्रसाद खा लिया। ये थी मेरी गुरुजी-माताजी से पहली मुलाकात। माताजी ने पूरे दस दिन हमें रोका। उसके बाद ही वापस आने दिया।

एक वर्ष की स्वर्ण जयंति साधना

इसके पश्चात् सन् 76 में गुरुजी ने हम लोगों से एक वर्ष की स्वर्ण साधना करवाई, और भी बहुत सारे परिजनों से करवाई थी। उस समय हम लोग भिलाई में ही थे। सूर्योदय से 45 मिनट पहले इस साधना को प्रारम्भ करना होता था। पहले सोहम् साधना, फिर तीनों शरीरों की साधना, और अन्त में खेचरी मुद्रा करनी होती थी। ठीक सूर्योदय के साथ अर्घ्य देकर साधना समाप्त होती थी। सबका समय निश्चित था। हमने नियमित रूप से यह साधना की। उस समय हमें खूब अनुभव हुए। साधनाकाल में प्राय: ही गुरुजी-माताजी दिखाई देते। कभी-कभी वे श्रीरामकृष्ण परमहंस व माँ शारदा के रूप में भी दिखाई देते। इस साधना के पश्चात् उन्होंने हमें शान्तिकुञ्ज बुला लिया।

शान्तिकुञ्ज में जब करवाचौथ पड़ी, तो मैंने माताजी से पूजा के विषय में पूछा। माताजी ने कहा, ''नीचे सब बहनें पूजा करती हैं, तुम भी उनके संग ही कर लेना।'' मैंने कहा, ''माताजी, जब साक्षात शिव-पार्वती हैं, तो मैं मिट्टी के शिव-पार्वती क्यों पूजूँ?'' माताजी बोलीं, ''अच्छा ठीक है, जा गुरुजी से पूछ ले।'' मैंने गुरुजी से पूछा तो वे खड़े हो गये और बोले, ''अभी चलना है?'' मैंने कहा, ''नहीं गुरुजी, जब माताजी बुलाएंगी।'' वे बोले, ''अच्छा, अच्छा! और बैठ गये।''

सभी बहनों को खबर भिजवाई गई। उस समय अधिकांश परिवार ब्रह्मवर्चस में रहते थे। सब बहनें अपना सब काम छोड़कर फटाफट जो कुछ पास में था, लेकर पहुँच गईं। गुरुजी-माताजी दोनों बैठ गये। हम सबने उनकी पूजा की रोली-चंदन भोग आदि लगाया। फिर गुरुजी ने सबको चाय पीने के लिये कहा। किसी बहन ने कहा, ''चाँद को अर्घ्य देने के बाद ही कुछ खायेंगे-पीयेंगे।'' इस पर गुरुजी बोले, ''हमसे बड़ा भी कोई सूरज-चाँद है क्या?'' माताजी ने सबके लिये चाय बनवाई।

उस दिन रविवार था। तब तक शान्तिकुञ्ज में टी.वी. आ चुका था। माताजी ने सबको पिक्चर दिखाई। खाना बनवाया। हलवा-पूरी आदि और सबको खाना भी खिला दिया और इस सबके बीच चंदा मामा को तो सब भूल ही गये। जब घर लौटे तो रास्ते में चंद्रमा को अर्घ्य देने की बात याद आई। जल भरकर जो लोटे आदि रखे थे, वह तो हम वहीं भूल आये थे। घर पहुँचकर जिस किसी ने पहले से जो कुछ तैयारी की हुई थी, उसी से सबने छत पर जाकर पूजा कर ली और चाँद को अर्घ्य दे दिया। पर गुरुजी-माताजी की पूजा करके सब अति प्रसन्न थे। उस दिन से गुरुजी-माताजी करवाचौथ की पूजा में भी बैठने लगे थे। उसके पहले तक केवल हरितालिका तीज पर ही बैठते थे। मिश्रा भाभी जी परात, लोटा आदि लातीं हम लोग दोनों के चरण धोते बाद में उस जल को चरणामृत मान कर पी जाते थे।

महेंद्र शर्मा जी बताते हैं कि गुरुजी के निर्देशानुसार सन् 73 में मैंने वानप्रस्थ लिया और नौकरी करने के साथ-साथ क्षेत्रों में टोलियों में भी जाता रहा। सन् 77 में मैं उनकी आज्ञानुसार सपरिवार पूर्ण रूप से शान्तिकुञ्ज आ गया। गुरुजी की सादगी, उनकी करुणा, मितव्ययिता, छोटी-छोटी बातों द्वारा

शिक्षण देना, बहुत सी ऐसी बातें हैं जिन्होंने जीवन पर गहरी छाप छोड़ी। उनकी बहुत बड़ी विशेषता थी, स्वयं के प्रति कठोर और दूसरों के प्रति उदार। यही शिक्षण उन्होंने हम लोंगों को भी दिया। वे कहते थे, ''बेटा! लोक सेवी को ऐसा ही होना चहिये, अपने प्रति कठोर व अन्यों के प्रति उदार।''

वे सादगी को बहुत महत्त्व देते थे।

अभी मैं नया-नया ही आया था। एक दिन गुरुजी ने मुझे मजदूर लाने के लिये भेजा। मैं बढ़िया से तैयार होकर, नया कुर्ता पहनकर गया। मुझे कोई मजदूर मिला नहीं। लौटकर गुरुजी से कहा, गुरुजी मजदूर तो मिला नहीं। गुरुजी ने मेरी ओर देखा और बोले, ''250 रुपये का चश्मा लगायेगा। बढ़िया कुर्ता पहनेगा, राजेश खन्ना बनकर जाएगा तो क्या तुझे मजदूर मिलेगा?'' ❁ एक दिन कुछ नेता लोग गुरुजी से मिलने आये। गुरुजी ने मुलाकात के बाद उनको भोजन कराया। चौके की बहनों से कहा, ''बच्चियो! भोजन तुम लोग परोसोगे। महेन्द्र और शिव प्रसाद बरतन उठायेंगे।''

जब वे लोग भोजन कर चुके तो हम दोनों ने बरतन उठाये। गुरुजी देख रहे थे। बोले, ''अब इन्हें माँज कर भी रखो।''

नेता जी आ रहे हैं सोचकर, हम लोग बढ़िया से प्रैस इत्यादि करके नये कुर्ते पहन कर गये थे। बरतन माँजे तो उन पर पानी के छींटे पड़ने स्वाभाविक थे।

जब बरतन मँज गये, तो गुरुजी ने बुलाया। कुर्ते पर छींटे पड़े देख कर बोले, ''तुम लोग इस तरह फूहड़ तरीके से काम करते हो? कुर्ता खराब कर लिया।'' फिर बोले, ''अच्छा! तुम लोग बहुत बड़े आदमी हो..! बहुत बड़े बाप के बेटे हो..! टाटा, बिरला हो..! बढ़िया नया-नया कुर्ता पहन कर काम करोगे। ऐसे काम होता है?''

''खादी की दुकान पर जाओ और वहाँ से सस्ती वाली, खादी की आधी बाजू की बनियान (हाफ कुर्ता) ले कर आओ। उसे पहन कर काम किया करो। जब कभी टोली में जाओ, बाहर जाओ, तो अच्छा, बढ़िया कुर्ता पहनो। खादी की आधी बाजू की बनियान पहन कर काम करोगे तो कपड़े खराब नहीं होंगे।'' इस प्रकार वे किफायत से रहना भी सिखाते थे।

गुरुजी की समय साधना

उनका जीवन बहुत पारदर्शी था। वे कुछ भी छिपाते नहीं थे। साथ ही, वे एक पल भी नष्ट नहीं करते थे। एक दिन सुबह-सुबह ही उन्होंने हम सबको बुलाया, और बोले, ''बच्चो, आज मैंने कुछ लिखा नहीं। मुझे रात को बुखार आ गया था। प्रणव से गोली भी ले ली, पर कुछ हुआ नहीं, नींद भी नहीं आ रही थी। तो मैंने सोचा क्या करूँ? लेटे-लेटे मैंने दो-चार साल की भविष्य की योजना ही बना डाली। देखो, कागज पर नोट कर दी है। उस योजना को बताने और समझाने के लिए ही मैंने गोष्ठी बुलाई है।'' ❁

एक दिन उन्होंने बताया, ''मैं रात को 12 बजे उठा। आज मेरे पास लिखने को कुछ नहीं था, पर फिर भी अपनी कुर्सी पर बैठ गया। जब तक मुझे लिखना होता है, तब तक मैं बैठा। मेरी पलकें बता रही थीं कि कितनी भारी हैं, फिर भी मैं सोया नहीं। कारण, यह मन बड़ा शैतान है, सो जाता, तो कल फिर सोने को कहता, इसलिए मैं उठकर अपनी कुर्सी पर बैठ गया। बेटा, इसी प्रकार मन पर आरूढ़ रहना चाहिये।'' ❁

एक बार फिर उन्होंने सुबह-सुबह ही गोष्ठी बुलाई और बोले, ''रात को मुझे नींद नहीं आ रही थी, हल्का सा बुखार भी लग रहा था। लेटे-लेटे सोचता रहा, और मैंने प्रज्ञा पुराण के एक खण्ड का प्रारूप बना लिया। देखो, बढ़िया है न। योजना भी बना डाली है। इसे चार खण्डों में निकालेंगे। अच्छा! अब चार दिन सुबह-सुबह मेरे पास मत आना। तुम लोगों को चार दिन का काम आज ही बता देता हूँ।'' उन्होंने सबको काम बताया, और बोले, ''तुम लोग जाते-जाते बाहर से ताला लगा देना।''

चार दिन में उन्होंने प्रज्ञा पुराण के सब श्लोक लिख डाले, और हम लोगों को यह कहकर सौंप दिया, अब इसमें कहानियाँ जोड़ देना। इस प्रकार प्रज्ञा पुराण तैयार हो गया।

हम लोग सोचते थे, कि गुरुजी को बुखार नहीं आना चाहिये। बुखार में भी बाबा कुछ न कुछ सोचते रहते हैं और सालों की योजना बना डालते हैं। फिर हम लोगों को भिड़ा देते हैं। ❁

इसी क्रम में मुझे एक प्रसंग और स्मरण आता है, जिसे चर्चा के दौरान भोपाल के श्री शान्तिलाल आनंद ने सुनाया था।

शायद सन् 1988 की बात होगी। एक दिन शांतिलाल जी और गौड़ जी नीचे गायत्री नगर में टहल रहे थे। इतने में ही श्री संजय सिंह जो पूर्व में उत्तर प्रदेश के मुख्य मंत्री रह चुके थे व उस समय भी मंत्री थे, वहाँ पधारे।

दोनों ने उन्हें नमस्कार किया। उन्होंने गुरुजी से शाम को छह बजे मिलने का समय ले रखा था और उस समय छह बजकर पैंतालीस मिनट हो रहे थे। किन्तु यह बात श्री गौड़ जी को मालूम नहीं थी।

वे बड़ी आवभगत के साथ उन्हें शान्तिकुञ्ज प्रतीक्षालय तक ले गये। शान्तिलाल जी भी साथ थे। उन दोनों को नीचे रुकने के लिये कहकर गौड़ जी स्वयं ऊपर गये और गुरुजी से संजय सिंह जी के आने की बात बताई।

गुरुजी सुनते ही गौड़ जी से नाराजगी भरे शब्दों में बोले- ''इन्हें समय का महत्त्व नहीं है, लौटा दो। मैंने छह बजे का समय दिया था, सात बज रहे हैं। अब मैं नहीं मिलूँगा। कहो कल समय पर मिलें।''

गौड़ जी को तो मानो काठ मार गया हो। क्या करें ? कुछ सूझ नहीं रहा था। मंत्री जी से कैसे कहें, कि गुरुजी नहीं मिलेंगे, पर कहना तो पड़ेगा ही। सो विनम्रता से हाथ जोड़कर कहा- ''साहब, उन्होंने आपको शायद छह बजे का समय दिया था। वे उस समय तक आपका इन्तजार कर रहे थे। अब वे दूसरे महत्त्वपूर्ण कार्य में लग चुके हैं। उन्होंने कल पुनः बुलाया है, समय का ध्यान रखेंगे।''

''महापुरुषों का समय बहुत मूल्यवान है।'' कहकर, बेचारे मंत्री जी ने अपनी गलती सरल भाव से स्वीकार की व दूसरे दिन ठीक समय पर आकर गुरुदेव से मुलाकात की। ❀

सन् 1989 में एक दिन हम कुछ लोगों डॉ. प्रणव भाई साहब, उपाध्याय जी, सोनी जी, कपिल जी आदि को बुलाया और बोले, ''मैंने बहुत कुछ लिख दिया। सोचता हूँ, आने वाली पीढ़ियों के लिये गीता जैसा मार्गदर्शन दे देता हूँ। इसलिये देखो, मैंने ये किताब लिखी है, पढ़कर देखो कैसी है ?'' उस पुस्तक का नाम था, 'सतयुग की वापसी' हम सबको पुस्तक बड़े गजब की लगी। फिर कुछ दिनों में ही उन्होंने 'इक्कीसवीं सदी उज्ज्वल भविष्य, परिवर्तन के महान क्षण, आद्यशक्ति गायत्री की समर्थ साधना, युग की माँग प्रतिभा परिष्कार,

इक्कीसवीं सदी का गंगावतरण आदि' पुस्तकें लिखीं और हम लोगों से कहा कि तुम लोगों ने भले ही मेरा सारा साहित्य पढ़ लिया हो, पर इनको जरूर पढ़ना और आने वाले लोगों को इन्हें जरूर पढ़ाना। हमने पूछा गुरुजी, ''इस सेट का नाम क्या होगा?'' गुरुजी बोले, ''ये 'क्रांतिधर्मी साहित्य' होगा।'' हम लोगों ने लगभग छः माह तक बाकायदा कक्षाएँ चलाकर, इस साहित्य को पढ़ा और पढ़ाया, पर जितनी बार भी पढ़ते, उतनी बार कुछ नया ही मिलता।

एक बार गुरुजी को बहुमूत्र की शिकायत हो गयी, वे मीटिंग करते-करते उठकर चल देते थे। जब तक हम सोचते, जिज्ञासा करते, तब तक वे लौट आते, और स्वयं ही बता देते, कि आज-कल मुझे बार-बार पेशाब लग जाती है। इस उम्र में हो जाता है, शायद कुछ समस्या होगी, ठीक हो जायेगी। इस प्रकार वे अपने दैनिक जीवन की छोटी-छोटी बातें भी छिपाते नहीं थे।

एक बार उन्होंने गोष्ठी में बताया, ''नालंदा और तक्षशिला दो विश्वविद्यालय थे। इनसे भी बड़ा विश्वविद्यालय बनायेंगे।'' इसलिए उन्होंने प्रतीक स्वरूप दो हॉलों का नाम तक्षशिला और नालंदा रखा, और वहाँ पर प्रशिक्षण भी प्रारंभ करवा दिये।

मितव्ययिता उनके जीवन में कूट-कूटकर भरी थी।

अपने लिये तो गुरुजी-माताजी दोनों ही एक पैसा अतिरिक्त खर्च नहीं कर सकते थे। औसत भारतीय नागरिक के स्तर का जीवन जीना उनका संकल्प था। वही अनुशासन उन्होंने हमारे लिये भी बनाया।

एक बार श्री गजाधर सोनी जी भाई साहब ने देखा कि गुरुजी का जूता फट रहा है। उनके मन में आया कि वे गुरुजी के लिये जूता खरीद लायें। उन्होंने गुरुजी से पूछा और जूता खरीद लाये। गुरुजी बहुत महँगा जूता नहीं पहनते थे पर गजाधर जी के मन में आया कि वे थोड़ा अच्छा वाला जूता खरीदेंगे। उन दिनों आज के जैसे महँगाई नहीं थी। गुरुजी जिस ब्रांड का जूता पहनते थे वह 11 रुपये का था। गजाधर जी को लगा थोड़ा अच्छा वाला खरीद लेता हूँ। उन्होंने दो जोड़ी खरीदी। मन में सोचा कि एक गुरुजी के चरणों से स्पर्श करा कर अपनी पूजा में स्थापित करूँगा। वे जूता खरीद कर गुरुजी के पास पहुँचे। जैसे ही गुरुजी ने उसे पहना तुरंत बोले, ''यह तो वैसा नहीं है जैसा मैं पहनता हूँ। यह जरूर महँगा होगा। कितने का लाये हो?'' सोनी जी ने

कहा, ''गुरुजी आप तो बस पहन लीजिये।'' गुरुजी ने कहा, ''नहीं तू बता, तू कितने का लाया है ?'' सोनी जी ने बताया, ''गुरुजी 21 रुपये का है।'' सुनकर गुरुजी बोले, ''मैं जो पहनता हूँ, वह 11 रुपये में आ जाता है। इतने में तो दो जोड़ी जूते आ जाते और कितने दिन निकल जाते। इसे ले जाओ और पहाड़िया जी से कहना, कि वे इन्हें लौटा कर वही जूता खरीद लायेंगे, जो मैं पहनता हूँ।'' ❁

गुरुजी के बाथरूम का दरवाजा बहुत पुराना हो गया था। बाहर से तो ठीक दिखता था परंतु अंदर से सड़ गया था। वह कभी भी टूट सकता था। उपाध्याय जी व प्रणव जी भी उसे बदलने के पक्ष में थे। परंतु समस्या यह थी कि गुरुजी से कहे कौन ? वह तो तैयार नहीं होंगे।

योजना बनाई गई कि गुरुजी को बरामदे में ले जाकर बातचीत में व्यस्त कर लेंगे। इतनी देर में बढ़ई दरवाजे का नाप ले लेगा। उन दिनों बाबूराम बढ़ई यहाँ काम करता था। उसे समझा दिया गया और योजना अनुसार उसने नाप भी ले लिया। उसे कहा भी गया था कि तुम गुरुजी के सामने मत आना किंतु वह गुरुजी को प्रणाम करने का लोभ संवरण नहीं कर पाया। सो नाप लेने के बाद उसने बरामदे में आकर गुरुजी को प्रणाम किया। उसके प्रणाम करते ही गुरुजी ने उससे पूछा, ''तुम किस काम से आये ?'' उसने कहा, ''बस गुरुजी, आपको प्रणाम करने आया था।'' गुरुजी को उसके जवाब से संतुष्टि नहीं हुई। बोले, ''नहीं, तुम जरूर किसी काम से आये होगे। यह, तुम्हें लाया होगा। बताओ किस काम से आये थे ?'' उसने डरते-डरते कहा, ''गुरुजी, बस थोड़ा बाथरूम के दरवाजे का नाप लेना था।'' गुरुजी तुरंत समझ गये और कहा, ''किसने कहा बदलने को ? हमने तो कहा नहीं।'' फिर मेरी ओर मुखातिब होकर बोले, ''क्यों, उसे क्या हुआ है ?'' मैंने बताया, ''गुरुजी, वह अंदर से सड़ गया है। बदलना आवश्यक है।'' गुरुजी ने दरवाजे को खोला, बंद किया। फिर बोले, ''इसे केवल मैं ही तो इस्तेमाल करता हूँ। यह ठीक है। अभी काफी दिन तक चलेगा। तुमको मालूम है दरवाजा 1000 रुपये का आता है। हमारा दरवाजा ठीक है। हमारा दरवाजा नहीं बदलेगा।'' और मैं उनकी डाँट सुनकर चुप-चाप नीचे आ गया। उनकी दृष्टि में यह अपव्यय था। जब तक किसी वस्तु से काम चल रहा है तब तक उसको काम में लाया जाना चाहिये। वे अपने प्रति थोड़ा भी अतिरिक्त खर्च सहन नहीं करते थे। ❁

ऐसे ही माताजी के पलंग का एक पाया हिल गया था। बार- बार कील आदि ठोंक कर उसे ठीक करते। वह बार-बार बाहर निकल जाता। उसे बदलना जरूरी था। माताजी, जब सोने के लिये ऊपर जातीं तो उस पाये के पास गुरुजी ने कुछ ईंटें रखवा दी थीं। उन्हें पहले पाये के पास लगा दिया जाता, फिर माताजी उस पलंग पर लेटतीं। पलंग भी काफी पुराना हो गया था। गुरुजी से पलंग बदलने के लिये पूछा तो उन्होंने मना कर दिया। बोले, ''1200 रुपये में पलंग आता है। इसे ही ठीक कर दो काम चलता रहेगा।''

हम भाईयों ने योजना बनाई कि हम लोग माताजी के लिये पलंग बनायेंगे। माताजी के लिये नया पलंग बनाया गया। अब उसे कमरे में पहुँचाना था। योजना अनुसार डॉ. प्रणव जी गुरुजी को ब्रह्मवर्चस ले गये। पीछे से हम लोगों ने पलंग बदल दिया।

रात को जब माताजी लेटने लगीं, तो ईंट रखने कोई नहीं गया। गुरुजी ने लड़कियों से कहा, ''सुनो-सुनो! यहाँ कहीं चार ईंटें रखी होंगी, लाओ।'' ईंटें तो हम उठा लाये थे, सो मिलती कहाँ? गुरुजी बोले, ''वो महेंद्र कहीं रख गया होगा, उसे बुलाओ।'' मैं गया। मैंने माताजी से कहा, ''आप बैठो।'' माताजी बैठ गईं। मैंने कहा, ''पलंग हिल तो नहीं रहा। आज ईंट की जरूरत नहीं है।'' गुरुजी बोले, ''क्यों नहीं है? ईंट लगाओ।'' माताजी बोलीं, ''जब हिल नहीं रहा है, तो रहने दो।'' गुरुजी अपने पलंग से उठे और बोले, ''हिल नहीं रहा है!'' उसे हिलाया-डुलाया, फिर बिस्तर उठा कर देखा और बोले, ''बदल तो नहीं दिया?'' अब तो सच बताना ही था। मैंने कहा, ''जी साहब, बदल दिया।'' गुरुजी थोड़ा नाराज हुए और बोले, ''1200 रुपये में पलंग आता है। तुम्हें मालूम है? एक-एक पैसा जनता देती है। वह कितनी कठिनाई से कमाती है, फिर हमें भेजती है।''

मैंने कहा गुरुजी, ''हम लोग माताजी के लिये कुछ नहीं कर सकते क्या? वह हमारी भी तो माताजी हैं।'' गुरुजी बोले, ''जरूर करो, पर अपनी कमाई में से करना। मैं जनता की कमाई में से अपने लिये एक भी पैसा खर्च नहीं कर सकता। और देखो, तुम लोग भी कभी जनता की कमाई में से अपने लिये एक भी पैसा खर्च मत करना।'' ❀

मुक्ति दीदी बताती हैं कि गुरुजी की कुर्सी की गद्दी बहुत पुरानी हो गई थी। थोड़ी फटने जैसी भी हो गई थी। हम लोग उसके लिये कपड़ा खरीद लाये। जब गुरुजी प्रवचन करने गये तो उसका नाप ले लिया और फिर अगले दिन उसी समय पर उसे चढ़ा भी दिया। गुरुजी ने लौट कर गद्दी पर नया कवर देखा तो पूरी खोजबीन की, किसने बनाया? कहाँ से आया? किसी ने बता दिया कि मुक्ति दीदी को देखा था। शायद उन्हीं का काम होगा। अगले दिन उन्होंने मुझसे पूछा, ''गद्दी तू ठीक कर गई क्या?'' मैंने कहा, ''जी पिताजी। पुरानी हो रही थी, थोड़ी फट भी रही थी। आपके पास लोग-बाग मिलने आते रहते हैं, तो ठीक नहीं लग रही थी।''

गुरुजी थोड़ी देर चुप रहे। फिर बोले, ''अच्छा बेटा! ठीक है। यह तो ठीक लग रही है।'' पर गुरुजी सहज में पैसा खर्च नहीं करने देते थे। वे मितव्ययिता को बहुत महत्त्व देते थे। माताजी भी सहज में पैसा खर्च करने नहीं देती थीं। एक बार मैं माताजी के लिये एक साड़ी खरीद लाई। माताजी ने जब देखी तो बोलीं, ''छोरी! मेरे पास तो पर्याप्त साड़ी रखी हैं और तू तो महँगी साड़ी ले आई। ऐसा कर, इसे वापस कर दे।'' मैंने कहा, ''नहीं माताजी, ज्यादा महँगी नहीं है।'' माताजी बोलीं, ''तेरे पास बिल होगा, दिखा। मैं किसी को भेज दूँगी, वो वापस कर आयेगा।'' मैंने कहा, ''माताजी मेरे पास बिल नहीं है और यह वापस भी नहीं हो सकती। मैंने आपके लिये खरीदी है। आपको इसे पहनना ही है।'' मैंने माताजी के साथ जिद की तो माताजी बोलीं, ''अच्छा, तू जिद करती है, तो रख लेती हूँ पर देख! पैसा तेरा है, तो भी वो हमारा ही है। आगे से खर्च करना तो देख कर करना।'' ❀

गुरुजी गोष्ठियों में कभी-कभी कहते थे, ''बेटा! फटा हुआ सिल कर पहन लेना, पर किसी से कभी माँगना नहीं।'' डॉ. रामप्रकाश पाण्डे जी को एक दिन एक आदमी ब्लेड की डिब्बी दे गया। उन्होंने वह ब्लेड माताजी को दे दिये। इसपर गुरुजी बहुत प्रसन्न हुए। वह बहुत बार उस प्रसंग की चर्चा करते और कहते, ''बेटा, कोई आदमी कोई चीज दे जाये तो माताजी के पास दे देना। उसे अपने लिये इस्तेमाल मत करना। नहीं तो तुम पर उस का भार चढ़ जायेगा।'' ❀

अपने निजी खर्च के संबंध में वे कितने अनुशासित थे, इस विषय में एक दिन श्रीकृष्ण अग्रवाल जी ने बताया। ''यह उन दिनों की बात है जब आश्रमवासियों की आवश्यकता हेतु त्रिपदा- 15 में, कुछ आवश्यक सामान रखने हेतु छोटी सी दुकान बनाई गई थी और मुझे इस काम के लिये नियुक्त कर दिया गया था।

दीपावली का दिन था। दुकान में पटाखे भी आये हुए थे। तब चीनू (श्री चिन्मय पंण्ड्या का घरेलू नाम) बहुत छोटा था। गुरुजी उसे गोदी में लिये हुए दुकान पर आये और बोले- ''बेटा! चीनू के लायक पटाखे निकाल दो।'' ''जो चाहिए, ले लीजिए गुरुजी।'' मैंने कुछ पटाखे सामने रखते हुए कहा।

गुरुजी ने कुछ पटाखे बच्चे के हिसाब से छाँटे और कहा-''इसे बाँध दो और कितना पैसा हुआ, बताओ?''

मैं हैरान होकर, गुरुजी की ओर देखने लगा। सोचा, दुकान तो गुरुजी की ही है। फिर भी इतने थोड़े से पटाखों के पैसे पूछ रहे हैं। मैंने झट से कहा- ''गुरुजी, दुकान आप ही की है, इसके पैसे नहीं लगेंगे।''

यह सुनकर गुरुजी नाराजगी भरे स्वर में, पर समझाते हुए बोले-''देख बेटा! फिर ऐसी बात मत कहना। दुकान मिशन की है। मैं पैसे दिए बिना नहीं लूँगा। तू चाहे तो इन्हें रख ले।''

अब तो मेरी बोलती बंद हो गई। बच्चे के पटाखे, कैसे रख लेता? मैंने तुरंत हिसाब जोड़ कर पैसे बताये, ''दो रुपये, नौ आने।'' पैसे देकर ही गुरुजी पटाखे लेकर गये। ❀

गुरुजी-माताजी ने अपने बच्चों से भी संयमशीलता की साधना कराई। इस विषय में एक प्रसंग मैंने वाङ्मय-खण्ड 1 में पढ़ा था। पढ़कर मेरा मन भर आया। प्रसंग इस प्रकार है- ''शैल जीजी तब लगभग 6-7 साल की थीं। एक दिन स्कूल से लौटते समय उन्हें रास्ते में एक रुपया पड़ा मिला। उन्होंने उसे उठा लिया। सामने खिलौने की दुकान थी। उनका बालमन खिलौनों के लिये मचल गया। मन ने कहा पड़े हुए सिक्के को उठा लेना कोई चोरी तो है नहीं। सो उन्होंने खिलौने की दुकान से गुब्बारे, खिलौने आदि खरीदे और बड़ी प्रसन्न मुद्रा में घर पहुँचीं।

घर पहुँचते ही माताजी की पहली नजर उनके नन्हें-नन्हें हाथों में थमे खिलौनों और गुब्बारों पर पड़ी। माताजी के पूछने पर उन्होंने सब बता दिया। माताजी ने प्यार से उन्हें समझाते हुए कहा, ''देखो बेटी, इन सब चीजों को दुकान पर वापिस कर आओ और पैसे को किसी मंदिर में डाल दो।'' ''आखिर क्यों?'' 6-7 साल की नन्हीं बच्ची के मन ने प्रश्न किया। मैंने तो कोई चोरी नहीं की, पैसे तो पड़े मिले थे।'' ''पड़े मिले तो क्या हुआ, बिना मेहनत का पैसा भी चोरी का ही है।'' माताजी ने समझाया और खिलौने लौटा दिये गये। पैसा पास के मंदिर में चढ़ा दिया गया।'' कुछ समय पहले खेलने के लिये मचल रहा मन आदर्श के आगे झुक गया। ❀

श्री चैतन्य जी व उस समय के अन्य परिजन डॉ दत्ता, लीलापत शर्मा जी आदि बताते हैं कि जब पूज्य गुरुदेव के बड़े बेटे, श्री ओमप्रकाश शर्मा जी, गुड़गाँव में अपना मकान बना रहे थे। उन्हें कुछ पैसों की आवश्यकता थी। यह बात मथुरा में तपोभूमि के कार्यकर्ताओं को पता चली। उधार में पैसे की व्यवस्था कर देना कोई बड़ी बात नहीं थी। किन्तु पूज्यवर से कहे कौन? किसी की हिम्मत नहीं पड़ रही थी।

उनकी परेशानी देखकर, एक कार्यकर्ता से रहा नहीं गया, सो एक दिन उसने हिम्मत बटोर कर गुरुजी से कह ही दिया, ''गुरुदेव, ओमप्रकाश भाई साहब को पैसे की आवश्यकता है। उधार में कुछ पैसे की व्यवस्था कर देते तो अच्छा होता।''

सुनकर, गुरुजी नाराज हो कर बोले, ''आप लोगों ने मुझे समझ क्या रक्खा है? मिशन का पैसा, बेटे को मकान बनाने के लिये दे दूँ? क्या मुझे चोर समझ रक्खा है? बेईमान-उचक्का समझ रक्खा है?''

अब तो कहने वाले भाई की सिट्टी-पिट्टी गुम हो गई थी। फिर भी सफाई के तौर पर धीरे से बोले, ''गुरुजी, हमने तो उधार की बात कही थी।'' परन्तु वे कहाँ सुनने वाले थे। इस पर और भी नाराज हुए और बोले, ''घर उसे बनवाना है, तो उधार की व्यवस्था भी स्वयं करे। हम मिशन के पैसे को अपने बेटों के लिये छू भी नहीं सकते।'' ❀

इसी प्रकार जब डॉ. प्रणव जी का ऐक्सीडेंट हुआ था। उस समय भी गुरुजी ने मिशन के पैसे को उनके इलाज के लिये उधार रूप में भी ग्रहण नहीं

किया। जब सतीश भाई साहब मथुरा से पैसे लेकर आये तब उन्हें दिल्ली ले जाया गया। श्री वीरेश्वर उपाध्याय जी उन्हें दिल्ली लेकर गये थे। ❁

श्री सतीश भाई साहब (गुरुदेव के सुपुत्र) की शादी के समय का एक प्रसंग जिसकी वीरेश्वर भाई साहब अक्सर चर्चा करते हैं, वह भी बताती हूँ-

सतीश भाई साहब की शादी का उत्सव प्रारंभ हो चुका था। सब मेहमान घीयामंडी, मथुरा पहुँच चुके थे। फिर भी पूज्यवर के सभी कार्यक्रम पहले की तरह ही नियमित रुप से चल रहे थे। कहीं कोई सजावट या परिवर्तन नहीं था।

शिविरार्थी तो पूज्यवर के आदर्श पर निढाल थे, किन्तु रिश्तेदारों को सजावट के कुछ भी चिह्न दिखाई न देने से खल रहा था। पर गुरुदेव से कहे कौन? गुरुजी से कहने की किसी की हिम्मत नहीं पड़ रही थी? सभी आपस में काना-फूसी कर रहे थे।

आखिर में श्री सत्यप्रकाश जी, सतीश भाई साहब की मौसी के लड़के, जिन्हें घर में सब ''सत्तो'' कहकर पुकारते थे। उन्होंने जाकर गुरुजी से अपनी ब्रज भाषा में कह ही दिया। ''क्या मौसा जी? कुछ अच्छो ना लागत है। लड़को को ब्याह है, कुछ झालर-वालर तो होना ही चाहिए।''

गुरुदेव ने उनकी बात सुनी व कहा- ''अच्छा देखता हूँ।''

मैं वहीं खड़ा था। मुझे इशारे से बुलाया व कहा- ''देख वीरेश्वर! सत्तो क्या कह रहा है? जा एकाध झालर लगवा दे।''

मैंने सत्यप्रकाश जी से चर्चा की व दुकान में आर्डर दे आया। उनके स्तर के अनुरूप कम से कम पचास रुपये का झालर तो लगना ही चाहिए, ऐसा सोचकर, आर्डर दे आया।

दूसरे दिन प्रात: पूज्यवर ने पूछा, ''वीरेश्वर, झालर के लिये कहा क्या?'' ''हाँ, गुरुजी।''

''कितने का?''

''जी, पचास रुपये का''

सुनकर गुरुजी बोले, ''जा, जा! मनाकर दे। मुझे नहीं लगाना पचास रुपये का झालर।'' मैं चौंक कर गुरुदेव का मुँह ताकने लगा सोचा, कल आर्डर दिया, आज कैसे मना करूँ? क्या सचमुच मना करना पड़ेगा? अभी सोच ही रहा था कि इतने में उन्होंने फिर कहा-''जा, जल्दी मना कर दे, नहीं तो वह लगा जायगा।''

अब तो कोई चारा नहीं था। साइकिल उठाकर मना करने हेतु चल पड़ा। दुकानदार नौकर को झालर देकर रवाना ही कर रहा था। नौकर वहीं कुछ आवश्यक सामान निकाल रहा था।

मैंने जाते ही कहा–''आचार्य जी ने कल का आर्डर कैन्सिल कर दिया है, अत: न भिजवायें।'' दुकानदार ने पहले तो एक टक देखा, फिर नौकर से कहा–''बस रहने दो, वहाँ का आर्डर कैन्सिल है।''

''आज तो बच गये।'' सोचते हुए व इससे पहले कि दुकानदार कुछ भला-बुरा कहे, मैं दुकान से खिसक लिया।

उन्हें फिजूलखर्ची तो बिल्कुल भी पसंद नहीं थी। उन्हें पुत्र के विवाह पर जरा सी रोशनी करना भी अनावश्यक सजावट लगता था।

ऐसे निस्पृह महापुरुष ही अपने लिये कठोरता अपनाकर किसी बृहद् मिशन का निर्माण करने में सक्षम हो पाते हैं। ❀

गुरुजी-माताजी चाहते थे कि हम कार्यकर्ताओं के जीवन में भी सादगी दिखाई देनी चाहिये।

एक बार सर्दियों में, मैं अपने घर, आगरा गई हुई थी। कड़ाके की ठण्ड थी। लौटते समय रास्ते में ठण्ड न लगे इसलिये मैंने कोट पहन लिया। कोट जरा कीमती था। रात में 8:30-9:00 बजे के लगभग मैं शान्तिकुञ्ज पहुँची। पहुँचते ही गुरुजी के पास प्रणाम करने के लिये गई। जैसे ही गुरुजी को प्रणाम किया उन्होंने बड़े ध्यान से देखा और बोले, ''अच्छा! कोट पहन कर आई है। कोट कहाँ से माँग लाई?'' मैंने कहा, ''गुरुजी, मेरा ही कोट है। किसी से, कहाँ से माँगती?'' इस पर गुरुजी बोले, ''अच्छा बेटा, माँगना नहीं किसी से। अब पहन आई है तो कोई बात नहीं, पर बेटा, यहाँ हम सबको ब्राह्मण जीवन जीने की बात कहते हैं। सादगी से रहने की बात कहते हैं। तू इसका ध्यान रखना।'' उस दिन के बाद से मैं गुरुजी के सामने वह कोट पहन कर नहीं गई। ❀

एक बार करवाचौथ के त्यौहार के दिन मैंने और शैलो जीजी ने बढ़िया से गहने आदि पहने और गुरुजी-माताजी को प्रणाम करने व उनका पूजन करने गए। पिताजी (गुरुजी) ने हमें बड़े गौर से देखा। फिर माताजी से बोले, ''माताजी, ये तो हमारी बेटियाँ नहीं लगतीं।''

उनकी दृष्टि में कुछ ऐसे भाव थे कि हम लोग उनसे नज़र नहीं मिला पाये, पर हम उनका भाव समझ गये थे। हम दोनों ने एक दूसरे की ओर देखा, जैसे-तैसे फटाफट पूजा की और दौड़ कर नीचे आ गये। दोनों ने परस्पर कोई चर्चा नहीं की, अपने-अपने कमरे में गये और सब गहने आदि उतार कर रख दिये। फिर कभी दुबारा हम लोगों ने उस दिन जैसे गहने नहीं पहने। गुरुजी को बहनों का जरूरत से ज़्यादा सजना-धजना पसंद नहीं था। वे कहते थे, ''बेटा, सादगी में ही असली सौंदर्य है।'' ❀

ब्राह्मणोचित जीवन (सादगी भरा जीवन) जीने की प्रेरणा देते हुए वे अक्सर समझाते, ''बेटा, ये हमारी ओढ़ी हुई गरीबी है। लोकसेवी को कम से कम सुविधा साधन बटोरने चाहिये।''

वे छोटी-छोटी बातों द्वारा ही महत्त्वपूर्ण शिक्षण दे दिया करते थे। एक दिन गुरुजी के पास एक सज्जन आये। एक बालक उनके लिये पानी लेकर आया। गुरुजी ने उन सज्जन के जाने के बाद उस बालक को व अन्य जो लोग बैठे थे सबको समझाया, ''जब भी किसी को पानी दो, तो गिलास को ढँकना चाहिये और नीचे भी एक तश्तरी रखनी चाहिये। यदि एक हाथ से गिलास पकड़ा है, तो दूसरा हाथ नीचे लगाओ। थोड़ा झुक कर और दोनों हाथ से पानी देना चाहिये। गिलास के नीचे तश्तरी रखना विनम्रता का प्रतीक है, और गिलास को ढँकना निरहंकारिता का।''

प्रारंभ के दिनों में बिजली नहीं थी। हम लोग भी लालटेन जला कर काम करते थे। एक दिन गुरुजी ने समझाया, ''लालटेन की बत्ती ठीक कर लेनी चाहिये। बत्ती को ऊपर से छोटी कैंची से काट लेना चाहिये। इससे रोशनी तेज हो जाती है और तेल भी कम खर्च होता है।''

करुणा के सागर - सामर्थ्य के पुंज

दूसरों के कष्ट से उन्हें ऐसी पीड़ा अनुभव होती थी जैसे वे स्वयं ही कष्ट भोग रहे हों। हमने उन्हें दूसरों के कष्ट में रोते भी देखा। तब एक पल को तो हम स्तब्ध रह गये, इतनी करुणा! वे श्रीरामकृष्ण परमहंस की ही भांति शिष्यों के कष्टों को अपने ऊपर ले लेते थे और उन्हें कष्ट से मुक्ति दिलाते थे।

तुलसीपुर, के गोयल जी बड़े ही समर्पित कार्यकर्ता एवं शान्तिकुञ्ज के ट्रस्टी रहे हैं। उनकी बेटी, विजय गोयल का बहुत जबरदस्त ऐक्सीडेंट हुआ था। हालत बहुत गंभीर थी। पूरा जबड़ा इस तरह से टूट गया था कि चेहरा पहचानना भी मुश्किल हो रहा था। गोयल जी ने तुरंत शान्तिकुञ्ज गुरुजी के पास टैलीग्राम किया। बेटी की हालत गंभीर होती गई। डॉक्टरों ने जवाब दे दिया तो गोयल जी तुरंत रात में 8:00 बजे ही पत्नी सहित शान्तिकुञ्ज के लिये चल दिये। सुबह जब वे गुरुजी से मिलने पहुंचे तब गुरुजी हम कुछ कार्यकर्ताओं से बातचीत कर रहे थे और टैलीग्राम देखकर बोले कि गोयल जी की बेटी में अब कुछ रहा नहीं है।

इतने में दोनों पति-पत्नी गुरुजी के पास पहुंचे और बिलख-बिलख कर रोने लगे, ''गुरुजी, कैसे भी हो, हमारी बेटी को बचा लीजिये।'' दोनों की हालत देख कर गुरुजी के नयन भी भर आये। उनकी आँखों से अश्रु बहने लगे। फिर बोले, ''अच्छा बेटा! मैं प्रार्थना करूँगा, तू लौट जा।'' अगले दिन जब हम प्रणाम करने पहुँचे तो देखा गुरुजी का चेहरा बिलकुल नीला दिखाई दे रहा है, जैसे बहुत गहरी कोई चोट आई हो। मैंने पूछा, तो बोले, ''कुछ नहीं, कुछ नहीं, तुझे ऐसे ही दिख रहा है, कोई भ्रम हो रहा है।'' अगले दिन उनका चेहरा सामान्य हो गया। उधर गोयल जी की बेटी की हालत में आश्चर्यजनक सुधार हो गया था। गुरुजी ने अपने शिष्य का कष्ट स्वयं पर लेकर उसे संरक्षण दिया था। ❀

एक और घटना है। उन दिनों हम पूर्ण रूप से शान्तिकुञ्ज नहीं आये थे। भिलाई में ही रहते थे। हमारे साथ भिलाई की एक कार्यकर्ता कामिनी बहन हमारे साथ आई थीं। उनके विवाह को कई वर्ष हो गए थे, पर संतान नहीं थी। इस कारण परिवार के लोग उन्हें परेशान करते थे। यहां तक कि पति भी अब दूसरा विवाह कर लेने की बात कहने लगे थे। मिशन का काम करने पर भी पति उन्हें ताने देते और कहते कि हम तुम्हें छोड़ देंगे। तब तुम आराम से अपने गुरू का काम करना।

गुरुजी के पास जाकर उन्होंने अपनी व्यथा सुनाई और फूट-फूट कर रोने लगीं। उनकी व्यथा सुनकर गुरुजी की आँखों से भी अश्रुधारा बहने लगी। जितना वह रो रही थीं, उतना ही गुरुजी भी रो रहे थे। हम सब देखकर हतप्रभ

थे। गुरुजी की हालत देखकर हम कामिनी बहन से धीरज रखने को कहकर उन्हें शांत हो जाने के लिये कहने लगे। फिर थोड़ी देर में गुरुजी बोले, ''जा बेटी, अब तुझे कोई तंग नहीं करेगा। तू बस मेरा काम करती रहना।''

जल्दी ही हम लोग स्थाई रूप से शान्तिकुञ्ज आ गये। कामिनी बहन को शान्तिकुञ्ज से लौटने के नौ माह बाद ही एक सुंदर बालक की प्राप्ति हुई। कुछ वर्षों बाद वे बालक को गुरुजी का आशीर्वाद दिलाने के लिये शान्तिकुञ्ज लेकर आईं। जब हमने बालक के विषय में पूछा तो अश्रुपूरित नेत्रों से कहने लगीं, ''आप भूल गए, जब मैं रोते हुए गुरुजी के पास आई थी ? उन्होंने ही मेरी झोली खुशियों से भर दी है।'' ❁

श्री केसरी कपिल जी एवं श्रीमती देवकुमारी श्रीवास्तव

(श्री केसरी कपिलजी 1969 में टाटानगर में पूज्य गुरुदेव के सम्पर्क में आये। उसके बाद लगातार संपर्क में रहे, क्षेत्र से ही समयदान करते रहे, गुरुदेव के साथ भी टोलियों में जाने का सौभाग्य मिला। जून 1977 में पूज्य गुरुदेव के बुलाने पर सपरिवार स्थाई रूप से शान्तिकुञ्ज आ गये।)

काल को भी मुट्ठी में रखने वाले महाकाल हमारे गुरुदेव

सन् 1969 में पूज्य गुरुदेव हमारे यहाँ टाटानगर आये थे। उनका कार्यक्रम था। उसी कार्यक्रम में 10 अप्रैल को हमने गुरुदीक्षा ली। उन दिनों गुरुदेव पुष्पाँजलि अपने हाथ में लिया करते थे। जब दीक्षा की पुष्पाँजलि देने गुरुदेव के पास गई तो उन्होंने कहा, ''बेटा, परिवार और सामान न बढ़ाना।'' मैंने कहा, ''गुरुदेव, कल ही तो आपने पुंसवन संस्कार कराया है'' तो बोले, ''बेटा यह संतान तुम्हारा भविष्य बदलने आ रही है। तुम्हारी यह संतान बहुत सौभाग्यशाली होगी, पर आगे परिवार और सामान मत बढ़ाना।'' मैं सोचने लगी परिवार की बात तो समझ में आई, पर सामान की बात समझ में नहीं आई। बात आई गई हो गई।

कहते हैं कि समर्थ गुरु शिष्य को कुछ देने से पहले कठिन परीक्षा लेता है सो हमारी भी परीक्षा शुरू हुई। 26 अप्रैल को मेरा छोटा पुत्र शशि शेखर

जो उस समय तीन वर्ष का था, सख़्त बीमार हो गया। एक माह होने को आया पर उसके स्वास्थ्य में कोई सुधार नहीं हो रहा था, बल्कि स्थिति और भी नाज़ुक होती जा रही थी। पूरी पारिवारिक व्यवस्था अस्त-व्यस्त हो गई थी। विचित्र स्थिति थी। बालक हर समय बेहोश रहता था। डाक्टर, हमारे पतिदेव के आगमन की प्रतीक्षा करते रहते थे। क्योंकि वे बालक के सिर पर हाथ रखकर जब गायत्री मंत्र बोलते तो वह आँखें खोल देता। जिसे देखकर डाक्टर दवा लिखते थे।

25 मई को उसकी स्थिति ज़्यादा खराब हो गई। जब उसका कष्ट असह्य हो गया तो पतिदेव (श्री कपिल जी) ने मेरे आग्रह पर गुरुदेव को पत्र लिखा कि बालक का कष्ट देखा नहीं जाता। यदि बचा सकें तो ठीक, नहीं तो उसे दुनिया से उठा भी लें तो दुःख नहीं। उसे कष्ट से तो मुक्ति मिले।

गुरुदेव तक पत्र पहुँचने में कम से कम 5 दिन तो लगते ही थे। पर आश्चर्य! 29 मई को ही गुरुदेव का जवाबी पत्र पहुँच गया। पत्र 25 मई को लिखा गया था। ऐसा लगा जैसे यहाँ हम पत्र लिख रहे थे और वहाँ वह जवाब लिख रहे थे। लिखा था- ''तुमने भले न बताया हो पर तुम्हारे बालक की अस्वस्थता की जानकारी हमें है। घबराना नहीं, बालक शीघ्र घर जाएगा और पूर्ण रूप से स्वस्थ होगा।'' पत्र मिलने के चौथे दिन ही 2 जून को बालक को अस्पताल से छुट्टी मिल गई और उसके स्वास्थ्य में क्रमशः सुधार भी होता गया। ❁

जून 1969 में मथुरा में नौ दिवसीय गायत्री अनुष्ठान सत्र पूज्य गुरुदेव के सान्निध्य में चल रहे थे। मेरे पतिदेव को भी जाना था। मेरे प्रसव का समय नज़दीक था। तीनों बच्चे भी छोटे ही थे। पतिदेव की अनुपस्थिति में सब व्यवस्था कैसे होगी? मुझे यह चिंता सताये जा रही थी। एक रात हम दोनों ने स्वप्न में देखा कि एक श्वेताम्बर महिला हमारे आँगन का चक्कर काटकर मेरे कमरे में आकर कहने लगी, तू क्यों चिंता करती है? मैं तो तेरे पास आ गई हूँ। तुम्हारी देखभाल मैं करूँगी। उसी दिन शाम को मेरी ननद हमारे घर आ गई और मेरे पतिदेव मेरी जिम्मेदारी उन्हें सौंपकर मथुरा के लिये तैयार हो गये। पतिदेव से, जाते समय मैंने निवेदन किया कि आपकी उपस्थिति में ही प्रसव होता तो मैं निश्चिंत रहती। कृपया पूज्य गुरुदेव को मेरा यह संदेश दे दीजियेगा।

श्री कपिल जी ने तपोभूमि मथुरा में पहुँच कर जब गुरुजी से सब बात बताई तो गुरुजी ने कहा कि घर की चिंता अब तुम्हारी नहीं। वहाँ की देख-रेख हम कर लेंगे। तुम यहाँ अनुष्ठान करो और यदि तुम्हारी पत्नी की इच्छा है कि प्रसव तुम्हारी उपस्थिति में ही हो तो मैं उसका प्रसव काल एक महीने आगे बढ़ा देता हूँ।

इधर हमारे आश्चर्य और प्रसन्नता का ठिकाना नहीं था। 12 दिन मेरे पतिदेव हमसे दूर रहे किन्तु प्रत्येक दिन गुरुदेव और वंदनीया माताजी मुझे हर पल अपनी उपस्थिति का आभास कराते रहे। कभी-कभी तो गुरुजी का कुर्ता स्पष्ट दिखाई देता। गुरुजी के पूरे दर्शन तो नहीं हुए पर उनका बराबर अहसास होता रहा। माताजी तो घर में घूमते हुए व बच्चों के बिस्तर पर लेटी हुई अक्सर ही दिखाई देतीं। उन्हें बच्चों के बिस्तर पर देखकर मुझे लगता कि बच्चे बिस्तर गंदा कर देते हैं, कभी-कभी गीला भी कर देते हैं। फिर भी माताजी उस पर आनंद से लेट जाती हैं।

इस प्रकार कैसे इनके शिविर के दिन पूरे हो गये पता ही नहीं चला। यह मथुरा से लौट आये। हमारी छोटी बेटी करुणा का जन्म भी दसवें महीने में इनके लौटने पर ही हुआ और सच में यहीं से मेरे भाग्य का बदलाव भी प्रारंभ हो गया।

इन्हें, मैंने तेरी अमानत मानकर रखा था।

गुरुदेव साधना हेतु हिमालय जाने वाले थे। 16 से 20 जून 1971 की तिथियों में मथुरा में विदाई समारोह होने वाला था। टाटानगर के गायत्री परिजन उन दिनों गीत गाते थे -

कुछ चंद महीनों का, समय बाकी बचा है,
गुरुदेव चले जायेंगे, यह शोर मचा है।

अखण्ड ज्योति पत्रिका में अपनों से अपनी बात शीर्षक के अंतर्गत गुरुदेव इसी आशय के लेख भी लिख रहे थे। पूज्य गुरुदेव के अंतिम दर्शन करने की इच्छा हर किसी को झकझोर रही थी। कोई भी पीछे नहीं रहना चाहता था। सन् 1971 के विदाई समारोह में हम भी सपरिवार आये थे। हम दोनों यज्ञनगर एवं यज्ञशाला की जवाबदारी सँभाल रहे थे। इस समारोह में गुरुदेव के प्रवचन, यज्ञ के बाद ही होते थे। तीसरे दिन के प्रवचन में गुरुदेव का बड़ा

मार्मिक उद्‌बोधन था। उन्होंने अपनी अनुपस्थिति में परिजनों को अपना समय, श्रम, साधन लगाकर मिशन को सम्भालने और बढ़ाने का भावभरा आवाहन किया। शायद ही कोई ऐसा होगा, जिसका हृदय विगलित न हुआ हो। बहुत लोगों ने अपने आभूषण उतार कर दान किये। मुझे आभूषण पहनना बहुत प्रिय था। 7-8 तोले के आभूषण मैंने उस समय भी पहन रखे थे। मुझे भी उत्साह आया और हम दोनों ने परामर्शपूर्वक सब आभूषण एक रुमाल में बाँधकर गुरुजी व माताजी के चरणों में रखकर प्रणाम कर लिया।

20 जून को गुरुजी-माताजी अखण्ड दीपक लेकर शान्तिकुञ्ज, हरिद्वार आ गये। सब जानते हैं कि वे मथुरा से कुछ भी साथ नहीं लाये थे। उसके बाद सन् 76 तक मैं अनेकों बार शान्तिकुञ्ज आई। सन् 77 के जून माह में गुरुपूर्णिमा पर्व पर, शिविर में भाग लेने के लिये मैं बच्चों सहित आई थी। गुरुदेव ने हम दोनों को दोपहर में मिलने के लिये बुलाया और बोले, ''अब यहाँ ही रहना।'' इन्होंने कहा, ''गुरुजी, 6 महीने तो देता ही हूँ, 2 माह और बढ़ा दूँगा।'' गुरुजी बोले, ''मुझे 365 दिन चाहिये।'' हमने कहा, ''गुरुदेव, बच्चे छोटे हैं, उनकी पढ़ाई लिखाई की जिम्मेदारी है। बड़ा परिवार है। छोटा बेटा बीमार रहता है।'' गुरुदेव बोले, ''बेटा, तू मेरे पास आ जाएगी तो मैं सब देख लूँगा।'' हम लोग यहीं रुक गये।

11 जुलाई को माताजी ने दोपहर में बुलाया और एक छोटी सी पोटली मुझे दी। मैंने खोल कर देखा 6 साल पहले समर्पित किये मेरे आभूषण थे। मैंने कहा, ''माताजी यह तो मैंने दान कर दिये थे। इन्हें मैं नहीं लूँगी।'' माताजी ने कहा, ''बेटा, मैं जानती थी कि भविष्य में तुझे मेरे पास आना है। इसलिये मैंने इन्हें तेरी अमानत मानकर रखा था।'' फिर बोलीं, ''तेरी गृहस्थी कच्ची है। अभी ये तेरे काम की है, इसे रख ले। बच्चों के समय काम आयेंगे।'' मेरे लाख मना करने पर भी माताजी ने वह आभूषण मुझे थमा दिये। मैंने उन्हें सँभाल कर तो रख लिया पर, कभी पहना नहीं। जब बच्चों का विवाह हुआ तब वही माताजी से प्राप्त आशीर्वाद की पोटली मेरे काम आई। मेरे दोनों बेटों और दोनों बेटियों का विवाह मैंने उन्हीं आभूषणों से किया। पर मेरे लिये आज भी यह रहस्य और आश्चर्य ही बना है कि माताजी ने हजारों की भीड़ और हजारों आभूषणों में से भी मेरे आभूषण कैसे पहचाने और कहाँ सँभाल कर रखे थे?

जितने आभूषण दिये थे उतने ही थे, न एक कम न ज़्यादा। सच में हमारे पूज्य गुरुदेव और वंदनीया माताजी त्रिकालदर्शी और सर्वज्ञ थे।

श्री कपिल जी भाई साहब बताते हैं, ''मुझे गुरुदेव के साथ क्षेत्रों में जाने का भी सौभाग्य प्राप्त हुआ। उनके साथ बिताई ढेरों स्मृतियाँ हैं। पंडित लीलापत शर्मा जी भी अक्सर साथ में रहते थे। उन्होंने इस पर 'पूज्य गुरुदेव के मार्मिक संस्मरण' नामक पुस्तक भी लिखी है। बहुत से प्रसंग उसमें छप चुके हैं, और भी ढेरों प्रसंग हैं।''

आपका सुतीक्ष्ण आपकी प्रतीक्षा में है

मई, सन् 1977 में मैं, पंचकुण्डीय गायत्री महायज्ञ आयोजन सम्पन्न कराने हेतु गुजरात दौरे पर था। मेरे साथ आँकला, जिला खेड़ा के डॉ. गोविन्द भाई पटेल भी थे।

नर्मदा नदी पार बड़ौदा जिले के एक गाँव में पंचकुण्डीय यज्ञ के संयोजक, एक संत थे। बड़ी श्रद्धा से उन्होंने तीनों दिन के कार्यक्रम सम्पन्न कराये। यज्ञ की पूर्णता के पश्चात् जब हम लोग चलने लगे, तब उन्होंने मुझसे कहा–''कृपया आप गुरुदेव से कहें कि आपका सुतीक्ष्ण, आपकी प्रतीक्षा में है। अब मुझे इस धरती से उठा लेना व अपने पास बुला लेना।'' हमने शान्तिकुञ्ज आकर गुरुदेव से कह दिया। बात आई-गई हो गई। पुन: जब गुरुदेव सन् 1980 में गायत्री शक्तिपीठों की प्राण प्रतिष्ठा के प्रथम दौरे पर गुजरात गये, तब शामलाजी से छिपड़ी होते हुए बड़ौदा पहुँचे। हमने गुरुजी को याद दिलाया कि यहीं पर निकट में एक संत आपकी प्रतीक्षा में थे। गुरुदेव ने उनके लिए एक कार्यकर्ता के हाथ, कुछ फूल भेज दिये।

सुबह जब हम लोग बड़ौदा से निकल रहे थे, उसी समय सूचना मिली कि उक्त संत ने शरीर त्याग दिया है। तब पूज्य गुरुदेव ने पुन: उनके लिये अंतिम पुष्पांजलि स्वरूप पुष्प दिये व एक कार्यकर्ता को भेजा। इस प्रकार उन्होंने अपने सुतीक्ष्ण का सम्मान किया।

प्रेत योनि से मुक्ति दिलाई

4 नवंबर 1981 की बात है। पूज्य गुरुदेव शक्तिपीठों के दौरे पर थे। हम गुरुदेव के साथ थे। महुआ, जिला भावनगर, गुजरात में हम लोग श्री छबील भाई मेहता के घर ठहरे थे। उस घर में भूतों का कब्जा था। शायद इसीलिये

छबीलभाई स्वयं उस घर में नहीं रहते थे। हमें यह बात मालूम नहीं थी। रात में सब काम समाप्त करते-करते मुझे 1:00 बज गया। 1:10 पर जब मैं सोया तो प्रेत परेशान करने लगे। कुछ देर तक तो मैं उनसे जूझता रहा पर फिर मुझे लगा कि पूज्य गुरुदेव से कहना चाहिये। गुरुजी तब तक सो चुके थे। मैं उनके कमरे मे गया, धीरे से गुरुदेव के पैर का अँगूठा पकड़ा। गुरुजी, तुरंत उठ बैठे, जैसे वह मेरा इंतजार ही कर रहे हों। बोले, ''क्या है बेटा?'' मैंने कहा, ''पिताजी, प्रेत परेशान कर रहे हैं।'' गुरुदेव बोले, ''अच्छा बेटा, चल! मैं देखता हूँ।'' गुरुदेव हॉल में आये। मेरे बिस्तर पर लगभग 5 मिनट बैठे, ध्यान किया, फिर बोले, ''अब सो जा बेटा, उनकी मुक्ति हो गई।'' मुझे लेटते ही नींद आ गई। फिर किसी ने मुझे परेशान नहीं किया।

गुरुजी सदा प्रोत्साहन देकर परिजनों का उत्साह बढ़ाते रहते थे।

लोहरदगा बिहार के एक सौ आठ कुण्डीय यज्ञ की बात है। इस प्रसंग को इंदिरा बहन भी सुनाती हैं। गुरुदेव के आने से पूर्व तक कार्यक्रम श्री शिव प्रसाद मिश्रा जी ही सँभालते थे।

उस दिन पूज्य गुरुदेव को जरा देर से यज्ञ स्थल आना था। अतः श्री मिश्रा जी कर्मकाण्ड सम्पन्न कराते हुए बार-बार, मुड़-मुड़कर देख रहे थे। पूज्यवर नियत समय पर पहुँच गये और मिश्रा जी के पीछे जाकर खड़े हो गये। उन्होंने सबको इशारा कर दिया कि वे न बतायें अन्यथा उन्हें डिस्टर्ब होगा। किसी ने नहीं बताया कि गुरुजी आ गये हैं। पर मिश्रा जी का मन नहीं मान रहा था। इतना लेट गुरुजी हो नहीं सकते, अभी तक मुझे सूचना कैसे नहीं मिली, एकाएक, वे पूरा पीछे घूम गये। देखा, तो गुरुदेव पीछे खड़े, मंद-मंद मुस्कुरा रहे थे। अब तो वे खुशी से उछल पड़े। ''पूज्य गुरुदेव की जय'' गगन भेदी नारों से पूरा पंडाल जय घोष करने लगा।

''देखा, मैंने कहा था न, डिस्टर्ब होगा।'' कहते हुए पूज्यवर ने मंच संभाल लिया। अपने शिष्यों को आगे बढ़ाने हेतु वे भरपूर अवसर देते थे। देर से जाते व चुप बैठ जाते ताकि उनके मन में गुरुदेव के आने से संकोच न हो।

शान्तिकुञ्ज में भी गुरुजी ने देवकन्या सत्र, महिला सत्र, प्राणप्रत्यावर्तन सत्र, कल्प साधना सत्र, चांद्रायण व्रत इत्यादि बहुत सारे सत्र, साधनाएँ व

प्रशिक्षण सत्र कराये। उन सबके माध्यम से हम सब लोगों को तैयार किया और फिर स्वयं तो उन्होंने क्षेत्रों में जाना ही छोड़ दिया। हमीं लोगों को प्रचार-प्रसार के लिये यहाँ तक कि बड़े-बड़े कार्यक्रमों में भेजने लगे थे। शक्ति वे देते रहे काम हम लोग करते रहे। उनकी शक्ति का अहसास आज भी हम लोगों को बराबर होता है।

घास-फूस का प्रज्ञापीठ

शक्तिपीठों की प्राणप्रतिष्ठा के समय का एक प्रसंग है, महासमुन्द के वरिष्ठ कार्यकर्ता पं. ज्वालाप्रसाद दुबे ने एक घास-फूस की झोंपड़ी बना ली। उसमें गायत्री माता का चित्र रख दिया तथा कुछ पुस्तकें प्रचार हेतु रख दीं व मन में सोच लिया कि इसका गुरुदेव द्वारा उद्घाटन कराऊँगा।

चूंकि स्थान रास्ते में ही पड़ता था अत: एक कार्यकर्ता को गुरुदेव की गाड़ी रोकने हेतु खड़ा कर दिया व स्वयं कुछ तैयारी करने चले गये। कार्यकर्ता का ध्यान थोड़ा चूक गया और इतने में पूज्य गुरुदेव की गाड़ी आगे निकल गई। किन्तु तब तक ज्वाला प्रसाद जी ने आकर साथ जा रही दूसरी गाड़ी को रोक लिया। उन्हें वह स्थान दिखाया व समझाया कि गरीब जनता कहाँ से शक्तिपीठ हेतु खर्च कर पायेगी। अत: गाँव-गाँव में साहित्य प्रचार हेतु मैंने प्रज्ञापीठ बनाया है। गुरुजी को जरूर बताना। अवश्य बतायेंगे कहकर, दूसरी गाड़ी बिदा हुई। ज्वाला प्रसाद जी थोड़ा निराश हो गये। अब शायद ही गुरुदेव आ पायें। मन को जैसे-तैसे समझा लिया।

बात गुरुदेव के कानों तक पहुँची। गुरुदेव हँसे और बोले, ''ये ज्वाला भी कुछ न कुछ करता ही रहता है। अच्छा, उसे जरूर देखेंगे। लौटते में गाड़ी रोकना।''

निर्देश भला अमान्य कैसे होता? लौटते में वहाँ गाड़ी रोकी गई। गुरुदेव ने उसे देखा। खूब हँसे और कहा, ''ज्वाला, इसका भी उद्घाटन करूँ?''

ज्वाला प्रसाद जी ने चुपचाप सिर हिला दिया। दीपक जल उठे। गरीबों की भावना ने भगवान का दिल छू लिया था और उन्होंने भी उन्हें हृदय से अपना मान लिया। आज भी छत्तीसगढ़ प्रांत गुरुदेव का हृदय माना जाता है।

तूने तो मुझे बुक सेलर बना दिया

एक दिन एक परिजन गुरुजी के पास आये व बड़ी बहादुरी प्रदर्शित करते हुए बोले, ''गुरुजी मैंने 35-40 अखण्ड ज्योति पत्रिका के ग्राहक बना दिये हैं।''

उसकी बात सुनकर गुरुजी थोड़ा गंभीर हुए व कहा, ''बेटा, तूने तो मुझे बुक सेलर बना दिया। कभी देखा कि जिन्हें तूने ग्राहक बनाया है, वह पढ़ता है कि नहीं? उसके पास बैठ, उससे चर्चा कर, पता चल जायगा कि पढ़ता भी है कि नहीं।''

कार्यकर्ता ने जाना कि अभी तक साहित्य प्रचार की बात ही समझ में आई थी। पढ़ाने की नहीं। उसे लगा कि शायद पूरे पृष्ठ तो मैं ही नहीं पढ़ पाता, फिर दूसरे से क्या पूछूँ? और उसी क्षण उन्होंने पढ़ने व पढ़ाने की प्रतिज्ञा ली।

ऐसे थे पूज्यवर, अति उत्साह को क्रियात्मक ढंग से वास्तविकता की ओर मोड़कर सहज भाव से अपना बना लेते थे, और बाद में अतीव दुलार कर, इतना अनुदान देते कि व्यक्ति निहाल हो उनका ही होकर रह जाता था।

बेटा, तेरे दो आने खर्च हो गए

आगरा के पुराने सक्रिय कार्यकर्त्ता श्री पन्नालाल अस्थाना जी ने महापूर्णाहुति के कार्यक्रम में एक लाख रुपये से अधिक मूल्य का युग साहित्य जन-जन तक पहुँचाया था। एक दिन चर्चा के दौरान पंडित लीलापत शर्मा जी ने उनसे पूछा कि युग साहित्य के प्रसार के लिए इतना उत्साह आपमें कैसे पैदा हुआ? तो उन्होंने अपना संस्मरण बतलाया-

''बात सन् 60 के दशक की है, तब पूज्य गुरुदेव मथुरा में ही थे। सस्ता समय था। मैं गुरुदेव से मिलने मथुरा गया तो मैंने पूज्य गुरुदेव के लिए दो आने की एक अच्छी सी फूल माला खरीदी। प्रणाम करके वह उन्हें पहना दी। फिर बातें होने लगीं। पूज्य गुरुदेव ने अचानक पूछा-

''बेटा, यह माला तू कितने में लाया?'' मैंने बतलाया, ''दो आने में गुरुजी।'' इसपर गुरुजी बोले, ''बेटा, तेरे दो आने खर्च हो गए और यह माला मेरे किसी काम नहीं आई। यदि तू दो आने की मेरी एक छोटी-सी किताब ले जाता तो दसियों लोगों तक मेरे विचार पहुँचते। तेरे पैसे भी सार्थक होते, लोगों का भी भला होता और मुझे भी संतोष मिलता।''

श्री अस्थाना जी ने बतलाया कि पू. गुरुदेव द्वारा सहजता से व्यक्त किए गए यह उद्‌गार मेरे हृदय में गहराई से बैठ गए। मेरी समझ में आ गया कि अपने धन की सार्थकता, जन कल्याण और गुरु की प्रसन्नता, तीनों अर्जित करने के लिए युग साहित्य का प्रसार सबसे सुगम और उपयोगी माध्यम है। इसलिये मैंने ज्ञान-यज्ञ को गति देने के लिये साहित्य-विस्तार का ही लक्ष्य सामने रखा और गुरुकृपा से सफलता भी मिली।''

केवल उजाड़ना नहीं बसाना भी आना चाहिए

एक बार श्री संदीप कुमार जी और कुछ अन्य परिजन पटना में नवरात्रि अनुष्ठान कर रहे थे। जिस घर में वे अनुष्ठान कर रहे थे वहाँ भूत-प्रेतों का निवास था। एक कार्यकर्ता, श्री चन्द्रशेखर जी, के बेटे को भूत परेशान करने लगे। वे बेटे को लेकर शान्तिकुञ्ज आए व पूज्यवर को सब बात बताई। पूज्यवर ने बेटे से पूछा, ''भूत तुझसे क्या मांगते हैं?'' बेटे ने कहा, ''फूल माँगते हैं?'' गुरुजी ने एक फूल उठाकर दे दिया। उनके जाने के बाद हम लोगों से कहा, ''तुम लोग यज्ञ करते हो, जिससे भूतों का घर उजड़ जाता है। जब तुम्हें उनका घर उजाड़ना आता है तो घर बसाना भी आना चाहिए न।'' अर्थात् उनकी मुक्ति हेतु भी अनुष्ठान करें। फिर कहा, ''सभी भूतों को नई योनियाँ दे दी हैं।'' इस प्रकार हर समस्या का समाधान करना व साथ में शिक्षण देना भी उनका सहज स्वभाव था।

गायत्री माता को मारेगा क्या?

मिशन की लोकप्रियता व प्रतिष्ठा देखकर एक स्थान पर एक मंदिर के पुजारी ने गायत्री माता की मूर्ति भी मँगवा ली तथा गुरुदेव को उद्‌घाटन हेतु बुला लिया। गुरुवर सहज ही तैयार भी हो गये पर जब मंदिर में गये तो देखा, वहाँ पूर्व से ही राधा-कृष्ण, सीता-राम, लक्ष्मी-गणेश, शंकर भगवान, हनुमान जी की मूर्तियाँ विद्यमान हैं। उन्हें देखकर उन्होंने कहा, ''यहाँ इतनी मूर्तियाँ तो पहले से ही मौजूद हैं। गायत्री माता को मारेगा क्या?''

वहाँ उन्होंने गायत्री माता की प्राण प्रतिष्ठा नहीं की। संभवत: वह अंध श्रद्धा को बढ़ावा नहीं देना चाहते थे। उन्होंने समझ लिया कि यह श्रद्धालुओं को दुहने के लिये ही मूर्ति स्थापना कराना चाहता है।

युग सर्जक भला अपने बच्चों को अनास्था के गर्त में कैसे ढकेलते, अत: मूर्ति स्थापना नहीं की। ❁

श्री अशोक दाश एवं श्रीमती मणि दाश

(श्री अशोक दाश जी 1981 में राऊरकेला उड़ीसा में पूज्य गुरुदेव के सम्पर्क में आये, दीक्षा ली और 1984 में स्थाई रूप से परिवार सहित शान्तिकुञ्ज आ गये।)

जो भी मशीन पकड़ेगा, ठीक हो जाएगी

मुझे माताजी का बहुत प्यार-आशीर्वाद मिला। उनके साथ बिताया एक-एक क्षण मेरे लिये धरोहर है। अभी मैं शान्तिकुञ्ज में नया-नया ही आया था। पूज्य गुरुदेव उन दिनों सूक्ष्मीकरण साधना में थे। एक दिन मैं और डॉ. दत्ता जब माताजी को प्रणाम करने गये तो माताजी ने बताया लल्लू मेरा टेलीफोन (इंटरकॉम) खराब हो गया है, ठीक ही नहीं हो रहा। डॉ. दत्ता जी बोले, ''माताजी, यह ठीक कर देंगे।'' माताजी ने मुझसे पूछा, ''लल्लू, तू ठीक कर देगा? अच्छा! देख तो!'' मैंने मन में सोचा, ''मैं कैसे करूँगा?'' पर मैं टेलीफोन को ब्रह्मवर्चस ले आया, उलट-पलट कर देखा और खोलकर साफ कर दिया, वह ठीक हो गया। अगले दिन माताजी का फोन चालू हो गया। माताजी खूब खुश हुईं और बोलीं ''जा, आज से तू गुरुजी का और मेरा फोटो सामने रखकर जो भी मशीन पकड़ेगा, वो ठीक हो जाएगी।'' उनका वह आशीर्वाद खूब फला। मैं किसी मशीन को उलट-पलट कर देखता भर था कि वह ठीक हो जाती थी। उनके आशीर्वाद से मैंने कितनी मशीनें ठीक कीं, इसका मेरे पास कोई हिसाब नहीं। मुझे ऐसा ही लगता रहा कि माताजी ने स्वयं ही इसे ठीक कर दिया है।

मैं कोई राजेश खन्ना हूँ ?

प्रारंभ में ई.एम.डी. विभाग बहुत छोटा सा था। थोड़ा-बहुत गीतों की रिकार्डिंग आदि का काम होता था। साधन भी कम थे और टैक्नीक भी आज के जितनी विकसित नहीं थी। एक छोटा सा वीडियो रिकार्डर था, जिससे बड़े भाईयों ने गुरुजी का एक प्रवचन रिकार्ड किया था। बार-बार दिखाने के कारण वह खराब हो गया था। जब नया रिकार्डिंग सेट आया तो मैंने सोचा कि यदि गुरुजी उस प्रवचन को दुबारा बोल दें तो कितना अच्छा हो। मैं गुरुजी के पास गया और निवेदन किया कि गुरुजी आप की रिकार्डिंग करनी है। गुरुजी ने मना

कर दिया। मैं नीचे आ गया। इस प्रकार मैं, दो-तीन बार खाली हाथ लौट कर आया। मेरे बार-बार आग्रह करने पर एक दिन गुरुजी ने डाँट लगाई, बोले, ''मैं कोई राजेश खन्ना हूँ? देवानंद हूँ? जो तू मेरी रिकार्डिंग करेगा?'' अब उनसे दुबारा निवेदन करने का मेरा साहस नहीं था। फिर भी बार-बार मन में विचार आता कि गुरुजी की रिकार्डिंग तो अवश्य होनी चाहिये ताकि सबको और आने वाली पीढ़ियों को भी इस अमृत का पान कराया जा सके। सो एक दिन मैंने माताजी से कहा, ''माताजी, गुरुजी तो रिकार्डिंग के लिये मना करते हैं।'' माताजी बोलीं, ''ठीक है बेटा, वे मानेंगे तो नहीं पर मैं कोशिश करूँगी।''

अगले दिन जब मैं गया तो माताजी ने कहा, ''जा लल्लू, गुरुजी से मैंने कह दिया है।'' मैं ऊपर गया तो गुरुजी ने मेरा कैमरा आदि देखकर मुझे तीखी निगाहों से देखा, पर मैंने उनकी ओर नहीं देखा कि फिर डाँटेंगे और चुप-चाप रिकार्डिंग में लग गया। गुरुजी कैमरे की ओर एक-टक देखते रहे और कुछ-कुछ बोलते रहे। मैं चुप-चाप रिकार्डिंग करता रहा। लगभग आधा घण्टा रिकार्डिंग की। जब नीचे आया और वंदनीया माताजी को दिखाने लगा, तो देखा, कि उसमें तो कुछ भी रिकार्ड नहीं हुआ था। मुझे बहुत अफसोस हुआ।

माताजी मुस्कुराईं और बोलीं, ''लड्डू लेकर जा।''

जब तक गुरुजी की इच्छा नहीं थी, तब तक हम लोग उनकी रिकार्डिंग नहीं कर सके। जड़ और चेतन सभी उनकी इच्छानुसार काम करते थे।

तू मुझे और गुरुजी को कभी अलग मत करना

वंदनीया माताजी के लगभग 150 गीत रिकार्ड हुए हैं। माताजी संगीत वाले भाईयों को और रिकार्डिंग टीम को ऊपर अपने हॉल में ही बुलाती थीं। वे स्वयं गीत चुनतीं या लिखवाती थीं। माताजी अपने विचार बतातीं और आद० प्रणव भाई साहब, उपाध्याय जी आदि गीत लिखते। उन्हें जहाँ जैसा शब्द चाहिये होता वे संशोधन करवातीं और फिर गाती थीं। गाते-गाते वे एकदम भावविह्वल हो जाती थीं। अक्सर रिकार्डिंग के समय कोई शब्द जीवंत हो उठता और वे भावावेश में चली जातीं। फिर उन्हें अपनी सुध-बुध नहीं रहती थी। स्वामी रामकृष्ण परमहंस जी की समाधि-अवस्था के विषय में पढ़ा-सुना था पर वह कैसी होती है, यह माताजी को देखकर ही समझ पाये। उस दिन फिर

रिकार्डिंग का काम आगे नहीं बढ़ता था। जीजी कहतीं, ''भाई साहब, अब तो कल ही होगा'' और हम लोग लौट आते।

उन दिनों कैसेट का प्रचलन खूब जोर-शोर से था। गीतों के व परम पूज्य गुरुदेव के प्रवचनों के कैसेट तैयार किये जा रहे थे। कैसेट के इनले कार्ड में परम पूज्य गुरुदेव का चित्र देने का निर्णय हुआ। जब माताजी को एक नमूना दिखाया गया तो माताजी ने कैसेट को उलट-पलट कर देखा और बोलीं, ''बेटा! मुझे और गुरुजी को कभी अलग मत करना।'' फिर बोलीं, ''बेटा, आने वाले समय में दुनिया अपनी समस्याओं का समाधान मेरे गीतों में और गुरुजी के प्रवचनों में ढूँढ़ेगी।''

मैंने उसे शिरोधार्य किया। सच तो है, शिव और शक्ति को भला अलग किया भी कैसे जा सकता है ?

तेरा डिब्बा नहीं चल रहा

अंतिम दिनों में माताजी बीमार रहने लगी थीं। निर्णय लिया गया कि माताजी को गर्मी के कारण बहुत परेशानी होती है, अत: उनके कमरे में ए.सी. लगाया जाये। माताजी के मना करने पर भी उनके कमरे में ए.सी. लगा दिया गया, पर वह हर दूसरे दिन खराब हो जाता था। मैं उसे चैक करता व चला कर जाता, पर अगले दिन फिर वही शिकायत मिलती। ए. सी. को ठीक करने के लिये अक्सर मुझे बुलाया जाता। मैं देखता, बाकी सब ए.सी. तो ठीक चल रहे हैं! बस माताजी का ही नहीं चल रहा। एक दिन माताजी मुस्कुराकर बोलीं ''लल्लू, तेरा डिब्बा नहीं चल रहा।'' मैंने नीचे का सिस्टम ऊपर फिट कर दिया, पर ऊपर जाकर वह भी नहीं चला।

मैं बहुत दिनों तक इसका रहस्य खोजता रहा। बहुत दिनों बाद एक दिन समाधान मिला कि यह तो उनकी माया थी। वह तो ब्राह्मणोचित जीवन जीने हेतु संकल्पबद्ध थीं। अत: बच्चों की भावना भी रख ली और अपना संकल्प भी निभाया।

गुरुजी-माताजी गुणों के भी पारखी थे।

मणि दीदी बताती हैं कि वे किसी के गुण को देखते तो उसकी प्रशंसा करते और अन्यों को भी उस गुण को धारण करने के लिये प्रेरित करते। उनकी निगाहें बड़ी पैनी थीं। एक बार गुरुजी किसी काम से नीचे आये थे। उन्हें प्यास

लगी तो यादव अम्माजी ने पानी पिलाया। गुरुजी गिलास देखकर बोले, ''वाह! गिलास तो खूब चमक रहा है।'' और पानी पीते-पीते ही उन्होंने उनके कमरे का निरीक्षण कर लिया। फिर एक दिन गोष्ठी में बोले, ''बेटा, स्वच्छता देखनी हो तो यादव अम्मा के घर जाकर देखो। विनम्रता सीखनी हो तो, रैणा की बहू (पत्नी) से सीखो। कपड़ों की धुलाई सीखनी हो तो शारदा अम्मा से सीखो।'' इस प्रकार वे सबके गुणों की प्रशंसा करते हुए गुण ग्राहकता सिखाते थे।

माताजी एक बार श्री चौहान जी की प्रशंसा करते हुए बोलीं, ''बेटा एक शबरी थी, जो मातंग ऋषि के आश्रम में सबके जगने से पहले ही रास्ता बुहार देती थी, और बेटा हमारे यहाँ, यह हमारे चौहान जी हैं।''

सब जानते हैं कि श्री चौहान जी का आजीवन यह नियम रहा। वे रात में दो-ढाई बजे ही उठकर शान्तिकुञ्ज क्षेत्र में प्रतिदिन झाड़ू लगाते थे।

अब तुम लोग भी भोजन कर लो

एक दिन चौके की एक बहन से चावल धोते समय हाथ से बाल्टी फिसल गई और बहुत सारा चावल, लगभग बाल्टी भर चावल नाली में बह गया। माताजी को पता चला तो उन्होंने देखा और सारा चावल इकट्ठा करके भर कर लाने को कहा। फिर बोलीं, ''अब इसे अच्छी तरह से धुलो फिर पकाओ। आज चौके की सब बहनें इसे ही खाएँगी।'' माताजी का आदेश भला कौन टाल सकता था? उस चावल को अच्छे से धोया गया और पकाया गया। बहनें सोच रही थीं कि आज नाली का चावल खाना पड़ेगा। माताजी ने देखा चावल पक गया है। बोलीं, ''छोरियो, एक थाली में थोड़ा भात परोस कर लाओ तो।'' माताजी को वह भात परोस कर दिया गया तो वे बड़े चाव से उसे खाने लगीं और बोलीं, ''बेटा! अन्न को बरबाद नहीं करना चाहिये। उसका अपमान नहीं करना चाहिये। इसे खाने से कोई बीमार नहीं पड़ेगा। अब तुम लोग भी भोजन कर लो।''

किसी के मन में कोई गलत भावना न आये, इसलिये माताजी ने पहले स्वयं उस भात को खाया, फिर सबको खिलाया। ❀

ऐसे ही सन् 1978 में जब बाढ़ आई थी, तब ब्रह्मवर्चस में पानी भर गया था। उस समय अधिकांश परिवार ब्रह्मवर्चस में ही रहते थे। दाल-चावल के कुछ बोरे आधे-आधे भीग गये। जब माताजी तक सब जानकारी पहुँची तो माताजी ने कहा, ''बेटा! सबको कह दो कि कुछ दिन तक

अपने-अपने घर में कोई खाना नहीं बनायेगा। सब खिचड़ी ही खायेंगे। घी मैं यहाँ से भेज देती हूँ।''

माताजी सबके मन की बात जान जाती थीं। एक दिन दोपहर में माताजी आराम कर रही थीं। एक बहन के मन में आया, ''माताजी मोटी हैं।'' इतने में माताजी बोलीं, ''तू सोचती है, माताजी मोटी हैं? कुछ काम नहीं कर पायेंगी? बेटा, मैं अभी भी 100 लोगों का खाना बना सकती हूँ।'' वह बहन बेचारी हैरान रह गई कि मेरे मन में विचार बाद में आया और माताजी ने जवाब उसके पहले ही दे दिया।

पहले सुबह-शाम की चाय-प्रज्ञा माताजी के चौके में ही मिलती थी। जब भीड़ बढ़ने लगी तब परिजनों की आवश्यकता को समझते हुए छोटी सी कैंटीन बना दी गई। उसमें चाय के साथ पकौड़ी व जलेबी आदि भी बन जाती थी। माताजी को पता चला कि लोग-बाग अनुष्ठान में भी भोजनालय से प्रसाद ग्रहण न कर कैंटीन में ही डटे रहते हैं। तब माताजी ने कहा था- ''बेटा, यह प्रसाद है। सूक्ष्म शरीर और कारण शरीर प्रसाद से बनता है। इसे जिस भाव से खाओगे, वही मिलेगा।''

गुरुजी माताजी का दाम्पत्य जीवन एक आदर्श दाम्पत्य जीवन था। हर एक के लिये प्रेरणा देता हुआ कि परस्पर एक दूसरे का सहयोग ही जीवन के बड़े उद्देश्यों की पूर्ति में सहायक होता है। इसी में जीवन का असली आनंद है।

परिजन तो बताते ही हैं, पर माताजी भी गोष्ठियों में बताया करती थीं कि मथुरा में प्रारंभ के दिनों में जब माताजी सबको भोजन आदि कराकर बरतन साफ करने बैठतीं तो गुरुजी भी उनकी मदद करने लगते। तब माताजी उन्हें कहतीं, ''आचार्य जी, आप रहने दीजिये।'' इस पर गुरुजी कहते, ''माताजी, हमारे बच्चे कैसे सीखेंगे कि पत्नी का सहयोग कैसे करना चाहिये?''

गुरुजी कभी-कभी गोष्ठी में कहते, ''बेटा, दाम्पत्य जीवन कैसा होना चाहिये, इसे हमारे जीवन से सीखना।''

माताजी की आँख का आप्रेशन हुआ था। मैं माताजी से मिलने गई। उस समय लगभग 11 बज रहे थे। गुरुजी उन दिनों सूक्ष्मीकरण साधना में थे। गुरुजी भी माताजी को देखने आये थे। मुझे पता नहीं था कि गुरुजी, माताजी के

पास बैठे हैं। दरवाजा हल्का सा खुला था। मैं जैसे ही भीतर जाने लगी देखा, गुरुजी, माताजी के पास बैठे हैं। मैं पीछे हट गई। गुरुजी के दर्शनों का लोभ करके मैं बाहर ही खड़ी रही, लौटी नहीं। मैंने देखा वे माताजी का हाथ थाम कर बैठे हैं। लगभग एक घण्टा गुरुजी, माताजी का हाथ थाम कर बैठे रहे पर दोनों में बातचीत कुछ भी नहीं हुई।

माताजी अक्सर गुरुजी को याद कर प्रवचन में बताया करती थीं, ''बेटा, दिन भर काम करके थक कर जब मैं ऊपर जाती तो गुरुजी पानी का गिलास भर कर रखते और सीढ़ियों के मध्य तक आते थे। मेरा हाथ थाम कर ऊपर ले जाते और बिठाते, फिर अपने हाथ से पानी का गिलास उठा कर देते।'' यह बताते हुए वे अक्सर रो पड़ती थीं।

''सूक्ष्मीकरण साधना में जब वे गये तो मिशन के सब कार्यों की जिम्मेदारी मेरे कंधों पर सौंप दी। मैंने कहा, ''आचार्यजी, यह सब मैं कैसे कर पाऊँगी?'' तो बोले, ''मैं जो तुम्हारे साथ हूँ।'' जब कभी मथुरा आदि जाना पड़ता तो वे ऊपर से खिड़की में से देखते रहते थे।'' ❁

कभी-कभी मथुरा के दिनों की याद कर बतातीं, ''बेटा, इस गायत्री परिवार को हमने और आचार्य जी ने अपने खून-पसीने से सींचकर खड़ा किया है। मथुरा में बंदर खूब परेशान करते थे। मैं खाना बनाती। गुरुजी परोसने में मदद करते। हाथ में लाठी भी रखते और बंदरों को धकेलते रहते।'' ❁

''मथुरा में घर छोटा ही था। लैट्रिन-बाथरूम भी कम थे। कभी-कभी, कोई-कोई बहन अपने छोटे बच्चों को छत पर ही टट्टी-पेशाब करा देती। अक्सर हमें धुलाई करनी पड़ती थी। गुरुजी पानी डालते थे और मैं झाड़ू लगाती थी। कभी-कभी मैं पानी डालती और गुरुजी झाड़ू लगाते थे। झाड़ू की रगड़ से हाथों मे छाले पड़ जाते और कभी-कभी खून भी आ जाता। बेटा, इस मेहनत और प्यार से हमने परिवार को जोड़ा है।'' ❁

''मैं जल्दी-जल्दी घर का सब काम निबटा कर गुरुजी के काम में मदद करने तपोभूमि पहुँच जाती थी। गुरुजी को पत्र व्यवहार में भी मदद करती थी। मैं पत्र पढ़ती जाती और गुरुजी जवाब लिखते जाते।'' ❁

एक बार हम सब कार्यकर्ताओं की गोष्ठी थी। गुरुजी ने कहा, ''बेटा, तुम सब लोग परस्पर प्रणाम करते हो कि नहीं। रोज सुबह अपने पति के चरण

स्पर्श किया करो।'' फिर भाईयों की ओर उन्मुख होकर बोले, ''तुम लोग भी पत्नी को प्रणाम किया करो। परस्पर एक दूसरे का सम्मान करना चाहिये। तुमको देखकर बच्चे स्वयं ही सीख जायेंगे।'' ❀

जयपुर के श्री वीरेंद्र अग्रवाल जी भी बताते हैं कि एक दिन जब मैं गुरुजी के पास बैठा था, गुरुजी ने किसी काम से अल्मारी खोली। मैंने देखा उनकी अल्मारी में माताजी की तस्वीर रखी है। मैं कुछ पूछता इससे पहले ही गुरुजी बोले, ''बेटा, मैं माताजी को रोज प्रणाम करता हूँ। अपने सब कार्यों के लिये मैं माताजी से ही शक्ति लेता हूँ।''

गुरुजी महिलाओं के प्रति बहुत संवेदनशील थे

समाज में फैली कुप्रथाओं और संकीर्ण सोच आदि के कारण महिलाओं की दासता जैसी स्थिति का ध्यान करने मात्र से उन्हें असहनीय वेदना होती थी। उनकी दयनीय स्थिति पर वे बहुत आहत होते थे। हम लोग जिनने उनका सान्निध्य पाया है, देखा है। जब कभी वे महिला उत्पीड़न संबंधी कोई समाचार पढ़ लेते थे, तब तो आकुल-व्याकुल हो जाते थे। उनकी आँखों में आँसू आ जाते थे। कहते थे, ''कब, मातृ शक्ति का उद्धार होगा?'' उनके साहित्य में भी उनकी यह पीड़ा देखने को मिलती है। ❀

गोष्ठियों में अक्सर भाईयों को डाँट पिलाते थे, ''तू गर्म-गर्म रोटी खाएगा और छोरी तेरे लिये बैठी रहेगी? बेटा! ये गर्म रोटी माँगे तो मुझे बताना।'' बहनों को भी उन्होंने खूब आगे बढ़ाया। सामान्य बातचीत में भी वे बहनों को खूब प्रोत्साहन देते रहते थे। ❀

ऐसे ही एक दिन शायद वे कुछ परेशान थे। कोई खबर पढ़ ली होगी। उस दिन कार्यकर्ताओं की गोष्ठी में भाईयों को डाँटते हुए बोले, ''अच्छा! गरम रोटी खाना है? गरम रोटी खाना है?'' फिर बहनों की ओर उन्मुख होकर बोले, ''कहना अभी देती हूँ। फिर पहले खुद खा लेना। अच्छे से चबाना।'' गुरुजी ने लगभग 5 मिनट चबाने की नकल की और फिर बोले, ''और मुँह में डाल देना। कहना, तुम चबाना भी मत। इतना कष्ट भी क्यों करते हो?''ooo

उन दिनों कानपुर का वह दिल दहला देने वाला समाचार सुर्खियों में था। जब एक ही परिवार की तीन लड़कियों ने दहेज की ऊँची माँगों से आहत होकर आत्महत्या कर ली थी। तब गुरुजी ने कहा था, ''यदि सब लड़कियाँ

दहेज लेकर शादी करने से इंकार कर दें, तो यह दहेज का दानव वर्ष भर में खतम हो जायेगा।''

पंडित लीलापत शर्मा जी ने भी एक बार ऐसा ही एक संस्मरण सुनाया था कि गुरुजी को बहनों का कष्ट बिलकुल सहन नहीं होता था। वे कहते थे, ''जब तक मातृशक्ति रोती रहेगी, समाज का उद्धार संभव नहीं है।'' उन्होंने बताया, ''एक बार हम और गुरुदेव असम की यात्रा पर थे। ट्रेन में एक महिला बहुत बड़ा घूँघट ओढ़े बैठी थी। वह बहुत दुखियारी जान पड़ रही थी, क्योंकि वह लगातार रोये जा रही थी। गुरुजी की दृष्टि से वह भला कैसे ओझल रहती? एक स्टेशन पर जब उसके साथ के परिजन नीचे उतरे तो गुरुजी ने उसे पानी पिलाया और चना मुर्रा खाने को दिया। उसका कष्ट पूछा पर वह अपने मुख से कुछ बता नहीं पाई। गुरुजी तो अंतर्यामी थे, उसे सांत्वना दी। बोले, ''रो मत बेटी, तेरा कष्ट दूर होगा।'' साथ ही कहा, ''यह घूँघट खोल दे।''

उस महिला ने बस इतना ही कहा, ''यह सब मुझे मार डालेंगे।'' तब गुरुजी ने कहा, ''मैं उन्हें समझाता हूँ।''

महिला के परिजन जब ट्रेन पर चढ़े तो गुरुजी ने उन्हें समझाया। ''मनुष्य-मनुष्य के बीच क्या परदा? परदा तो आँखों का होता है। शिष्ट व्यक्ति शालीन वैसे भी रहता है अन्यथा घूँघट से शर्म ढकी नहीं रह सकती आदि-आदि।''

गुरुजी की बात का उन लोगों पर ऐसा प्रभाव पड़ा कि उन्होंने वहीं पर उसका घूँघट खुलवा दिया। इस प्रकार गुरुजी रास्ते में भी जनकल्याण करते चलते थे। ❁

एक दिन माताजी से एक लड़की (माधवी) ने प्रश्न किया, ''माताजी विधवा औरतों को बिंदी आदि नहीं लगाना चाहिये?'' उसके इस प्रश्न पर माताजी बोलीं, ''बेटा यह गलत धारणा है। सुहाग कभी मरता नहीं है। इसलिये बिंदी लगाना नहीं छोड़ना चाहिये।'' ❁

1986 में हरिद्वार का कुंभ

1986 में हरिद्वार में कुंभ लगने वाला था। एक दिन गुरुजी ने ब्रह्मवर्चस की पूरी टीम को बुलाया और बोले, ''देखो! कुंभ लगने वाला है। इस समय हिमालय की बड़ी-बड़ी हस्तियाँ भी आयेंगी। ऋषि, मनीषी, तपस्वी सब किसी के भी रूप में आ सकते हैं। तुम लोग ऐसा करना कि जितने भी लड़के

हो, सब हर आने वाले के जूते साफ करना। रगड़-रगड़ कर ठीक से साफ करना। अच्छे से चमकाना, बिल्कुल धूल न रहे।'' फिर बहनों की ओर मुखातिब होकर बोले, ''लड़कियो! तुम सब लोग डॉक्टरों वाला कोट पहन लेना और गले में स्ट्रैथोस्कोप टाँग लेना। जो भी आये, उसको पूरा ब्रह्मवर्चस दिखाना और बढ़िया से सब बताना। अच्छे से समझाना।''

बहनों ने गुरुजी से कहा, ''गुरुजी, हम यह सब कैसे करेंगे?'' गुरुजी बोले ''बेटा, सब हो जायेगा।''

हम सब गुरुजी के कहे अनुसार सुबह से ही तैयार हो जाते। भाई लोग बहनों को खूब चिढ़ाते भी रहते, ''देखो! देखो! डॉक्टर लोग आ गये।'' एक दिन 10-12 लोगों की टीम आई। डॉ. दत्ता भाई साहब ने मुझे बुलाया और कहा, ''मणि जीजी, आप इन्हें गाइड करना।'' मैं उनसे बोली, ''भाई साहब, मुझे कुछ नहीं आता है। आप प्लीज़ मुझे माफ करिये। मुझे हिन्दी भी ठीक से बोलनी नहीं आती है। मैं नहीं कर पाऊँगी। आप ही कर दीजिये।'' दत्ता जी बोले, ''आपको गुरुजी पर भरोसा नहीं है क्या?'' और मुस्कुराते हुए बोले, ''हम तो भई अपना काम करेंगे। जूता साफ करेंगे।'' मैं बोली, ''गुरुजी पर तो भरोसा है।'' वे बोले, ''बस, फिर आप ही गाइड करेंगी।''

जैसे ही वो लोग आए। मैंने उन्हें एक घण्टा गाइड किया। पूरा ब्रह्मवर्चस दिखाया। मैंने उन्हें क्या-क्या बताया, मुझे खुद नहीं पता। अंत में उन्होंने मुझसे पूछा, ''आपने कहाँ से मैडिकल किया है? आप अपना परिचय दीजिये।'' मैं थोड़ा घबराई कि अब क्या बोलूँ? मैंने अपना थोड़ा बहुत परिचय दिया और फिर उनसे पूछा, ''आप सब कहाँ से आये हैं?'' उन्होंने बताया ''हम सब लखनऊ के मेडिकल कॉलेज से आये हैं। यह हमारी पूरी डॉक्टरों की टीम है।''

अब तो मैं घबरा गई। मुझे कुछ सूझा नहीं। मैंने एक मुहावरा सुना था, 'सिर पर पैर रख कर भागना' पर उसका अनुभव मुझे उस दिन हुआ। मैंने उनसे कहा, ''मुझे कुछ काम है, आगे की बात आपको डॉक्टर दत्ता बतायेंगे'' और मैं वहाँ से भाग ली। आज भी, मैं जब उस घटना को याद करती हूँ, तो गुरुजी के शब्द याद आते हैं, ''बेटा, तुम बस वह करो जो मैं कहता हूँ। मैं जिस चेतना का अवतरण करना चाहता हूँ, वह मैं करा दूँगा।'' ❁

श्री ब्रजमोहन गौड़

(श्री ब्रजमोहन गौड़ जी 1969 में ग्वालियर में पूज्य गुरुदेव के सम्पर्क में आये। तत्पश्चात् समयदान करते रहे, टोलियों में भी जाते रहे। 1981 में पूज्य गुरुदेव के कहने पर स्थाई रूप से परिवार सहित शान्तिकुञ्ज आ गये।)

उनसे क्या जुड़ा, धन्य हो गया

ग्वालियर में शिवरात्रि पर्व 1969 में पूज्य गुरुदेव के द्वारा गायत्री मंदिर में गायत्री माता की प्राण प्रतिष्ठा हुई। मैं यह सुनकर वहाँ गया था कि एक संत आ रहे हैं। मैं गुरु की खोज में था। मैंने पूछा कि आचार्यजी कहाँ हैं? एक परिजन ने बताया कि कमरे में हैं। उनके पास दो-तीन महिलाएँ बैठी थीं। उनमें से एक महिला ने पूछा कि गुरुजी! कल्याण में शंकराचार्य ने लिखा है कि महिलाओं को गायत्री नहीं जपनी चाहिए। गुरुदेव ने कहा बेटी, शंकराचार्य ने वेद नहीं लिखे हैं। मैंने वेदों का भाष्य किया है। महिलाओं को गायत्री जप करना चाहिए। मैं सुनकर कमरे से बाहर आया। थोड़ी देर बाद एक आवाज सुनाई पड़ी, जिन्हें पूज्य गुरुदेव से दीक्षा लेनी हो, वे यज्ञशाला में आ जाएँ।

मैं बहुत वर्षों से गुरु की खोज में था। अनेक साधु-संतों के संपर्क में आया पर अन्त:करण ने कभी किसी को गुरु मानने की स्वीकृति प्रदान नहीं की। उस दिन हृदय मचल उठा। अनुभूति हुई कि गुरुदीक्षा इसी क्षण ले लेनी चाहिए। मैं यज्ञशाला में जाकर बैठ गया और पूज्य गुरुदेव से दीक्षा ले ली।

अब पूज्य गुरुदेव का सूक्ष्म शक्ति प्रवाह उपासना के द्वारा प्रेरणा देता रहा। धीरे-धीरे तन-मन सब पूज्यवर के विचारों में रंगता गया। घर बैठे-बैठे ही परिव्राजक बन गया। 1974 में शान्तिकुञ्ज पहुँचा। तब पूज्य गुरुदेव से साक्षात्कार हुआ। उन्होंने पूछा, ''क्या काम करते हो?'' मैंने कहा, ''नौकरी।''

''कितने पैसे मिलते हैं।'' मैंने कहा, ''250 रुपये।'' उन्होंने कहा, ''तुम्हारा वेतन दुगुना करा देते हैं।'' मैंने कहा, ''रुपये नहीं चाहिए।'' उन्होंने कहा कि व्यापार करा देते हैं। मैंने कहा, ''वह मैं नहीं कर सकता।'' उन्होंने कहा, ''जमीन-जायदाद दिलवा देते हैं।'' मैंने कहा, ''नहीं चाहिए।'' उन्होंने कहा, ''सोना-चाँदी दिलवा देते हैं।'' मैंने कहा, ''हमें नहीं चाहिए।''

पूज्य गुरुदेव नाराज होकर बोले, ''हमें नहीं जानते? हमने मूँगफली बेचने वालों को लखपति बना दिया है। हम हिमालय से आए हैं। अभी हमने अपनी तपस्या का चार आने खर्च किया है, बारह आने अभी हमारी मुठ्ठी में है।'' फिर वे बोले, ''तुम कुछ माँगते क्यों नहीं?'' मैंने कहा, ''कुछ नहीं चाहिए।'' उन्होंने कहा, ''तुम्हें संसार में कुछ नहीं चाहिए?'' मैंने कहा, ''कुछ नहीं चाहिए।'' उन्होंने कहा, ''फिर तुम्हें ब्राह्मण, फकीर बना दें।'' मैं चुप रहा। उन्होंने कहा, ''बेटा, फकीर बनने से डर लगता है?'' मैं चुप रहा।

उन्होंने कहा, ''फकीर बनने से आदमी डरता है। सोचता है, रोटी कहाँ से मिलेगी? पर बेटा भगवान् अपने कुत्ते को भी रोटी खिला देता है और भक्त को तो स्वयं हाथों से खिलाकर खाता है।'' मैंने कहा, ''बना दीजिए।''

प्रतिवर्ष शान्तिकुञ्ज आने-जाने का क्रम चलता रहा। जब विदाई होती तब तिलक लगाते समय कहते, ''जा रहा है, जाना-आना बंद कर। जा रहा है तो यहाँ आना मत। आए तो कभी यहाँ से जाना मत।''

एक बार 1980 दिसम्बर में काँवट, जयपुर, राजस्थान में श्री वीरेन्द्र अग्रवाल जी के यहाँ पूज्य गुरुदेव शक्तिपीठ का उद्घाटन करने पहुँचे। मैं और अग्रवालजी प्रात:काल उनके दर्शन करने गये। प्रणाम करने के बाद गुरुदेव ने कहा, ''अब तूने यदि नौकरी नहीं छोड़ी तो हजार वर्ष तक मेरा शाप तुझे खाएगा, और नौकरी छोड़ देगा तो हजार वर्ष तक मेरा आशीर्वाद तुझे फलेगा। तू नहीं देखता, बेटा, हमने तूफान चला दिया है।''

मैं मार्च 1981 में शान्तिकुञ्ज आया। गुरुदेव बोले, ''नौकरी छोड़ दी।'' मैंने कहा, ''नहीं।'' उन्होंने कहा, ''बेटा, यहीं से अपना इस्तीफा भेज दो।'' मैंने नौकरी छोड़ दी। परिवार में परिजनों का बहुत विरोध था। मित्र परिजन भी बहुत विरोध में थे, पर अन्तरात्मा ने कहा, ''पूज्य गुरुदेव की आज्ञा मानने में ही कल्याण है।'' मैं गुरुदेव-माताजी की छत्रछाया में रहने लगा।

कुम्हार जैसे बर्तन तैयार करता है, वैसे ही पूज्य गुरुदेव का स्नेह-प्यार और डाँट मिलने लगी। धीरे-धीरे मिशन के कार्यों को करने की जिम्मेदारी बढ़ती गई। शान्तिकुञ्ज में ब्राह्मण जीवन जीने का प्रशिक्षण और अभ्यास होने लगा। मन में तृप्ति, तुष्टि, शांति आने लगी। जीवन की सार्थकता समझ में आने लगी।

इतने से कम में हमारा गुरु हमें नहीं मिला

बसंत पर्व 1990 में प्रातः, पूज्य गुरुदेव के पास गोष्ठी चल रही थी। गोष्ठी के बाद उन्होंने मुझे रोक लिया। गुरुदेव कहने लगे, ''तूने मुझे बहुत धोखा दिया है।'' मैंने कहा, ''समझ नहीं पाया।'' उन्होंने कहा, '' तू सबसे कहता है कि मैंने गुरुदेव के लिए नौकरी छोड़ दी पर तेरे दिमाग में तेरे बीबी-बच्चे बैठे रहते हैं। तू हमारा नहीं है।'' मैं चुप हो गया।

उन्होंने अपनी सूक्ष्म दृष्टि से मेरे अंतस में झाँक लिया था। मैं दुःखी हुआ और धर्मपत्नी से चर्चा करते हुए कहा कि यह जीवन तो बेकार हो गया, क्योंकि आज गुरुजी ने कहा कि हमारे दिमाग में बच्चों की चिन्ता रहती है।''

फिर दोपहर में मैं अपनी पत्नी के साथ गुरुदेव के पास पहुँचा। उन्होंने पूछा, ''क्या बात है?'' मैंने कहा कि मेरे दिमाग में अब बीवी-बच्चे नहीं हैं। उन्होंने कहा, ''इस छोरी के दिमाग में तो होगी।'' यह सुनकर मेरी पत्नी रोने लगी और कहा पिताजी मेरे दिमाग से भी बच्चों की चिन्ता समाप्त हो गई।'' पूज्य गुरुदेव ने कहा, ''झूठ बोलती है,'' मेरी पत्नी ने कहा, ''नहीं पिताजी। मैं सच बोलती हूँ।'' तब पूज्य गुरुदेव बोले ''आज से हम तुम्हारे हुए, इतने से कम में हमारा गुरु हमें नहीं मिला तो हम तुम्हें कैसे मिल जाते?''

मैंने कहा ''गुरुदेव एक प्रार्थना है। बच्चे पढ़े या न पढ़ें, शादी हो या न हो पर ये शान्तिकुञ्ज में मिशन का कार्य करें।'' गुरुदेव ने डाँट करके कहा, ''तूने फिर बच्चों की बात की'' मैंने हाथ जोड़कर कहा, ''गल्ती हो गई।'' गुरुदेव बोले, ''हमारी मर्जी, हम शादी करें या न करें, मैनेजर बनवाएँ या झाड़ू लगवाएँ, तू कौन होता है?''

ऐसे थे गुरुदेव, जिनसे जुड़कर यह जीवन धन्य हो गया। आज हम अनुभव करते हैं कि वे साक्षात् गुरुरूप में ईश्वर बनकर आए।

पूज्य गुरुदेव अव्यक्त इतने थे कि कोई जान नहीं पाया और महान इतने कि कोई समझ नहीं पाया।

पूज्य गुरुदेव अपना काम स्वयं ही करना पसंद करते थे।

उन्हें किसी से भी अनावश्यक सेवा लेना पसंद नहीं था। इस प्रकार अपने विराट परिवार को उन्होंने यह संदेश दिया कि जितना आवश्यक हो, उतनी ही सेवाएँ दूसरों से लो, बाकी काम स्वयं करो।

एक बार मैं गुरुजी के पास बैठा था। गुरुजी दाढ़ी बना रहे थे। जब वे दाढ़ी बना चुके तो ब्रश, पानी की कटोरी आदि उठाने के लिये मैं आगे बढ़ा, इसपर उन्होंने मुझे डाँट दिया। कहा, ''तुझे क्या मालूम ब्रश कहाँ रखना है? पानी कहाँ फेंकना है। तुझे क्या मालूम? तू बैठ।'' इस प्रकार वे अपना काम स्वयं ही करते थे। किसी की सेवा लेने के लिये तैयार नहीं रहते थे। ❁

ऐसे ही छत्तीसगढ़ के बिसाहू राम साहू अक्सर उनके बाल बनाया करते थे। वह जब कभी बाल बनाने के बाद दाढ़ी बनाने के लिए कहते, तो गुरुजी कहते, मैं खुद बनाऊँगा। कभी-कभी वह जिद पकड़ लेते ''मैं बना देता हूँ गुरुजी।'' तब वे झल्ला जाते और कहते-''तू मेरी दाढ़ी क्यों बनायेगा? क्या मैं नहीं बना सकता?

''तू मेरा सब काम करेगा, सब काम करेगा, जा! मेरा सब काम तू ही कर आ।'' अब तो बेचारे चुप हो जाते और चुपचाप चले जाते। धीरे-धीरे उन्हें मालूम हो गया था कि गुरुजी अपना वही काम दूसरों से कराते हैं जो वे खुद नहीं कर सकते। बाकी अपने सब कार्य वे स्वयं ही करते हैं। ❁

एक दिन शाम के लगभग 4:00 बजे थे। मैं उनके पास बैठा था। एक व्यक्ति उनके पास आया। उसने धोती-कुर्ता पहना था। कंधे पर साफा रखा था। गुरुजी ने पूछा, ''कहाँ से आये?'' वह बोला, ''हाथरस से आया हूँ।'' उसके पास एक छोटी सी थैली थी। जिसमें कुछ चीज रखी थी। उसने वह थैली उन्हें दी और चला गया।

गुरुजी ने थैली खोली, उसमें एक आम रखा था। गुरुजी बोले, ''वो एक ही आम दे गया। दो होते तो एक तू खाता, एक मैं।'' फिर वो उठे अल्मारी में से चाकू निकाला। आम को काटा और गुठली प्लेट में रखकर मुझे दे दी। फिर बोले, ''तू बहुत फायदे में रहा। आम के आम गुठली के दाम।''

कल्पना से बाहर की बात है। इतने बड़े सिद्ध पुरुष! स्वयं ने प्लेट निकाली, चाकू निकाला और स्वयं ही काट कर दिया। चाहते तो आदेश भी दे सकते थे। ❁

गायत्री माता के स्टेनो

एक दिन चर्चा के दौरान श्री राम खिलावन अग्रवाल जी ने मुझे बताया कि दिसम्बर 1977 में वे कुछ कार्यकर्ता गुरुजी के पास छत पर लेखन कर रहे

थे। उन दिनों पूज्यवर पूरी टीम को अपने पास बैठाकर लेखन सिखाते थे। उस समय उनसे मिलने का समय निर्धारित नहीं था, कोई भी, कभी भी मिलने चला आता था।

एक पाँच विषय के एम.ए. डिग्रीधारी व्यक्ति आये और गुरुजी से बोले-''गुरुदेव! मुझे अपना स्टेनो बना लें, आप जो भी बोलेंगे मैं लिख लूँगा और आपका काम आसान बना दूँगा।''

गुरुजी बोले, ''बेटा! तुम तो पाँच विषय में एम.ए. हो। मेरे पास तो छ:-सात विषय के एम.ए. भी आये थे।'' वे कुछ क्षण चुप रहे, फिर कहा-''मैं क्या करूँगा स्टेनो रखकर? मेरी एक मुसीबत है, और वो ये है कि मैं भी, किसी का स्टेनो हूँ। अब स्टेनो, स्टेनो कैसे रखे? वे (गायत्री माता) जो कहती हैं, वही मैं लिखता हूँ।''

वह व्यक्ति गुरुजी की सहजता पर दंग होकर चला गया। हम सबने एक दूसरे की ओर देखा। शायद सभी उनके शब्दों का अर्थ ढूँढ़ रहे थे।

उनके हर आचरण में कुछ न कुछ शिक्षण छिपा रहता था।

महापुरुष कितने विनम्र होते हैं, यह उनके व्यवहार से झलकता था। भारत माता मंदिर का उद्घाटन समारोह था। देश की प्रथम महिला प्रधानमंत्री माननीया इंदिरा गाँधी जी द्वारा उद्घाटन हुआ। स्वामी सत्यमित्रानंद जी ने पूज्यवर से भी इस संदर्भ में सलाह-मश्विरा किया था। निमंत्रण शान्तिकुंज भी आया था। तीन दिन का कार्यक्रम था। गुरुदेव ने तीसरे दिन मुझे बुलाया और कहा-''भारत माता मंदिर चलना है।'' मैंने कहा-''गाड़ी ले आऊँ।''
उत्तर मिला, ''पैदल चलेंगे। सन्तों के दर्शन पैदल चल कर ही करना चाहिए।''

हम दोनों पैदल भारत माता मंदिर के कार्यक्रम स्थल पर पहुँचे। बड़ी सहजता से उन्होंने मंच पर विराजमान सन्तों को प्रणाम किया और पण्डाल में अंतिम पंक्ति की कुर्सी पर विनम्रतापूर्वक बैठ गये।

स्वामी सत्यमित्रानंद जी के स्वयंसेवक सभी ओर फैले थे। चूँकि शान्तिकुञ्ज बहुत पास है, अत: बहुत से स्वयंसेवक गुरुदेव को पहचानते थे। उन्होंने मंच पर जाकर गुरुदेव के आने की सूचना दी।

''गायत्री वाले आ गये हैं, सबसे पीछे की अंतिम कुर्सी पर बैठे हैं।''

सुनकर सत्यमित्रानन्द जी गद्गद् हो गये। उस समय उनका ही

प्रवचन चल रहा था। उसे बीच में ही रोककर उन्होंने कहा, ''महापुरुष जब भी आते हैं, उनमें कभी कोई बनावट नहीं होती। ऐसी सहजता, सरलता कहीं देखने को नहीं मिलती। ऐसा ही एक महापुरुष हमारे आयोजन में, हमारे सौभाग्य से उपस्थित है। जो हमारे लिये ऐतिहासिक बात है। मैं आचार्य जी से कर-बद्ध प्रार्थना करता हूँ कि वे हमारे मंच की शोभा बढ़ाएँ और अपने आशीर्वचनों से हमें कृतार्थ करें।''

पूज्यवर उसी सहजता से उठकर मंच की ओर चल दिए। साथ में मैं भी था। स्वामी जी ने आचार्य जी को बैच लगाया व आशीर्वचन हेतु पुनः निवेदन किया।

पूज्यवर हर वस्तु में निर्माण की कल्पना करते थे। अतः इसे भी उसी दृष्टि से लेते हुए उन्होंने कहा-''देवियो-भाइयो! सप्तसरोवर क्षेत्र में अभी तक कोई दर्शनीय स्थल नहीं था। स्वामी जी ने भव्य मंदिर बनाकर यह कार्य पूर्ण किया। यह हिमालय का क्षेत्र है, इसमें केवल बड़े-बड़े जंगल ही थे। अब यह विशाल मंदिर इन्सान को देवता बनाने के कार्य में लगकर अपनी सार्थकता सिद्ध करेगा। सन्त, सुधारक, शहीद की पीढ़ियाँ प्रदान करेगा।''

बड़ी सहजता से भविष्य का निर्देशन भी दे दिया। ऐसी थी उनकी सहजता-सरलता। ❀

गुरुजी की सादगी के विषय में चाँदवानी जी बताते हैं कि सन् 1968 में जब पूज्यवर शान्तिकुञ्ज हेतु भूमि लेने आये थे। स्टेशन के पास ही काफी जमीन और मकान मिल रहे थे। पर उन्हें अपने गुरु का जैसा आदेश मिला, वैसा ही उन्होंने किया। सप्तऋषि आश्रम में, अनुसुइया कुटी में ठहरे। जब तक शान्तिकुञ्ज में उनके ठहरने लायक स्थान नहीं बना, तब तक गुरुदेव जब भी आते उसी कुटी में ठहरते थे।

सप्तऋषि आश्रम के पास की यह भूमि जो उस समय बहुत दलदली थी, खरीदी और इसी भूमि पर उन्होंने निर्माण करने की ठानी। श्री रामचन्द्र सिंह जी को उन्होंने कहा, ''एक साइकिल किराये से ले लो। किसी ठेकेदार को देखकर आते हैं।'' फिर उनको साथ लेकर चान्दवानी बिल्डर्स, ज्वालापुर, के पास गये। उन्हें लेकर आये, जमीन दिखाई। पूछा, ''यहाँ निर्माण कैसे हो सकेगा, बताओ?'' चाँदवानी जी ने जमीन देखकर कहा, ''यहाँ तो निर्माण

करना बहुत मुश्किल होगा और महँगा भी। आप कोई और जमीन देख लीजिये।'' गुरुजी ने कहा, ''हमें तो यहीं बनाना है। आप बताइये कैसे होगा?'' चाँदवानी जी ने कहा, ''आपको यहीं बनाना है, तो आप हमें छः महीने का समय दीजिये, तब हम बना सकते हैं।'' पूज्यवर बोले, ''आप छः माह लें या एक वर्ष, पर हमें बनाना यहीं है। बताओ, कैसे बन सकेगा?'' चाँदवानी जी ने कहा- ''हम यहाँ यूकिलिप्टस के पेड़ लगायेंगे। उससे पानी सुखायेंगे, तब निर्माण हो सकेगा।'' गुरुजी ने कहा, ''ठीक है, जैसा आप उचित समझें।'' फिर यहाँ एक हजार यूकिलिप्टस के पेड़ लगाये गये। तब कहीं जाकर ज़मीन का कुछ पानी सूखा और ईंट गारा रखने लायक जगह बनी। फिर यहाँ निर्माण कार्य सम्पन्न किया गया।

चाँदवानी जी बताते हैं कि निर्माण के बाद भी गुरुजी उनके पास अक्सर आया करते थे। उनसे पारिवारिक सम्बन्ध बन गये थे। गुरुजी उनके घर भी आया करते, और सब जनों के हाल-चाल पूछते। सबको प्यार-आशीर्वाद लुटाते। शान्तिकुञ्ज में उस समय कार भी आ गयी थी, परन्तु वे फिर भी रिक्शे से ही उनके पास आते-जाते। ऐसे सादगी-सम्पन्न थे पूज्य गुरुदेव। ❁

ऐसे ही सन् 1982 की बात है। खड़खड़ी में **श्री रामकिंकर उपाध्याय जी** की कथा का आयोजन था। आयोजकों ने शान्तिकुञ्ज में भी निमंत्रण भेजा था। एक दिन गुरुजी ने मुझे बुलाया और कहा, ''उन्होंने बहुत बार बुलाया है, उसमें चलना है।'' उस समय तक शान्तिकुञ्ज में कार नहीं थी। सामान ढोने वाला एक टैंपो था, उसे बुलवाया। उन दिनों भास्कर जी चालक थे। गुरुजी उनके बगल वाली सीट में बैठ गए। हम दो-तीन लोग पीछे बैठ गए। जब उसे स्टार्ट किया तो वो बंद हो गया। गुरुजी बोले, ''अरे बच्चो! उतरो, धक्का लगाओ।'' धक्का लगा कर गाड़ी को स्टार्ट किया और उस आश्रम में पहुँचे जहाँ कथा हो रही थी। कथा चल रही थी। गुरुजी बोले, ''देखो, कथा चल रही है। चुप-चाप चलकर पीछे बैठ जाना।'' उनकी स्वयं की महानता इतनी बड़ी कि स्वयं भी चुप-चाप हमारे साथ पीछे बैठ गये।

व्यास पीठ से उस युग के सबसे बड़े, विश्वप्रसिद्ध कथावाचक, श्री रामकिंकर उपाध्याय जी ने देख लिया। उन्होंने कथा को विराम दिया और मंच से कहा, ''हम सबका सौभाग्य है कि हमारे देश के महापुरुष, संत हमारे बीच

आये हैं। जिन्होंने गायत्री और यज्ञ को जन-जन तक पहुँचाया है। जिनके लाखों-करोड़ों शिष्य हैं, भक्त हैं। मैं उनसे प्रार्थना करता हूँ कि वो मंच पर आ जायें।'' भीड़ मुड़ कर देखने लगी, ''कौन आया?'' पर गुरुजी तो सबसे पीछे बैठ गए थे। दिखाई नहीं पड़े। गुरुदेव ने हाथ जोड़ कर संकेत किया कि मैं ठीक हूँ। आप कथा प्रारंभ करिये। लेकिन रामकिंकर जी ने कहा, ''जब तक आप आगे नहीं आयेंगे, मैं कथा प्रारंभ नहीं करूँगा।''

गुरुजी आगे जाकर अग्रिम पंक्ति में बैठ गए। मंच पर फिर भी नहीं बैठे। रामकिंकर जी गुरुदेव को पहचान गये थे, अत: कथा कहते-कहते उन्होंने कहा ''आज का दिन मेरे जीवन का सबसे बड़ा सौभाग्य का दिन है। देश-विदेश में जिनकी कथा मैं कहता आया हूँ, आज वो स्वयं मेरी कथा श्रवण करने के लिये मेरे सम्मुख बैठे हैं।'' ❁

महापुरुष कितने अव्यक्त होते हैं, यह पूज्यवर के पास ही देखने को मिला। उनकी सादगी से हर कोई चकित हो जाता था। उनकी सादगी देखकर पहली नजर में तो किसी को विश्वास ही नहीं होता था कि वे ही गुरुजी हैं।

एक बार लन्दन से एक व्यक्ति गुरुजी से मिलने आया। मैं ऊपर ही बैठा था। साथ में दो तीन व्यक्ति और थे। उस समय कोई भी, कभी भी गुरुजी के पास चला जाता था। वह भी ऊपर आया पर गुरुजी को वह पहचानता नहीं था। आकर गुरुजी से बोला, ''मैं गुरुजी से मिलना चाहता हूँ।'' गुरुजी ने उत्तर दिया, ''मुझे ही लोग गुरुजी कहते हैं।'' उनकी सादगी व वेश-विन्यास देखकर उसे विश्वास ही नहीं हुआ। शायद मन में किसी जटाजूटधारी की कल्पना थी, अत: उसने फिर कहा, ''मैं पंडित श्रीराम शर्मा आचार्य जी से मिलना चाहता हूँ।''

गुरुजी ने उत्तर दिया, ''हाँ भई! मैं ही आचार्य श्रीराम शर्मा हूँ।''

कुछ देर तक तो वह हैरानी से उन्हें देखता ही रह गया। फिर बोला, ''इतने बड़े महापुरुष! इतने सरल, इतने सीधे-साधे भी हो सकते हैं क्या?'' उसने उन्हें प्रणाम किया और उनके चरणों में ही बैठ गया। उठाये नहीं उठ रहा था। पूज्यवर ने ही स्नेहपूर्वक उसे उठाया। उसने अपनी जिज्ञासाओं का समाधान पाया और उनकी सहजता को हृदय में धारण कर शान्तिकुञ्ज से विदा हुआ। ❁

श्रीमती श्रीदेवी यादव

(श्रीमती श्रीदेवी यादव माताजी सन् 1962 में गुरुदेव से मिलीं। मथुरा आती-जाती रहीं। सन् 1982 में गुरुदेव के बुलाने पर पूर्णरूप से शान्तिकुञ्ज आ गईं।)

गुरुजी से बातचीत

श्रीदेवी अम्माजी बताती हैं कि 1958 का यज्ञ होने वाला था। उसके लिये गायत्री मंत्र लेखन अभियान चल रहा था। एक राव जी साहब हमारे घर आते थे, उनके कहने पर मैंने मंत्र लेखन किया, पर कुछ दिनों बाद ही राव जी का देहांत हो गया और हम उस यज्ञ में शामिल नहीं हो पाये। बाद में सन् 1962 में पिताजी के साथ मैं, मथुरा में गुरुजी से मिली। गुरुजी ने हाल-चाल पूछा। बहुत कम उम्र में ही मेरे पति चल बसे थे। गुरुजी ने कहा, ''बेटी, तेरा मन नहीं लगता, तो तू मेरे पास आ जाया कर।'' फिर तो हमारा आना-जाना लगा ही रहता। गुरुजी खूब बातचीत करते और खूब प्यार देते। सत्र पूरा होने के बाद भी हम कई-कई दिन तक गुरुजी के पास गायत्री तपोभूमि, मथुरा में रुक जाते थे। मैं गुरुजी के पास बैठी रहती, वे अपना लेखन, लोगों से मिलना-जुलना आदि काम करते रहते।

एक दिन गुरुजी ने मुझे अपने पास बिठाया। मैं गुरुजी के पास ही तखत पर बैठ गई। गुरुजी ने कहा, ''तुम रामायण पढ़ती हो, सो ठीक है। गीता पढ़ती हो, वो भी ठीक है। द्वादश अक्षरी (ॐ नमो भगवते वासुदेवाय नमः।) जपती हो ये भी अच्छी बात है। एक माला गायत्री मंत्र की और कर लिया करना।'' मैंने कहा, ''गुरुजी, मैं 24 बार तो जपती हूँ।'' गुरुजी बोले, ''एक माला कर लिया करना।''

फिर गुरुजी ने मुझे अपने पास बिठाया और रामायण की कुछ चौपाइयाँ बोलने लगे, ''परपति रति करईं, रौरव नरक कलप सत परहिं....आदि, आदि।'' और बोले, ''तू इन सबका चिंतन क्यों करती रहती है? विधवा होने के कई एक कारण होते हैं। तू ऐसा सब क्यों सोचती रहती है?'' मैं गुरुजी की बात सुनकर हक्की-बक्की रह गई। ''गुरुजी मन की बात भी पढ़ लेते हैं! मेरे हृदय की सब बात जान रहे हैं!''

मैंने गुरु जी से पूछा, ''गुरुजी, मेरा भविष्य कैसा निकलेगा?'' गुरुजी बोले, ''तेरा भविष्य मैंने बना कर रख दिया है। तू चिंता मत कर।''

एक दिन बात करते-करते मैंने गुरुदेव के दोनों हाथ पकड़े और पूछा, ''गुरुजी आप कौन हैं ? गुरुजी बड़े सहज ढंग से अपनी ओर इशारा करते हुए बोले, ''देखती नहीं, मैं कौन हूँ ?'' मैंने कहा, ''गुरुदेव, सब तो आपको भगवान् कहते हैं।'' गुरुजी बोले, ''हाँ बेटा, तेरा तो मैं भगवान् ही हूँ। तुझे भगवान् से मिलाऊँगा और भगवान् के कंधों पर बिठाऊँगा भी।'' यह कहकर गुरुदेव हँसने लगे, पर उस दिन से आज तक, मैं जब ध्यान करती हूँ तो मुझे गुरुजी ही दिखाई देते हैं। गायत्री माता या और कोई देवी-देवता नहीं। ०००

एक बार मैं और पिताजी शान्तिकुञ्ज आये हुए थे। पिताजी ने गुरुजी से कहा,''गुरुजी, हमारा तो समय अब नजदीक है, आप इसका ध्यान रखना।'' गुरुजी बोले, ''हाँ, मैं ध्यान रखता हूँ। अब मैं क्या करूँ ? क्या दूँ... देने के लिये ? हाँ, देने लायक जो है वो दूँगा, साहस दूँगा, धैर्य दूँगा।'' वास्तव में मैंने देखा, मेरे पास हिम्मत बहुत है।

दिव्य आनंद

गुरुजी बार-बार आने के लिये कहते थे, सो पिता जी की मृत्यु के बाद सन् 1982 में मैं शान्तिकुञ्ज आ गई। एक बार मैंने गुरुजी से कहा, ''गुरुजी, आप मेरा ध्यान रखना।'' गुरुजी बोले, ''बेटा! मैं धोखा देने वाला आदमी नहीं हूँ। तुमने मेरा पल्ला पकड़ा है तो निराश नहीं होने दूँगा। किसी को तुझे सताने नहीं दूँगा। ध्यान तो मैं तेरा पहले भी रखता था, अब विशेषकर रखूँगा। सूक्ष्म शरीर से सौ वर्ष तक तुम्हारे साथ रहूँगा।'' फिर उन्होंने मेरे सिर पर हाथ फेरा और कान में उँगली डाली। मुझे बड़ी दिव्य अनुभूति हुई। ऐसा लगा जैसे मेरे चारों ओर आनंद ही आनंद छा गया। हर क्षण गुरुदेव की निकटता का आभास होता रहा। ऐसा लगता रहा जैसे सर्वत्र गुरुजी ही गुरुजी छाये हैं। तीन दिन तक मैं उस दिव्य आनंद, अलौकिक आनंद की मस्ती में डूबी रही।

हर पल संरक्षण

एक बार मैं बद्रीनाथ गई। पिताजी बद्रीनाथ का विवरण सुनाते थे। रास्ते में बहुत ऊँची-ऊँची पहाड़ियाँ हैं, गहरी खाइयाँ हैं। मैं सोचती थी जाने कैसा लगता होगा ? बस में से जब मुझे गहरी खाई दिखाई दी तो मुझे बहुत डर लगने लगा। साँस फूलने लगी, घबराहट होने लगी। इतने में मुझे लगा जैसे खिड़की में गुरुजी खड़े मुस्कुरा रहे हैं। मैंने गौर से देखा तो ओझल हो गये। फिर

थोड़ी देर में लगा जैसे खिड़की में गुरुजी हँस रहे हैं। तीन-चार बार गुरुजी मुझे खिड़की में हँसते, मुस्कुराते दिखाई दिये। उनकी इस आँख-मिचौनी में और उनके दर्शन करके मेरा मन इतना प्रसन्न हो गया कि मेरा सारा डर कहाँ चला गया, मुझे पता ही नहीं चला। फिर रास्ते भर मुझे डर नहीं लगा। ❀

हमारे पिताजी के पास काफी जमीन-जायदाद थी। पिताजी की अकेली संतान होने के नाते मैं उसकी अकेली वारिस थी। पिताजी के बाद सब संपत्ती मुझे मिलेगी यह सोचकर, हमारे ही परिवार के कुछ लोगों ने मेरी हत्या करने की साजिश रची। वे लोग मुझे कभी-कभार कह भी देते थे कि अकेली वारिस हो, कोई मार डाले तो? पर मेरे मन में शंका तो दूर ऐसा कोई ख्याल भी नहीं आया कि इनकी बात में कोई सच्चाई भी हो सकती है।

सन् 1977 में परम वंदनीया माताजी का पत्र आया। लिख था, ''तू शान्तिकुञ्ज आ जा। गुरुदेव चिंता करते हैं। कहते हैं, छोरी वहाँ अकेली है, कोई गला घोंट देगा।'' कुछ दिनों बाद वीरेश्वर भाई साहब कार्यक्रम के लिये हमारे क्षेत्र में आये तो उनके पास भी संदेश दिया और कहा, ''लड़की वहाँ अकेली पड़ी है, देखकर आना और उसे आने के लिये कहना।'' मैंने भाई साहब को शान्तिकुञ्ज के लिये कुछ अनुदान दिया और कुछ दिन में अपना काम समेट कर आने का संदेश दिया। सप्ताह भर बाद मैं शान्तिकुञ्ज आ गई, और आने के कुछ ही दिनों बाद मुझे समाचार मिला कि हमारे घर की एक बहू की हत्या हो गई है। बाद में उस बहु के मायके वालों के द्वारा यह रहस्य खुला कि पैसा तो मुझे मारने के लिये दिया गया था और धोखे से उनकी बेटी की हत्या हो गई। इस प्रकार पूज्य गुरुदेव ने दूर रहते हुए भी आने वाली विपत्ती की ओर संकेत ही नहीं किया बल्कि मेरी रक्षा भी की। ❀

सन् 1981 में एक दिन शिकोहाबाद, जि. फिरोजाबाद में हमारे पैतृक घर में डाकू आ गये। घर में पिताजी, मैं और एक दो लोग और थे। लगभग रात हो गई थी। हम लोग चारपाई पर मच्छरदानी लगाकर सोने ही जा रहे थे कि डाकू घर में घुसे, उनके हाथ में बंदूकें थीं। सामने के रास्ते से पुलिस वाले अक्सर आया-जाया करते थे। वे लोग कभी-कभी पानी पीने के लिये घर में भी आ जाते थे। हमने सोचा पुलिस वाले होंगे। इतनी देर में वह लोग आँगन में हमारी चारपाई के पास आ गये। मच्छरदानी खींच कर एक तरफ कर दी और

बंदूकें तान कर बोले, ''हम आप लोगों को कुछ नहीं कहेंगे, बस पानी पिला दो।'' जब तक हमने उन्हें पानी पिलाया उन्होंने घर का जायजा ले लिया कि घर में कितने लोग हैं। दो लोग हमारे ऊपर बंदूकें ताने खड़े रहे। बाकी लोगों ने, जो कुछ उनके काम की चीज घर में मिली, उसे बाँध लिया। घर में 15-20 तोला सोना रखा था। जहाँ वह रखा था, वहीं काष्ठ पात्र आदि पूजा के बर्तन रखे थे। डाकुओं ने सोचा यहाँ तो सब पूजा का सामान है और उस अल्मारी की ज्यादा छान-बीन नहीं की। इस प्रकार जेवर आदि सब बच गये। घर में कुछ विशेष सामान था नहीं, सो डाकुओं को ज्यादा कुछ मिला नहीं। वे पिताजी के पास आकर बोले, ''इतना बड़ा घर है, पैसा भी खूब होगा। बताओ कहाँ है?'' पिताजी ने कहा, ''मैं तो अपने पास कुछ रखता नहीं, ये मेरी बेटी है इसी को सब दे देता हूँ। इसीसे पूछ लो।'' उन्होंने मुझसे पूछा, ''माताजी, पैसा तो बहुत होगा आपके पास, कहाँ रखा है?'' घर में कुछ विशेष पैसा तो था नहीं। मैंने उन्हें सब सच-सच बता दिया कि पैसा तो हमारे पास बहुत है, पर घर में नहीं है। सामने जो इंटर कालेज है, कुछ पैसा उसको बनवाने में लगा दिया। कुछ पैसा, शान्तिकुञ्ज, हरिद्वार, में हमारे गुरुजी रहते हैं, उन्हें दे दिया। अपने खर्चे के लिये जो रखा है, वह बैंक में जमा है। घर खर्च के लिये थोड़ा सा पैसा घर में है, वह सामने कोठरी में पूजा के पास डब्बे में पड़ा है। वह पैसा डाकुओं को पहले ही मिल गया था। मेरी बात सुनकर डाकुओं में से एक ने कहा, सबको कमरे में बंद कर दो। इतने में, किसी एक डाकू की नजर छत पर पड़ी। उसे लगा वहाँ कोई है। उसने पूछा, ''घर में और कौन-कौन है?'' हमने कहा, ''हमारे अलावा और कोई नहीं है।'' वह बोला, ''छत पर कौन है?'' हमने कहा, ''कोई नहीं है।'' पर डाकुओं को छत पर कोई सफेद धोती-कुर्ता पहने, हाथ में बड़ा सा डंडा लिये खड़ा दिखाई दे रहा था। वे बोले, ''छत पर सफेद धोती-कुर्ते वाला कौन है? ऊपर जाने का रास्ता किधर है?'' और घर के एक व्यक्ति को आगे करके वे सीढ़ियों की तरफ गये। वे सीढ़ियाँ चढ़ ही रहे थे कि पता नहीं क्या हुआ वे हाँफते हुए और डर के मारे काँपते हुए, उल्टे पैरों भागे और भागते ही चले गये। घर का जो कुछ सामान उन्होंने पोटलियों में बाँधा था, उसे भी थोड़ी दूर जाकर एक पेड़ के नीचे छोड़ गये। इस प्रकार पूज्य गुरुदेव ने घर में घुस आये डकैतों को भगाया। ❀

डॉ. ओ. पी. शर्मा एवं डॉ. गायत्री शर्मा

(डॉ. ओ. पी. शर्मा जी एवं डॉ.गायत्री शर्मा 1980 में पूज्य गुरुदेव के सम्पर्क में आये। उसके बाद लगातार संपर्क में रहे, टोलियों में भी जाते रहे। 1989 में डॉ. ओ. पी. शर्मा जी स्थाई रूप से शान्तिकुञ्ज आ गये।)

मन की बात सुनने वाले हमारे गुरुदेव

बात जनवरी 1981 की है, परम पूज्य गुरुदेव सुल्तानपुर गायत्री शक्तिपीठ व गायत्री प्रज्ञापीठ में प्राण प्रतिष्ठा के कार्यक्रम हेतु आये थे। वहाँ से उन्हें लखनऊ जाना था। हम दोनों के मन में प्रेरणा हुई कि गुरुजी को लखनऊ तक विदा करने चला जाय। उन दिनों हम दोनों महिला और पुरुष चिकित्सालय में अधीक्षक के पद पर तैनात थे, सो छुट्टी बड़ी मुश्किल से मिलती थी, लेकिन उस दिन रात में सी. एम. ओ. से बात हुई और छुट्टी मिल गई। हम दोनों जब विदाई स्थल पर पहुँचे तो वहाँ बहुत भीड़ थी। हम दोनों दूर से ही एक ऊँचे स्थान पर खड़े हो कर गुरुवर को देखने लगे। हमने सोचा, जैसे ही गुरुदेव उठेंगे, हम अपनी कार में बैठ कर उनकी गाड़ी के पीछे चल देंगे।

गुरुदेव को लेने के लिये लखनऊ से कई गाड़ियाँ आई थीं। हम सोच रहे थे कि यदि गुरुदेव हमारी कार में बैठ कर चलते, तो हमारा कितना सौभाग्य होता? गुरुदेव के उठते ही हम अपनी कार के पास पहुँच गये। गुरुदेव आये और हमारी कार के पास आकर खड़े हो गये और बोले, ''हम इसी में बैठेंगे।'' डॉ. शर्मा जी ने कार का दरवाजा खोला और गुरुदेव उसमें बैठ गये। हमारी खुशी का ठिकाना नहीं था। मन ही मन हम सोच रहे थे कि हम कितने सौभाग्यशाली हैं, जो गुरुवर ने हमारे मन की बात बिना कहे ही पढ़ ली और हमारी अभिलाषा पूरी की।

रास्ते में एक जगह गुरुदेव ने कार रोकने को कहा। कार जहाँ रुकी थी, वहाँ दूर-दूर तक कोई नहीं दिख रहा था, पर अचानक पता नहीं कहाँ से पंद्रह-बीस लोग आरती का थाल ले कर आ गये। उन्होंने गुरुवर की आरती उतारी। गुरुदेव ने उन सभी से घर वालों के नाम ले-लेकर सब का हाल-चाल पूछा। हमें आश्चर्य हुआ कि अभी तो कोई नहीं था, अचानक ये लोग कहाँ से आ गये

और गुरुदेव को इनके घरवालों के, पत्नी-बच्चों के जो यहाँ हैं भी नहीं, नाम कैसे याद हैं? यह सब देखकर हम उनकी सर्वज्ञता के आगे नतमस्तक थे।

पत्ती-पत्ती में गुरुदेव

गायत्री दीदी बताती हैं कि अपने पिता के घर में, बचपन में मैं एक फोटो टँगी देखती थी। जिसमें एक कदम्ब के पेड़ के नीचे राधा-कृष्ण खड़े थे और उस वृक्ष के प्रत्येक पत्ते में भी वही राधा-कृष्ण बने थे। मैं सोचती थी कि पत्ती-पत्ती में भगवान कैसे हो सकते हैं? इसकी स्पष्ट अनुभूति मुझे उस समय हुई जब हम गुरुदेव को लखनऊ छोड़ कर वापिस लौटे।

परम पूज्य गुरुदेव को विदा करके डॉ. शर्मा जी और मैं जब सुल्तानपुर के लिये रवाना हुये तो मन बहुत भारी था, लग रहा था जैसे कुछ छूटा जा रहा है। प्रात:काल का समय था और पूज्य गुरुदेव की बहुत याद आ रही थी। भारी मन से रास्ते के पेड़ों को देखते हुए जा रही थी कि अचानक अन्त:करण में प्रेरणा आयी कि गुरुवर तो पत्ती-पत्ती में विराजमान हैं और मुझे ऐसा प्रतीत भी होने लगा, ठीक वैसे ही जैसे बचपन में पत्ती-पत्ती में राधाकृष्ण को देखती थी।

यह भाव इतना प्रबल था कि आँखों से अश्रु झरने लगे। डॉ. शर्मा जी ने पूछा, ''रो क्यों रही हो?'' हमने कहा, ''भगवान् गुरुदेव के रूप में आये हैं। वह पत्ती-पत्ती में विराजमान हैं, ऐसा हमें अनुभव हो रहा है और ये दु:ख के नहीं खुशी के आँसू हैं कि भगवान् ने गुरुवर के रूप में हम लोगों को दर्शन दिया है।''

यह अनुभूति इतनी स्पष्ट, इतनी सजीव थी कि इसे वाक शक्ति से बताया नहीं जा सकता। उसी दिन अन्दर से संकल्प जागा कि दोनों या दोनों में से कोई एक परम पूज्य गुरुदेव के चरणों में आजीवन समर्पित हो कर उनका कार्य करेंगे। बच्चे छोटे थे, एक पहली में और दूसरा पाँचवी में पढ़ रहा था और मुझे निर्देश हुआ कि अपनी जिम्मेदारी पूरी करने पर ही आयें। यह अनुशासन मान कर एक के आने का दृढ़ निश्चय हो गया और डॉ. शर्मा जी शान्तिकुञ्ज आ गये और हम वहीं रह कर पारिवारिक जिम्मेदारी, चिकित्सक की नौकरी और गुरुवर का कार्य करते रहे। कण-कण में उनके स्वरूप की वह अनुभूति आज भी ज्यों की त्यों मन में सजीव है।

हम भगवान से लेना जानते हैं

27 अप्रैल 1981 को बस्ती में प्राण-प्रतिष्ठा का कार्यक्रम था। कार्यक्रम के पश्चात् पूज्यवर जब लोगों से मिलने के लिये बैठे तो हमसे बोले, ''तुम हमारे पास खड़े रहना और लोगों को दवा लिख देना।'' हम सोचने लगे, ''हम क्या दवा लिखेंगे?'' खैर हम उनके पास खड़े हो गये। लोग अपनी-अपनी समस्या कहते और गुरुदेव आशीर्वाद दे देते। कोई गंभीर बिमारी से पीड़ित था, तो उसे भी गुरुदेव ने आशीर्वाद दे दिया। कार्यक्रम समाप्त होने के बाद निवास स्थान पर जाकर हमने गुरुदेव से निवेदन किया कि गुरुदेव, बीमारी कैसे ठीक होगी? गुरुदेव ने कहा, ''बेटा, करता तो भगवान है। लोग भगवान से लेना नहीं जानते। हम उनसे लेना जानते हैं, हम उनसे कहते हैं, वो करते हैं।''

उनके यह शब्द सुनते ही मेरी शंका का समाधान हो गया और मुझे एम.बी.बी.एस में पढ़े हुए वे शब्द याद हो आये, ''हार्ट कैसे कार्य करता है यह विज्ञान का विषय है, लेकिन हार्ट किसने बनाया? सर्जन कट्स एण्ड गॉड युनाइट्स''

1982 जनवरी में, मैं 15 दिन के प्रज्ञा-पुराण प्रशिक्षण हेतु सुल्तानपुर से शान्तिकुञ्ज आया था। 5-6 दिन बाद लगभग नौ बजे के करीब हम गुरुदेव के पास बैठे थे कि श्री रामजनम वर्मा जी अपने आठ वर्ष के बेटे को लेकर आये और कहा, ''गुरुजी, इसकी साँस फूलती है।'' गुरुदेव ने कहा, ''अभी से साँस फूलेगी तो क्या होगा? हम अपने कंधों पर ले चलेंगे, गायत्री माता से कह देंगे ठीक हो जायेगा।'' उस समय पूज्यवर कमरे में टहल रहे थे, थोड़ा रुके और कागज पर लिखा शितोप्लादि चूर्ण, एक चम्मच सुबह-शाम, आशीर्वाद और अपना हस्ताक्षर करके दे दिया। उस घटना को देखकर मन में आया यह कैसे ठीक हो जायेगा? जबकि इसे रिह्यूमेटिक हार्ट की बीमारी जान पड़ती है। पूज्यवर ने मेरे मन की बात शायद पढ़ली और मुझे कहा, ''माताजी के पास चले जाओ।'' माताजी ने मुझे चाय पिलायी और बोलीं, ''तुम्हें गोष्ठी लेने पशुलोक जाना है।'' बात मेरी समझ में आ गई कि मुझे क्यों भेजा जा रहा है? श्री रामजनम वर्मा जी पशुलोक में ही रहते थे।

वहाँ जाकर, मैंने सबसे पहले बच्चे का परीक्षण किया। उसे वही दिल की बीमारी निकली, जो मैंने सोची थी। 15 दिन बाद मैं सुल्तानपुर वापिस आ

गया। कुछ वर्षों बाद जब रामजनम वर्मा जी से बच्चे की बीमारी के विषय में चर्चा हुई, तो उन्होंने बताया कि वह तो पूर्णत: स्वस्थ है, कोई दवा नहीं ले रहा है और उन्होंने गुरुवर की दवा के अलावा और कोई दवा भी नहीं की। आज वह बालक इंजीनियर है। प्राणशक्ति अनुदान क्या है, इसे मैंने पहली बार अनुभव किया। बाद में तो मैंने ऐसे बहुत से केस देखे, जब पूज्यवर ने मात्र आशीर्वाद से ही रोग को ठीक कर दिया।

जीवन दान देने वाले महाकाल

डॉ. गायत्री शर्मा बताती हैं कि बचपन में एक दिन मेरी माँ मेरे बड़े भाई की कुण्डली एक पंडित जी को दिखा रही थीं। हमने कहा, ''पंडित जी, मेरी भी कुण्डली देखकर बताइये, हम क्या बनेंगे?'' पंडित जी ने मेरी माँ से कहा, ''बिटिया की उच्च शिक्षा और राज योग है, लेकिन भरी जवानी में मृत्यु योग है।'' बात आई गई हो गई।

1982 में हम पूज्य गुरुदेव के समक्ष बैठे थे, परम पूज्य गुरुदेव ने पूछा, ''तुमने डॉ. साहब को रोटी बनाना और चाय बनाना सिखाया या नहीं।'' हमने सोचा, शायद इसलिये कह रहे हैं कि उन्हें शान्तिकुञ्ज में अकेले रहना है, लेकिन उनकी इस बात का रहस्य तब खुला, जब डॉ. साहब को पूरी गृहस्थी सँभालनी पड़ी। घटना अप्रैल, 1983 की है। हम जिला सुल्तानपुर में तैनात थे। डॉ. शर्मा जी टोली में चल रहे थे, हमने नवरात्रि अनुष्ठान दूध-केला पर किया और पूर्ण आहुति हेतु कार्यकर्त्ताओं के आग्रह पर गायत्री शक्तिपीठ गये। जबकि हमें लेप्रोस्कोपिक आपरेशन हेतु अमेठी जाना था। पूर्णाहुति के बाद अचानक मेरी साड़ी में आग लग गयी। मैं वहीं यज्ञशाला में करीब 50 प्रतिशत जल गई। यह घटना प्रात: 6:30-7:00 बजे की थी। मुझे तुरन्त हास्पिटल ले जाया गया। मन में भाव आया कि मरना तो एक दिन सभी को है, कोई बात नहीं, लेकिन यदि हम मर गये तो फिर बच्चे बनकर भगवान का काम कैसे कर पायेंगे? जैसे ही आग बुझी मुझे ऐसा अनुभव हुआ जैसे तीव्र प्रकाशमय सूर्य मेरे अन्दर समा गया हो।

इधर जो लोग उस समय शान्तिकुञ्ज में थे, वह बताते हैं कि परम पूज्य गुरुदेव अचानक प्रणाम से उठकर ऊपर चले गये और जब नीचे आये, तो वंदनीया माताजी से बोले, ''बेटी गायत्री पर दुर्घटना घट गई है। यदि कोई समाचार लेकर नहीं आता, तो पता लगाइये।''

सुल्तानपुर से हमें तुरन्त लखनऊ, बलरामपुर चिकित्सालय में शिफ्ट किया गया। हालत गंभीर थी। डॉ. ए. सी. राय से हमारे भाई ने पूछा, ''कब तक खतरे से बाहर हो जायेंगी?'' उन्होंने कहा, ''चार-पाँच दिन तक कुछ कहा नहीं जा सकता।'' उसी दिन शाम को बड़ी बहिन ने चिट्ठी लिखकर बेटे द्वारा परम पूज्य गुरुदेव को सूचना पहुँचाई। पूज्यवर ने कहा, ''एक-एक करके बताओ, कहाँ-कहाँ जली है? वे नंबर गिनते गये, जब पूरा समाचार सुन लिया तो बोले, ''अब तुम जाओ। तुम्हारा काम समाप्त और मेरा काम शुरू।''

प्रातःकाल तक मेरी हालत में काफी सुधार हो गया था। डॉ. राय साहब जो उस समय बलरामपुर चिकित्सालय के निर्देशक थे, बोले, ''ताज्जुब है! इतनी जल्दी इतना सुधार कैसे हो गया?''

डॉ. ओ. पी. शर्मा जी बताते हैं कि तीन दिन बाद ही मुझे परम पूज्य गुरुदेव का पत्र मिला, ''बेटी गायत्री को नया जन्म प्रदान हुआ।'' जीवन तो उन्होंने ही दिया लेकिन लिखा, ''तुम्हारी परमार्थ परायणता ने बेटी गायत्री की जान बचायी।'' प्राण दान देने वाले वे स्वयं थे, पर श्रेय किसी को भी दे देते थे। ❀

हम सूर्य में व अखण्ड दीप में रहेंगे

1987 नवम्बर की बात है। मैं टोली से लौटा था। जब गुरुदेव से मिलने गया, तो गुरुदेव ने कहा, ''बेटा, मैं शुकदेव हूँ।'' मैं चुप रहा और उनके वाक्य पर विचार करता रहा। रात में भी वही विचार चलता रहा। प्रातःकाल उपासना के समय प्रेरणा मिली कि गायत्री का सूर्योपस्थान पढ़ो। मैंने उसे पढ़ा। उसमें लिखा है, ''ऋषि शुकदेव जी कहते हैं, हमारी सारी साधनायें पूरी हूई। अब हम सूर्य में व्याप्त होकर कार्य करेंगे।'' अगले दिन मैंने गुरुदेव को संस्कृत का एक श्लोक सुनाया। 'तस्मात् योग समास्थाय....' जब मैंने यह श्लोक सुनाया तो गुरुजी ने कहा, ''बेटा कहाँ पढ़ा है?'' मैंने गुरुदेव को बता दिया कि 'गायत्री का सूर्योपस्थान' पुस्तक में पढ़ा है। तब गुरुजी कहने लगे, ''बेटा, जैसे शुकदेव जी ने पैदा होने पर माँ का स्तनपान भी नहीं किया और तपस्या करने लगे वैसे ही बेटा हम भी तपस्या में लग गये हैं और उसी रूप में कार्य कर रहे हैं।''

एक दिन पूज्यवर ने कहा, ''शरीर छोड़ने के बाद क्षण भर के लिये हम निराकार हो जायेंगे, फिर उसी अखण्ड दीप की ज्वलंत लौ में समाहित हो जायेंगे, वही मेरी प्रतिमा होगी।''

इसी बात को वर्ष 1988, जनवरी की अखण्ड ज्योति में पृष्ठ-28 पर उन्होंने लिखा भी, ''बदन बदलने के समय में अब बहुत देर नहीं है।...परिजन हम लोगों का संयुक्त जीवन अखण्ड दीपक का प्रतीक मानकर उसे आत्म सत्ता की साकार प्रतिमा मानते रहें।... शरीर परिवर्तन की वेला आते ही यों तो हमें साकार से निराकार होना पड़ेगा, पर क्षण भर में उस स्थिति से अपने को उबार लेंगे और दृश्यमान प्रतीक के रूप में अखण्ड दीपक की ज्वलंत ज्योति में समा जायेंगे।''''शरीरों के निष्प्राण होने के बाद, जो चर्म चक्षुओं से हमें देखना चाहेंगे, वे इसी अखण्ड ज्योति की जलती लौ में हमें देख सकेंगे। भविष्य में दोनों की सत्ता एक में विलीन हो जायेगी और उसे तेल-बाती की पृथक सत्ताओं के एक ही लौ में समाविष्ट होने की तरह अद्वैत रूप में गंगा-यमुना के संगम रूप में देखा जा सकेगा।''

आगे वे लिखते हैं, ''अभी हम लोगों के शरीर शान्तिकुञ्ज में रहते हैं। पीछे वे इस परिकर के कण-कण में समाये हुए रहेंगे। इसकी अनुभूति निवासियों और आगंतुकों को समान रूप से होती रहेगी।''

अंतिम दर्शन

डॉ.गायत्री शर्मा बताती हैं कि मई 1990 में ब्रह्मदीप यज्ञों की श्रृंखला में लखनऊ में ब्रह्मदीप यज्ञ के एक संयोजक मेजर खरे दूसरे श्री त्रिवेदी जी के अतिरिक्त हमें भी संयोजन का सौभाग्य मिला था। प्रचार-प्रसार से लेकर समयदानियों के नियोजन की भी जिम्मेदारी थी। परन्तु मन परम पूज्य गुरुदेव पर ही लगा रहता था। 1 जून को न जाने क्या हुआ, मुझे गुरुदेव से मिलने की तड़प सी उठने लगी, कुछ बेचैनी सी होने लगी। हमने श्री अरविन्द निगम जी से कहा कि हमें शान्तिकुञ्ज जाना है, हम रात्रि में जाकर गुरुदेव के दर्शन करके अगले दिन आ जायेंगे। उन्होंने कहा, ''बिना आरक्षण के आप कैसे जायेंगी?'' हमने कहा, ''कैसे भी हो, हमें जाना है, मन में ऐसी प्रेरणा आ रही है जैसे गुरुदेव बुला रहे हैं।'' हम स्टेशन पहुँचे, टिकिट ली और हमें रिजर्वेशन भी मिल गया। हम शान्तिकुञ्ज आये, गायत्री जयंती के कार्यक्रम के बाद माताजी का प्रणाम हुआ

और दोपहर तक यह घोषणा हो गई कि परम पूज्य गुरुदेव ने शरीर छोड़ दिया है। हमारे दु:ख की सीमा नहीं थी, जब उनके अंतिम दर्शन किये, उन्हें प्रणाम किया तो इस बात का रहस्योद्‌घाटन हुआ कि क्यों अचानक ही गुरुवर से मिलने की तीव्र की इच्छा होने लगी थी। उन्होंने स्वयं खींचकर हमें अपने पास बुला लिया था और अपने पार्थिव शरीर के अंतिम दर्शनों की अभिलाषा पूरी की थी। उस गायत्री जयंती पर्व पर अनेकों परिजन दूर-दूर से हमारी ही तरह खिंचे चले आये थे और यही कह रहे थे कि गुरुदेव ने ही हमें खींचकर बुलाया है। (ज्ञातव्य है कि उन दिनों पूज्य गुरुदेव ने बहुत से परिजनों को स्वप्न के द्वारा और ध्यान में आकर विशेष प्रेरणाएँ भी दीं, किन्हीं-किन्हीं को तो अपना शरीर छोड़ देने का स्पष्ट आभास भी कराया।) ❀

डॉ. अमल कुमार दत्ता

(डॉ. अमल कुमार दत्ता एवं श्रीमती श्रीपर्णा दत्ता, पूज्यवर के निकटतम शिष्यों में से हैं। वे 1960 में मथुरा में पूज्य गुरुदेव के सम्पर्क में आये। उसके बाद वे लगातार उनके संपर्क में बने रहे। 1984 में पूज्य गुरुदेव के कहने पर स्थाई रूप से शान्तिकुञ्ज आ गये।)

डॉ. अमल कुमार दत्ता जी के पास इतने संस्मरण हैं कि उनकी ढेरों डायरियाँ भरी पड़ी हैं। वे कहते हैं, ''गुरुजी-माताजी की यादें, उनका प्यार ही हमारे जीवन की असल पूँजी है।'' डॉ. दत्ता जी के पास जब भी आप बैठें वे आपको कोई न कोई संस्मरण अवश्य सुनायेंगे। आप किसी भी विषय पर चर्चा करें, उनके संस्मरण कोष में उससे संबंधित निज का या अन्य किन्हीं परिजन से जुड़ा कोई न कोई संस्मरण अवश्य होगा।

गुरुजी-माताजी से परिचय

वे बताते हैं कि 1960 में, मैं पिताजी के साथ मथुरा गया, तब मैं पहली बार माताजी से मिला था। उस समय गुरुजी अज्ञातवास में थे। उस समय तक मैं गुरुजी का साहित्य पढ़ने लगा था और उनसे बहुत प्रभावित था। मैंने माताजी के चरण स्पर्श किये और पूछा, ''गुरुजी कैसे लिखते हैं ?'' माताजी बोलीं, ''बहुत तेज लिखते हैं और कलम उठाते ही नहीं।'' मैंने पूछा, ''क्या वे भी मुझे आप की ही तरह प्यार करेंगे ?'' माताजी बोलीं, ''मुझसे भी अधिक।'' फिर माताजी ने मुझे गायत्री मंत्र सुनाया, अखण्ड दीपक दिखाया और कहा, ''खाना खाओ।''

पिताजी ने कहा ''यहाँ, हमारे रिश्तेदार हैं, खाना वहीं खायेंगे।'' माताजी ने बड़े अधिकार से कहा, ''खाना रिश्तेदार के घर नहीं, अपने घर खाना चाहिए।'' फिर हम लोगों ने वहीं खाना भी खाया। यह थी मेरी, माताजी से पहली मुलाकात और गायत्री परिवार में आगमन। ❁

14 जून 1961 को मैं पहली बार गुरुजी से मिला। वह दिन मुझे आज भी याद है। हम 10-12 लोग खाना खा रहे थे। माताजी ने गुरुजी से कुछ कहा। गुरुजी हमारे पास आये और बोले,''अमल कुमार कौन है ?'' मैं घबरा कर खड़ा हो गया। गुरुजी बोले,''बैठो-बैठो ! खाना खाओ। खाकर तपोभूमि में मेरी प्रतीक्षा करना। मैं पूजा करके आता हूँ। तुमसे बहुत बातें करनी हैं।'' मुझे खुशी, आश्चर्य और उत्कंठा एक साथ होने लगी। उस दिन गुरुजी ने मेरे साथ बहुत सी बातें कीं। साधना संबंधी, भविष्य संबंधी। हम साथ-साथ घूमते रहे, कभी रुकते, कभी चलते हुए गुरुजी बोलते रहे, मैं सुनता रहा। उस दिन मुझे विश्वास हो गया कि गुरुजी ने मुझे अपना बना लिया और मैं उनका हो गया। 27 जुलाई1961 गुरुपूर्णिमा के दिन मैंने गुरुजी से दीक्षा ली। ❁

मैं जब नया-नया जुड़ा था, तब गुरुजी को बड़ी बारीकी से देखता था। उनका साहित्य भी खूब पढ़ता था, और जाँचता रहता था कि जो कुछ वे लिखते हैं, सचमुच अपनाते भी हैं।

मैंने देखा, गुरुजी कभी चमड़ा उपयोग नहीं करते थे। केवल जूते में ही नहीं, होलडॉल के बैल्ट में भी नहीं। रेल में कभी धक्का देकर नहीं चढ़ते थे। सबसे बड़ी बात हर व्यक्ति यही सोचता रहा कि गुरुजी मुझे ही सबसे ज्यादा प्यार करते हैं। वे कहते थे, ''मैं अधूरा प्यार नहीं जानता, मेरा हर प्यार पूरा ही रहता है।'' मैं उनसे बहुत प्रश्न पूछता था। बच्चों के जैसे जिज्ञासा रखता और वे बड़े ही सरल ढंग से मेरे प्रश्नों का उत्तर विद्वत्ता से नहीं, बड़े प्यार से, उपयोगिता तथा आदर्श की दिशा में प्रेरित करते हुए देते थे। ❁

एक दिन मैं घीया मण्डी पहुँचा, ''पूछा, माताजी कहाँ है ?'' एक बच्चे ने बताया कि माताजी, सतीश के लिये कोट का कपड़ा खरीदने नीचे गयी हैं। उसने दौड़कर माताजी को मेरे आने की सूचना भी दे दी। माताजी लौटते में मेरे लिये कचौड़ी और समोसा ले आयीं। मैंने कहा, ''माताजी, गुरुजी किताब में लिखते हैं कि यह नहीं खाना चाहिये।'' तो वे बोलीं, ''मैं तो नहीं लिखती,

खाना मेरा विषय है।'' उनका यह प्यार ही था, जिससे आदमी बहुत कुछ कर गुजरता है।

मेरा लड़कपन

जब मैं पहले-पहल माताजी से मिला तो उनका स्वरूप एक साधारण गृहस्थ महिला जैसा था। मैं कहता था, ''मैं परीक्षा में पास हो जाऊँ'' तो माताजी कहती थीं, ''मैं तेरी सिफारिश गुरुजी से कर दूँगी। तू भी गुरुजी से बोल देना।''

हम लोग लड़कपन भी खूब करते थे। एक बार हम मथुरा गये हुए थे। प्रो० रामचरण महेन्द्रजी भी आये हुए थे। वे उन दिनों अखण्ड ज्योति के सहसम्पादक थे। वे लौटने वाले थे, तो हम लोग मैं और चंद्रकांत (गुरुजी का भानजा) उनको स्टेशन पहुँचाने की जिद्द करने लगे। उन्होंने गुरुजी से मना करने के लिए कहा, तो गुरुजी बोले, ''ये ओकट-फोकट हैं, इनको जाने दो।'' रास्ते में ताँगा पलट गया पर हमें चोट कोई नहीं आई। हम लोगों को चाय पीने की बहुत आदत थी। रात में मथुरा में चाय कहीं मिली नहीं तो हम लोग दूध ले आये और सतीश भाई साहब से कहा कि कहीं से स्टोव, चाय-पत्ती और शक्कर का इंतजाम करो। हम लोग तलघर में ठहरे थे। सतीश भाई साहब, पं० लीलापत शर्मा जी के पास गये और बोले कि डॉ. साहब को चोट आ गई है, इसलिए सेक करना है और रसोई घर में जाकर स्टोव के साथ शक्कर और चायपत्ती भी ले आये। पंडित जी हमको देखने चले आये, फिर तो हमारी बड़ी मुसीबत हो गई। सतीश भाई साहब बोले, ''डॉ. अभी अभी सोया है, जगाओ मत।'' पंडित जी को असलियत पता चल गई। सुबह गुरुजी के पास शिकायत हुई, तो गुरुजी बोले, ''लीलापत, इनके रोज चाय पीने का इंतजाम कर दो।''

गुरुजी की आदर्शवादिता

सतीश भाई साहब की शादी जब पक्की हुई तब गुरुजी ने अपने परिवार के बड़े बुजुर्गों के लिए एक-एक रुपया लिया था। मुझे और श्रीपर्णा को एक-एक नोट लिफाफे में भेजा था। जब हम शादी में गये तो एक दिन गुरुजी गायत्री तपोभूमि में यज्ञशाला की दीवार से टिककर फर्श पर बैठे थे। हम लोग सामने बैठ गए। मैंने कहा, ''गुरुजी, एक प्रार्थना है।'' गुरुजी ने कहा, ''पहले मेरी सुन।'' 8-10 व्यक्ति जो शादी में आये थे, उनके साथ मैं भी बैठ गया। गुरुजी बोले, ''जो कोई व्यक्ति शादी के लिए कोई उपहार लाया हो उसे अपने

बकस में ही रखे रहे, नहीं तो मैं उसका उपहार नाले में फेंक दूँगा। अपने जीवन का ढंग मैं अपने लड़के की शादी में नहीं तोड़ूँगा, ठीक से याद रखना।'' इससे पहले कि गुरुजी मुझे ढूँढ़ते, मैं वहाँ से भाग लिया। मेरी बात बिना कहे ही मना जो हो गई थी।

गुरुजी की नियमितता

पैंतीस वर्षों में कभी भी गुरुजी-माताजी से मिलने में मुझे, कभी पाँच मिनट से अधिक देर नहीं लगी। गायत्री तपोभूमि में वे कभी भी घीया मण्डी से चलकर पूर्णाहुति में पहुँचने से नहीं चूके। ऐसा कभी नहीं हुआ कि मेरे पत्र का उत्तर नहीं आया हो। गुरुजी के पत्र लिखने का एक विशेष अंदाज था, माताजी पत्र पढ़तीं, और पत्र पढ़ते-पढ़ते में ही गुरुजी जवाब लिखते रहते। जो विशेष बात पूछी जाती, उसका जवाब वह अन्तिम दो-चार लाइनों में ही लिख देते। यहाँ माताजी का पत्र पढ़ना समाप्त होता, वहाँ गुरुजी का पत्र लिखना।

मैंने गुरुजी की पहली गोष्ठी, गायत्री तपोभूमि के हॉल में 14 जून 1961 में सुनी। उन्होंने कहा कि जो अगले 30 वर्ष तक मुझसे जुड़ा रहेगा उसके पूर्व जन्म में कुछ भी हो लेकिन फिर उसे किसी और चीज की आवश्यकता नहीं होगी। मैं जिस किसी के लिए जो कुछ भी कहता हूँ उसको सच होना ही होगा।

शक्ति संचार साधना की दीक्षा

सन् 1961 की ही बात है। गुरुजी तपोभूमि गेट के दायीं ओर के हॉल में बीस-पच्चीस लोगों की गोष्ठी ले रहे थे। गोष्ठी के बाद उन्होंने पाँच लोगों का नाम लिया और ''विशेष बात करनी है'', कहकर घीया मंडी बुलाया। उस दिन गुरुजी ने अखण्ड दीपक साधना कक्ष के सामने बैठकर हम पाँच व्यक्तियों को (श्री जानकी वल्लभ जोशी, कल्कत्ता का एक परिवार, मैं और एक व्यक्ति और थे।) शक्ति संचार साधना की दीक्षा दी। उन्होंने कहा ''मैं और मेरे गुरु रविवार और बृहस्पतिवार को सूर्योदय के एक घण्टे पूर्व से एक घण्टे बाद तक तथा रात को नौ से साढ़े नौ बजे तक शक्ति का संचार करेंगे। किसी एक समय तुम लोग सिर्फ चुप बैठना। यदि इस शक्ति का सही उपयोग करोगे तो यह निरंतर मिलती रहेगी।'' मैं यह साधना आज भी लगभग नियमित करता हूँ।

एक दिन मैंने गुरुजी से पूछा, ''गुरुजी, मुझे तो कुछ भी मालूम नहीं पड़ता। लगभग 25 वर्ष तो हो गये साधना करते हुए।'' गुरुजी बोले ''बेटा, विटामिन सी खाने से कुछ फायदा होता है?'' मैंने कहा, ''गुरुजी, यदि कमी होती है तो जरूर फायदा होता है।'' वे बोले ''फायदा मालूम पड़ता है क्या?'' मैंने कहा ''गोली क्या कर रही है यह तो मालूम नहीं पड़ता लेकिन तकलीफ दूर हो जाती है।'' गुरुजी ने कहा ''बेटा, यह अच्छा है कि तुझे कुछ मालूम नहीं पड़ता, जिस दिन मालूम पड़ने लगेगा उस दिन पगला जायेगा। ऐसे ही ठीक है।''

गुरुजी-माताजी, दादा गुरुजी का चित्र

माताजी ने अपना एक चित्र मुझे दिया जो आज भी मेरे पास है। गुरुजी का एक चित्र पं० लीलापत शर्मा जी ने मुझे दिया था। जिसकी कापी माताजी अपने पूजा कक्ष में रखती थी और उन्होंने बताया था कि आरम्भिक दिनों में गुरुजी जब अज्ञातवास में होते तो मैं इस चित्र से उनसे सम्पर्क स्थापित कर लेती थी, और गायत्री परिवार की समस्याओं का हल भी पूछ लेती थी। ❁

1965 में मेरा बड़ा बेटा अरविंद बीमार पड़ा। मैं उन दिनों कानपुर में था। मेरी पत्नी श्रीपर्णा लखनऊ में थी। उसने गुरुजी को पत्र लिखा। गुरुजी ने मुझे पत्र लिख कर लखनऊ बुलाया, कि वे किसी कार्यवश लखनऊ आ रहे हैं और हमारे ही घर पर रुकेंगे। जब वे घर आये तो मुझसे बोले, ''मैं तेरे लिये एक चीज लाया हूँ।'' उन्होंने होलडॉल खोला और दादा गुरुजी का एक चित्र मुझे दिया। जो आज भी मेरे पास है। मैंने उस चित्र को पाते ही गुरुजी को प्रणाम करके वायदा किया कि मैं इनसे (दादा गुरुजी से) कभी कुछ माँगूगा नहीं।

मैंने गुरुजी से पूछा कि आपने यह चित्र कैसे उतारा? क्या आपके पास कैमरा था? गुरुजी ने कहा, ''नहीं, जिस गुरु पूर्णिमा में मुझे गुरुजी के दर्शन करने थे, सन् 1960 में, उस समय हम सात शिष्य वहाँ पहुँचे थे।'' मैंने पूछा ये कौन हैं? तब उन्होंने कहा कि भारत से हम दो लोग थे। एक दक्षिण भारत में हैं। उन्हीं ने अपने कैमरे से ये चित्र लिये थे। जिसकी कापी उन्होंने मुझे भेजी। मैंने पूछा, ''बाकी पाँच कहाँ हैं?'' गुरुजी ने कहा, ''ये पाँचों विदेश में हैं और अपने-अपने ढंग से काम कर रहे हैं।'' ❁

विशिष्ट चर्चा

एक बार मैंने गुरुजी से पूछा, ''गुरुजी, शरीर छोड़ने के बाद आप कहाँ जायेंगे ? क्या करेंगे ?'' यह सन् 1963-64 की बात होगी। गुरुजी बोले, ''मैं अपने गुरु का स्थान हिमालय में ले लूँगा।'' मैंने पूछा, ''उनका क्या होगा ?'' वे बोले, ''वे अपने गुरु का स्थान ले लेंगे।'' मैंने कहा, ''फिर उनका क्या होगा ?'' तो वे बोले, ''वे विश्राम करेंगे।'' मैंने पूछा, ''उनका विश्राम कैसा होता है ? क्या सोयेंगे, कितना सोयेंगे, क्या सोते रहेंगे ?'' गुरुजी ने कहा, ''नहीं, उनके विश्राम का मतलब होता है सूक्ष्म जगत् में तप। वे सूक्ष्म शरीर से कारण शरीर में अपनी तप शक्ति से ही पहुँचते हैं और जब-जब ईश्वरीय विधान को आवश्यकता होती है, वह इनका उपयोग एक ऋषि या अवतारी के रूप में सृष्टि संतुलन का उत्तरदायित्व सौंप कर करते हैं।'' ❀

मैंने पूछा, ''गुरुजी, हिमालय में कौन सा भाग सबसे अच्छा है ?'' गुरुजी बोले, ''हिमालय का सबसे अच्छा स्थान, हिमालय का हृदय है। हमारे गुरुजी उससे भी बहुत ऊपर रहते हैं। वे सूक्ष्म शरीर में हैं और स्थूल शरीर धारण कर सकते हैं। उनसे कोई प्रयास से नहीं मिल सकता। मैं भी अपने प्रयास से नहीं मिला। उनकी कृपा, इच्छा और काम का उद्देश्य ही उनसे मिलाता है। हिमालय का हृदय एक छोटा स्थान है। यह 10-12 किलोमीटर लम्बा और कुछ किलोमीटर चौड़ा है। यहाँ कोई नहीं पहुँच सकता। लोग हेलीकॉप्टर से भी सारी कोशिशें करके देख चुके हैं। यहाँ हमेशा सिद्ध पुरुष, ऋषि रहते हैं। सीधा रास्ता कठिन है। घूमकर जाना पड़ता है।''

गुरुजी की दिव्य दृष्टि

गुरुजी दिव्य दृष्टा थे, उन्हें भूत-भविष्य सबका ज्ञान था। इसका मैंने कई बार एहसास किया है। गायत्री तपोभूमि के दायीं ओर कक्ष में गुरुजी का प्रवचन चल रहा था। मैं भी सुन रहा था। पीछे से किसी ने एक चिट आगे बढ़ाई और सबसे आगे वाले ने गुरुजी को दी। प्रवचन बंद हो गया। गुरुजी ने सूचना दी कि रेडियो न्यूज आई है कि प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू का दिल के दौरे से स्वर्गवास हो गया है। जो बच्चे उपवास करना चाहें, सूचना दे दें। बाहर निकलते ही मैंने गुरुजी से पूछा, ''गुरुजी, क्या सुभाष चन्द्र बोस प्रकट हो जायेंगे

और प्रधानमंत्री बनेंगे?'' गुरुजी ने कहा, ''प्रधानमंत्री, लाल बहादुर शास्त्री बनेंगे।'' जबकि उस समय तक ऐसी न कोई सूचना थी, न सम्भावना। ❁

एक बार गुरुजी ग्वालियर में जब हमारे यहाँ ठहरे हुए थे, तब वे भोजन करते हुए बोले, ''अमलकुमार, तुझे एक मजेदार बात बताता हूँ।'' मैंने कहा, ''मजेदार बात! गुरुजी जरूर बताइये।'' वे बोले, ''लोग अब अपने घरों से सोना निकालेंगे। ज्यादा सोना पहनना समाज में सभ्यता का द्योतक नहीं रहेगा।'' उन दिनों में कोई महिला यदि सोना नहीं पहनती थी, शादी-ब्याह में तो विशेषकर, तो उसे गरीब घर की माना जाता था। हमें सुनकर आश्चर्य लगा, पर कुछ दिनों बाद चीन ने हमला किया और काफी मात्रा में सोना बाहर चला गया। आज की परिस्थितियों को भी देखें तो ज्यादा सोना पहनना रईसी तो हो सकता है पर आधुनिक सभ्यता नहीं रह गया है। ❁

जब भारत-चीन युद्ध हुआ था, तब चीन जीतता जा रहा था। श्री घनश्यामदास बिड़ला जी ने गुरुजी से पूछा, ''आचार्य जी, क्या करूँ? मैं अपना पैसा विदेश बैंक में स्थानांतरित कर दूँ क्या? चीन लगातार आगे बढ़ रहा है, भारत का क्या होगा?'' गुरुजी ने कहा, ''इसकी जरूरत नहीं, युद्ध 7 दिन में बंद हो जायेगा।'' और ऐसा ही हुआ। ❁

एक दिन मैं और गुरुजी इन्टर क्लास कोच में मथुरा से ग्वालियर जा रहे थे। गुरुजी ने मुझसे पूछा, ''अच्छा बता! पैंटन टैंक कैसे चलता है?'' मैंने कहा, ''गुरुजी, मुझे नहीं मालूम।'' गुरुजी ने कहा, ''उसमें सारा फायरिंग सिस्टम कम्प्यूटर का है। हिन्दुस्तान-पाकिस्तान युद्ध में पाकिस्तानियों का गणित लड़खड़ा गया। इस कारण लाहौर से अमृतसर यानि स्वर्ण मंदिर में एक भी बम नहीं गिरा पाये। बेटे! इनका गणित हमेशा कमजोर होगा। इसी प्रकार चीन युद्ध में भी हिमालय के ऋषियों ने भारत की मदद की थी।'' ❁

सन् 1971 में जब गुरुजी अज्ञातवास के लिए जाने वाले थे, तो विदाई में बहुत भीड़ थी। मैं उनके पास गया तो वे बड़ी प्रसन्न मुद्रा में बोले, ''देख! कितने डॉक्टर हैं।'' वे प्यार से सदा मुझे डॉक्टर बुलाते थे। मैं रो पड़ा कि आगे कौन मुझे इस नाम से बुलायेगा। गुरुजी तुरंत मेरे मनोभाव समझ गये और बोले, ''मैं तुझे बिना सिविल सर्जन बनाये मरूँगा नहीं।'' ❁

गुरुजी मथुरा छोड़ने के पहले अपना सब कुछ बाँट गये। गुरुजी ने केवल धन सम्पत्ति ही नहीं बाँटी बल्कि अपना शरीर, मन, बुद्धि व प्रतिभा भी भगवान के काम में लगाई। जब गुरुजी हरिद्वर में रहे तब सतीश भाई साहब ढ़ाई सौ से पाँच सौ रुपया प्रति माह भेजते थे। गुरुजी कहते थे कि बेटा अपने बाप को पैसा नहीं देगा, सेवा नहीं करेगा तो अगले जनम में बैल बनेगा। यही बात उन्होंने हमारे बच्चों से भी कही थी। मेरे बच्चे मुझे नियमित रूप से पैसा भेजते हैं। मैं कहता हूँ, ''मुझे आवश्यकता नहीं है।'' तो वे कहते हैं, ''पिताजी, हमें बैल नहीं बनना है।'' ❀

गुरुजी अपने खर्चे के विषय में बहुत कड़क थे। उन्होंने मिशन के पैसे को अपने निजी खर्च के लिए किसी भी सूरत में इस्तेमाल नहीं किया। हमें याद है जब डॉक्टर प्रणव जी का बी.एच.ई.एल. में एक्सीडेंट हुआ था तो हरिद्वार से दिल्ली ले जाने में केवल इसीलिए देर हुई थी कि सतीश भाई साहब को रात में पैसे लेकर मथुरा से आना था। किसी भी स्थिति में गुरुजी ने पोस्ट ऑफिस या बुक स्टॉल से पैसे लेना स्वीकार नहीं किया था।

संगीत प्रशिक्षण

मथुरा में एक बार गुरुजी को संगीत सीखने का विचार आया। उन्होंने एक संगीत टीचर भी नियुक्त कर लिया और सबसे कहा कि सब लोग संगीत सीखेंगे। माताजी, गुरुजी और बाकी सब लोग भी संगीत की कक्षा में बैठने लगे। माताजी ने हारमोनियम पर स्वर लिख लिये और रीड दबा-दबाकर सीखने लगीं। गुरुजी बोले, ''मैं भी सीखूँगा'' और नियमित रूप से कक्षा में आने लगे। गुरुजी बड़ी गहराई से सीखने लगे। मास्टरजी को पूछते, ''ऐसा क्यों, ऐसा क्यों नहीं? इससे क्या होगा? ऊँचा क्यों, नीचा क्यों नहीं?'' मास्टर साहब सिखाते रहे। सात दिन बाद उन्होंने आना बंद कर दिया। गुरुजी ने कहा, ''पता लगाओ, मास्टर साहब बीमार तो नहीं हो गये?'' एक व्यक्ति को घर भेजा। पत्नी ने कहा, ''मास्टर साहब बाहर गये हुए हैं।'' एक दिन मास्टर जी गुरुजी को बाजार में मिल गये। गुरुजी ने उन्हें नमस्कार किया और बोले, ''मास्टर साहब, आपका स्वास्थ्य कैसा है? आप बाहर गये, लौटे, तो आये क्यों नहीं? मास्टर जी ने हाथ जोड़े और बोले,''आचार्य जी, आपके पास बहुत कलायें हैं। मेरे पास तो एक ही कला है, वो भी थोड़ी सी। आप मेरे पीछे क्यों पड़ गये?

मुझे दाल-रोटी खाने दीजिए। आपको सिखाऊँगा, तो मैं ही भूल जाऊँगा। मुझको आप कृपा करके माफ कर दीजिए।''

ऐसे ही ब्रह्मवर्चस में जितेन्द्र तिवारी, अशोक तिवारी और मेरे साथ हुआ। हम लोगों ने गुरुजी के कहने पर बड़ी ईमानदारी से ढपली सीखना शुरू किया। क्योंकि गुरुजी ने कहा था कि तुम एक साल तक ढपली सीखो और इसके बाद भी तुम्हें न आये तो तुम्हारा कोई दोष नहीं, मेरी ही किस्मत खराब होगी। हम लोग सचमुच सीखते रहे। पहली लाइन में बैठते तो आगे वालों की ताल बिगड़ने लगी। शास्त्री जी ने बीच की लाइन में बिठा दिया। तब आगे वाले और पीछे वाले दोनों की ताल बिगड़ने लगी। फिर उन्होंने सबसे पीछे बिठाल दिया। अब पीछे वालों की ताल बिगड़ने लगी। हारकर एक दिन हाथ जोड़कर बोले, आप लोग ब्रह्मवर्चस में वैज्ञानिक का ही काम कीजिए। (लेकिन गुरुजी को संगीत का भी बहुत अच्छा ज्ञान था।)

गुरुजी का आश्वासन

एक बार गुरुजी लखनऊ आये हुए थे। हमारे घर पर ही रुके थे। जब गुरुजी मथुरा के लिये लौटने लगे तो स्टेशन पर बातचीत के दौरान मैंने गुरुजी से कहा, ''गुरुजी, इस जन्म में तो मैं आपको छोड़ूँगा नहीं, यदि पागल नहीं हो गया तो, पर आगे मैं आपको कैसे पहचानूँगा ? पहचानूँगा भी या नहीं, अखण्ड ज्योति का सदस्य बनूँगा या नहीं, यह मैं नहीं कह सकता।''

गुरुजी ने कहा, ''तू कभी पागल नहीं होगा और जहाँ तक मेरे साथ का सवाल है, मैं हमेशा तेरे साथ हूँ। किसी न किसी रूप में हमेशा तुम्हारे साथ रहूँगा। कभी अभिभावक के रूप में तो कभी मित्र तो कभी यूँ ही।'' मैंने कहा, ''गुरुजी, कब तक ?'' गुरुजी बोले, ''जब तक तू पूर्णता की स्थिति प्राप्त नहीं कर लेगा।'' उनकी बात सुनकर मैं भाव विभोर हो गया। मन में तो आया कि चरणों में लोट जाऊँ, पर ऐसा कर नहीं सकता था, क्योंकि हम स्टेशन पर खड़े थे। मैंने मन ही मन गुरु जी को प्रणाम किया और कृतज्ञता व्यक्त की। ०००

एक दिन दोपहर को दो बजे मैं गुरुजी के पास गया। गुरुजी अकेले बैठे थे। मैंने पूछा, ''गुरुजी, आपकी तबियत ठीक है ? गुरुजी ने कहा, ''हाँ।'' मैंने कहा, ''गुरुजी, मैं डॉक्टर हूँ, आपकी आँखें लाल हैं।'' गुरुजी बोले, ''हाँ बेटा ! मैं कुछ दिन से सो नहीं रहा हूँ, और तुम लोग सुधर नहीं रहे हो। इसीसे

मैं बहुत चिन्तित हूँ। लेकिन मैंने भी सोच लिया है कि कितने ही जन्म क्यों नहीं लगें, पर मैं भी तुम लोगों को छोड़ूँगा नहीं। बस इस होड़ में ही आँखें लाल हैं।'' मेरे पास कृतज्ञता के लिये कुछ नहीं था, सिवाय हृदय पर से न मिटने वाले एक सन्देश के। ❀

एक दिन उन्होंने कहा, ''बेटा! प्रारब्ध तो बदला नहीं जा सकता। कष्ट तो राम, कृष्ण, शंकराचार्य, बुद्ध, रामकृष्ण परमहंस सबको हुआ, पर मैं अभिभावक की भूमिका जरूर निभाऊँगा। चोट लगेगी, तो सबसे पहले पहुँचूँगा। अच्छे से अच्छा इलाज कराऊँगा। मेरे पास जो तप की पूँजी है, समय पर उसका उपयोग करूँगा, पर याद रखना हम बदला नहीं चाहते, पर भगवान भी न्याय नहीं छोड़ता। अगर तुम अपने कष्ट, दु:ख और हानि की कीमत पर किसी का चिंतन, चरित्र और व्यवहार नहीं उभारोगे, तब तक मेरे उस तप का पटाना नहीं होगा और आगे तुम्हें भुगतना ही पड़ेगा।'' ❀

शान्तिकुञ्ज में एक गोष्ठी में गुरुजी ने कहा था, ''बच्चो! जो तुम लोग शान्तिकुञ्ज के स्थायी सदस्य हो, हमारे बच्चे हो। हम किसी से बिछुड़ने के लिए कभी नहीं मिलते हैं और यदि प्यार करते हैं तो फिर पूरा ही प्यार करते हैं। हम तुम लोगों को समाज के लिए लाये हैं। तुम्हारे संस्कार अच्छे बनें, इसीलिए हम तुम्हें बाहर का अन्न नहीं खिलायेंगे। उसकी व्यवस्था तुम्हारे गुरु, तुम्हारे पिता ने कर रखी है। यह तुम्हारा हक है। जब तक यहाँ रहोगे मोटा अन्न, मोटा वस्त्र हमारा उत्तरदायित्व रहेगा। क्योंकि, तुम कमाओगे नहीं। जीवनभर हमारे बच्चे रहोगे। फिर उन्होंने कहा,

''आटे का घाटा नहीं घी के नहीं दर्शन, बने रहो तुम बर्सन।''

यह उनका हम लोगों के लिये सादगी भरा जीवन जीने का शिक्षण था।

गुरुजी की पीड़ा

उन्होंने मुझसे कहा था, कि यदि तुम मुझे स्वप्न में देखो तो वह निरुद्देश्य नहीं होगा। गुरुजी के शरीर छोड़ने के काफी समय बाद एक दिन मैंने उनको स्वप्न में देखा। मैंने देखा, ''वे एक कमरे में बैठे हैं। मैं उनके पास गया और प्रणाम किया। गुरुजी बहुत दुबले थे और शरीर छोड़ने की तैयारी में थे। उन्होंने बड़े शांत भाव से कहा कि अब मैं कारण शरीर में जाने वाला हूँ। मैंने कहा, आप बड़े प्रसन्न और स्वस्थ दिख रहे हैं पर इतने दुबले क्यों हैं ? वे बोले,

''मेरा यह शरीर तुम लोगों के चरित्र, चिंतन और व्यवहार से बना है और तुम लोग इस मामले में दुबले पड़ रहे हो, आगे देखता हूँ?''

बड़ा विलक्षण प्यार था उनका।

लोकेश नाम का एक कार्यकर्ता जिसको गुरुजी ने देश-विदेश के कई स्थानों पर भेजा। उसे अहंकार हो गया था। यह सन् 1986 की बात है। जब उसकी शिकायतें कुछ ज्यादा ही आने लगीं तो उसे निकाला जाना घोषित कर दिया गया। उसने जबलपुर कोर्ट में केस चलाया। गुरुजी उन दिनों बाहर कहीं जाते नहीं थे। सहज ही चर्चा में उनसे पूछा गया कि गुरुजी आप जबलपुर जायेंगे क्या? जायेंगे तो कहाँ ठहरेंगे? इस पर गुरुजी ने कहा, ''मैं तो कहीं जाता नहीं। लेकिन यदि जाना ही पड़ा तो जबलपुर में, मैं अपने बेटे लोकेश के घर ही ठहरूँगा। उसने कई वर्षों तक मेरी बहुत प्रशंसा की है, थोड़ी बुराई कर दी तो क्या हर्ज है?'' ❀

ऐसे ही ब्रह्मवर्चस के एक कार्यकर्ता की ड्यूटी अखण्ड दीपक के पास सुरक्षा में थी। उसने वहाँ पर गड़बड़ी करनी शुरू कर दी। रसीद काटने में भी उसने कुछ होशियारी की। किंतु महाकाल से कुछ छिपा रह सकता है क्या? उसकी चोरी पकड़ी गई। माताजी के पास शिकायत पहुँची। माताजी ने उसे समझाया व आईंदा ऐसा न करने के लिये कहा। उस कार्यकर्ता ने माफी माँगी, उसे माफ भी कर दिया गया। गलती की है, तो उसके लिये क्षमा ही पर्याप्त नहीं होती, उसके लिये प्रायश्चित भी करना पड़ता है। उन कार्यकर्ता ने तो गुरुजी-माताजी से प्रायश्चित के विषय में कुछ पूछा नहीं, परंतु कुछ दिनों बाद गुरुदेव ने स्वयं एक कार्यकर्ता के द्वारा उनके लिये संदेश भिजवाया कि ''उससे कहो, वह तीन-चार अनुष्ठान अवश्य कर ले, अन्यथा भविष्य में इस पाप का दण्ड रोग-शोक आदि के रूप में बहुत भयंकर रूप से भुगतना पड़ेगा। समाज का पैसा हजम नहीं होगा, कोढ़ बनकर फूटेगा।'' यह उनका प्यार ही था कि गलतियों को क्षमा भी करते थे और भविष्य की भी चिंता करते थे। ❀

मेरा छोटा भाई यतीन्द्र दत्ता गुरुजी से अक्सर मिलता रहता था। एक दिन हम दोनों गुरुजी के पास घीयामंडी गये। यतीन्द्र ने गुरुजी से कहा- ''गुरुजी, मेरे तीन प्रश्न हैं। मैं विदेश जाना चाहता हूँ। वीजा और पैसे का इन्तजाम कैसे होगा? और वहाँ भी आप मेरी रक्षा करना।'' गुरुजी बोले,

''पहले तू अपना चौथा प्रश्न भी बोल दे'' यतीन्द्र ने पॉकेट से चिट निकाली और देखकर बोला, ''हाँ गुरुजी, यह चौथा प्रश्न भी है।'' फिर गुरुजी बोले, ''तू जल्दी विदेश जायेगा। अच्छा बता! तेरे पास पैसे कितने हैं?'' यतीन्द्र बोला, डेढ़-दो हजार रुपये हैं।'' गुरुजी एक कहानी सुनाने लगे, ''एक जाट मेले में खाट बेचने आया।'' गुरुजी खाट पर ही बैठे थे, और हाथ से दिखाकर बोले,

''आजू नहीं है-बाजू नहीं है, बीच का नहीं है झंगड़-झोला,
तीन नहीं हैं पाये और एक पाया ऊँचा करके बोला-खटिया ले लो भाई।

सो पंद्रह सौ रुपये में तू अमेरिका जायेगा?'' यतीन्द्र बोला, ''गुरुजी, इसीलिए तो आपके पास आया हूँ।'' गुरुजी बोले, ''अच्छा बेटा, मैं सब ठीक कर दूँगा। तेरे जाने का टिकिट, वीजा, स्कालरशिप और अच्छी नौकरी सब कर दूँगा। अब तू एक काम कर, माताजी के पास जाकर खाना खा।'' ❁

ऋषि मुझसे मिलने आते हैं

एक दिन जब मैं, डॉ. प्रणव पण्ड्या जी, श्री वीरेश्वर उपाध्याय जी, श्री जितेन्द्र जी और दो तीन और लोग गुरुजी से दोपहर में लेखन करने का शिक्षण ले रहे थे। गुरुजी ने कहा, ''कल से तुम लोग बाहर बैठना। टीन शेड में परदा लगा देंगे। मुझसे मिलने कुछ बड़े लोग आयेंगे।''

मैंने उपाध्याय जी से पूछा कि कौन आ रहा है? उन्होंने जवाब दिया, ''मुझे पता नहीं।''

दूसरे दिन स्वयं गुरुदेव साधना कक्ष में आए और कहा कि कल जो मैंने कहा था कि बड़े लोग मुझसे मिलने आयेंगे, तब मेरा मतलब किसी मिनिस्टर से नहीं था। ऋषि लोग मुझसे मिलने आते हैं।

गुरुजी जीवन के व्यवहारिक सूत्र बड़ी सरलता से समझा देते थे।

वे कहते थे यदि तुम्हें कोई बड़ी चीज खरीदनी है, तो उसमें प्रेम जोड़ देना। जैसे- रेडियो, घड़ी, फर्नीचर लेना हो तो बच्चों के जन्मदिन पर, पत्नी के जन्मदिन या विवाह दिन से जोड़कर आगे-पीछे खरीदना चाहिए। किसी के घर ठहरो या उपकार लो, तो शालीनता का पूरा ध्यान रखना चाहिए। मिठाई का डिब्बा ले आये या पिक्चर दिखा दिया, यह काफी नहीं है। या तो सीधे पैसे दो या यह पता लगाकर कि उनकी आवश्यकता की चीज क्या है, वह लाकर दो। ❁

एक दिन मैं और गुरुजी पैदल ही गायत्री तपोभूमि से घीयामण्डी जा रहे थे। सामने से एक शवयात्रा आई। गुरुजी बोले, ''जब कभी शवयात्रा देखो तो उसके साथ 2-4 कदम चलना चाहिये'' और वे उसके साथ चलने के लिये मुड़ गये। हम कुछ दूर शवयात्रा के साथ चले। फिर हम लोग घीयामण्डी गये। ❀

तीस वर्ष में सन् 1960 से 1990 के बीच यह दूसरा समय था। जब गुरुजी मुझ पर नाराज़ हुए। एक नया लड़का था केशरवानी, हम लोगों ने उसे स्टॉल पर काम दिया। वह सबेरे से शाम तक बुक स्टॉल खुला रखता था। अखण्ड ज्योति के सदस्य भी बहुत संख्या में बनाता था। हमने सारी जिम्मेदारी उसको सौंप दी, पर वह जो सदस्य बनाता था, उसमें ऊपरी रसीद पर तो तीन सौ पचास रुपया लिखता था, यानि आजीवन और कार्बन के नीचे 40 रुपया। कुछ दिनों बाद वह काफी पैसे लेकर भाग गया। ब्रह्मवर्चस के बुद्धिजीवी कहलाने वाले हम सभी की गुरुजी के सामने पेशी हुई। गुरुजी बोले ''दत्ता! किसी आदमी का ऊपरी दिखावा या कार्य नहीं देखा जाता। जिम्मेदारी देने के पहले गहराई से व्यक्तित्व परखना चाहिए। इतना ही खैर है कि यह केशरवानी तुझे अपना चेला बनाकर नहीं ले गया।'' मैं सिर नीचा करके सुनता रहा। हमें अपनी भूल का अहसास हुआ। हम लोग केशरवानी पर जरा ज्यादा ही विश्वास करने लगे थे। ❀

देवास में गुरुजी कहीं जाने की तैयारी में थे। जब वे कार में बैठ गये तो हाथ का इशारा करके मुझे बुलाया और बोले, ''दत्ता! एक बात सुन। देख, जो व्यक्ति चार आदमियों को मेरे साथ खाना खाने बुलाये उसके यहाँ तीन जायेंगे, जो तीन को बुलाये उसके यहाँ दो और जो दो को बुलाये उसके यहाँ केवल मैं जाऊँगा। ऐसा ही हो, इसकी जिम्मेवारी तेरी है।'' ❀

एक बार गुरुजी कहीं से आकर ग्वालियर होते हुए मथुरा जा रहे थे। हमें प्रोग्राम मालूम था। प्रात: 3.00-4.00 बजे का समय था। प्लेटफार्म पर कुछ लोग गुरुजी से मिलने आ गये। गुरुजी वहीं पर एक कुर्सी पर बैठ गये। 5-6 लोग गुरुजी के लिए चाय लाये थे। सब लोग थर्मस के साथ एक-एक कप ही लाये थे। गुरुजी ने पूछा, ''तुम में से कोई दो कप लाया है क्या? कोई नहीं लाया। सब गुरुजी के लिए एक कप लाये हैं।'' फिर कहा, ''स्टॉल से एक

कप ले आओ, मैं तुम सबकी केतली से थोड़ी-थोड़ी चाय ले लेता हूँ, बाकी तुम लोग पियो।'' सबको अपनी गलती का एहसास हुआ कि एक कप नहीं दो कप तो लाना ही चाहिए था। गुरुजी अकेले पीते ऐसा कैसे सम्भव था? ❀

अध्यात्म क्षेत्र में कुण्डलिनी जागरण का बहुत महत्त्व है। एक दिन एक व्यक्ति गुरुजी के पास पहुँचा और बोला ''गुरुदेव, मेरी कुण्डलिनी जगा दीजिए।'' पूज्यवर ने उसे ऊपर से नीचे तक देखा व एक क्षण रुक कर बोले, ''बेटा! गधा कितना वजन उठा लेता है।'' प्रश्नकर्ता कुछ समझ नहीं पाया। ''कुण्डलिनी जागरण से गधे का क्या ताल्लुक?'' गुरुजी की ओर हैरानी से देखता रहा।

फिर गुरुजी ने कहा-''और बकरा।'' वह व्यक्ति गधे व बकरे के वजन उठाने की क्षमता की तुलना करने लगा। बोला, ''बकरे से तो गधा दस गुना अधिक वजन ढो सकता है।'' गुरुदेव ने आगे कहा, ''बेटे! अभी तो तू बकरे से भी छोटा है।'' अब स्थिति स्पष्ट थी कि पात्रता के विकास से ही प्रतिभा प्राप्त होती है। अन्यथा बिना परिश्रम की शक्ति अपने ही विनाश का कारण बनती है। ❀

एक दिन एक परिवार गुरुजी के पास मिलने गया। पूज्यवर उन दिनों प्रत्येक व्यक्ति से, अलग-अलग कुशल क्षेम पूछते थे। उन्होंने सभी से पूछा। सबने अपनी-अपनी बात बताई पर जब बहू की बारी आई तो उसने कहा, ''अकेले में बताऊँगी गुरुजी।'' गुरुजी बोले, ''अच्छा बेटा! मैं तुझसे अकेले में बात करूँगा।'' सभी परिवार के सदस्य गुरुजी से विदा लेकर नीचे उतर गये। तब उन्होंने बहू से पूछा, ''बता बेटा! क्या बात है?'' बहू ने कहा, ''गुरुजी, मेरी सास बहुत लड़ती है।''

गुरुजी ने कहा, ''बेटी! मैं तुझे एक मंत्र देता हूँ। अब कभी लड़ाई नहीं होगी।'' फिर जोर से कहा, ''अपनी सास की ''हाँ'' में ''हाँ'' मिलाया कर।'' इस प्रकार पारिवारिक विग्रह को टालने का कितना सरल समाधान दे दिया। ❀

गुरुजी पल भर में सबको अपना बना लेते थे।

यह उनकी जबरदस्त कला थी। काम के व्यक्ति को वे मीलों दूर से भी पहचान लेते थे। गुरुजी के कार्यक्रमों की श्रृंखला चल रही थी। वे अशोकनगर से होकर आगे किसी प्रोग्राम में जाने वाले थे। हमने गुरुजी से कहा, ''गुरुजी! आप बस अपना पाँच मिनट अशोकनगर में दे देना।'' गुरुजी ने कहा, ''पाँच

मिनट में तू क्या कर लेगा?'' हमने कहा ''गुरुजी! हम मंच की तैयारी रखे रहेंगे। जनता को एकत्र भी कर लेंगे। आप बस पाँच मिनट में उद्‌बोधन देकर निकल जाना।'' गुरुजी बोले, ''लोग-बाग पैर छूने के लिये दौड़ेंगे। पाँच-दस मिनट तो इसी में निकल जाएगा।'' मैंने कहा, ''गुरुजी! मैं विश्वास दिलाता हूँ, कोई आपके पाँव न छुए, हम ऐसी व्यवस्था करके रखेंगे। जिससे आपका अधिक समय न लगे।''

हमने वैसी ही व्यवस्था करके रखी थी। एक विद्यालय के प्राचार्य जी ने हमसे कहा, ''मुझे तो आप सबके जूते चप्पल रखने की सेवा दे दो।'' हमने कहा, ''यह सेवा तो हम किसी भी बच्चे से करवा लेंगे। आप कोई दूसरी सेवा ले लो।'' पर उन्होंने आग्रह कर वही सेवा अपने लिए चुनी।

गुरुजी मंच पर आकर बैठ गये। इधर-उधर नजरें दौड़ाईं। उन प्राचार्य जी पर भी नज़र पड़ी। गुरुजी, ने मुझे बुलाया और उनकी ओर इशारा करके कहा, ''मुझे तो उस व्यक्ति के हाथ से पानी पीना है।'' मैं तुरंत उन प्राचार्य महोदय के पास जाकर बोला, ''गुरुजी आपके हाथ से पानी पीना चाहते हैं। जाइए, आप गुरुजी को पानी पिला दीजिए।'' उन्हें थोड़ा संकोच हुआ बोले, ''मेरे हाथ तो साफ नहीं हैं।'' मैंने कहा, ''पर गुरुजी तो आपके ही हाथ से पानी पीना चाहते हैं।'' वे भी उस सौभाग्य से वंचित नहीं रहना चाहते थे। उन्होंने ट्रे पकड़कर गुरुजी को पानी पिलाया।

गुरुजी ने वहाँ लोगों की श्रद्धा देखी, तो स्वयं ही आधे-पौन घण्टे का प्रवचन दिया। फिर बोले, ''अच्छा! करने दो सभी को प्रणाम।'' और चरण-स्पर्श करने की अनुमति भी दे दी। फिर उन्होंने पूछा, ''अच्छा! भोजन की व्यवस्था भी की है क्या?'' हमने कहा, ''जी गुरुजी, हमने सोचा, यदि आपका भोजन करने का मन होगा और अनुमति देंगे, तो हम भोजन भी करा देंगे। सो हमने भोजन की व्यवस्था भी पहले से ही बनाकर रखी है।'' इस प्रकार वे सूक्ष्म द्रष्टा अपने बच्चों की सभी इच्छाएँ पूरी करते रहे हैं। किसी को किसी भी प्रकार से निराश नहीं किया। ❀

मेरे एक मित्र मेहता जी रतलाम में डायरेक्टर एग्रीकल्चर थे। उनके पुत्र नरेश मेहता गुरुजी के पास आये और बोले, ''गुरुजी, मैंने दक्षिण भारतीय लड़की से शादी की है। बहुत अच्छे स्वभाव की है। मेरे साथ पढ़ती थी।

पिताजी उसे स्वीकार नहीं कर रहे हैं, क्या करूँ?'' गुरुजी बोले, ''तेरे पिताजी क्यों स्वीकार नहीं करते? तू जाकर बोल कि यदि तुम दक्षिण भारत की लड़की स्वीकार नहीं करते तो फिर माँ को दक्षिण भारतीय साड़ी क्यों पहनने देते हो? वहाँ के चावल और लौंग इलाइची भी खाना बंद कर दो।'' बहू को स्वीकृति मिल गई। ❀

एक दिन चिन्मय ने माताजी (अपनी नानी) से पूछा, ''आप कहती हैं कि नारी युग आयेगा, यह कैसे होगा? आज की नारी तो बहुत पिछड़ी है। माताजी बोलीं, ''बेटे, सवाल पिछड़ेपन का नहीं है। अच्छा काम सब कर सकते हैं और युग पढ़ाई से नहीं, अच्छाई से आता है। नारियों में ईर्ष्या और द्वेष चला जायेगा, तो वही उनकी योग्यता और प्रखरता होगी।'' ❀

गुरुजी में करुणा का केवल भाव ही नहीं था बल्कि उनके अंदर करुणा जीवंत थी।

उनके बड़े बेटे श्री ओमप्रकाश भाई साहब सन् 1960-61 से मेरे मित्र हैं। कभी-कभी वे गुरुजी के जीवन की बहुत पुरानी बातें भी सुनाते हैं। एक दिन उन्होंने गुरुजी की युवावस्था की एक घटना सुनाई। यमुना में बाढ़ आई हुई थी। बहुत पानी भरा था। जानवर भी खूब मरे थे। लोगों के घर बह गये थे। बहुत हानि हुई थी। गुरुजी रोज बाढ़ का पानी देखने जाते थे। एक दिन देखा कि एक छोटे से टापू जैसे ज़मीन के टुकड़े पर एक कुत्ता घिरा हुआ है। पता चला वह तीन दिन से वहाँ फँसा है। तीन दिन से उसने कुछ नहीं खाया है। सब उसके प्रति दयाभाव प्रकट कर रहे थे, पर उसे बचाये कौन? कौन जाता? कोई जाने को तैयार नहीं था। वह भी एक कुत्ते को बचाने! कोई आदमी तो है नहीं जो सीधी तरह नाव पर बैठ जाय।

उन्होंने बड़ी मुश्किल से तीन रुपये में एक डोंगी वाले को तैयार किया। डोंगी उसके चारों तरफ चक्कर लगाती रही पर कुत्ता ऐसा डरा हुआ था कि वह कैसे भी नाव पर आने को तैयार नहीं था। युवक श्रीराम रोटी दिखाते रहे पर वह नहीं आया। 2-3 चक्कर लगाने के बाद डोंगी वाले बोले, ''चलो भाई। मरने दो कुत्ते को।'' युवक श्रीराम बोले, ''एक चक्कर और।'' जैसे ही डोंगी उसके पास पहुँची कि युवक श्रीराम नाव से जमीन के उस टुकड़े पर कूद पड़े और बड़ी फुर्ती से उस कुत्ते को उठाकर वापस डोंगी में कूद पड़े। कुछ क्षण

डोंगी जोर से डगमगाई, पर श्रीराम कुत्ते के साथ डोंगी पर थे। डोंगी वाले ने युवक श्रीराम को बेहिसाब गाली दी ''बोला, खुद मरे तो मरे मुझे भी मारेगा।'' वह तब तक गाली देता रहा जब तक कि किनारे पर नहीं आ गया।

उन्होंने डोंगी वाले को 5 रुपये दिये फिर भी डोंगी वाले ने उतरते समय कुत्ते को एक ज़ोर की लात मारी और कुत्ता, कूँ-कूँ, कंऊँ-कंऊँ, करता हुआ एक तरफ को दौड़ गया। ऐसा था गुरुजी का बचपन। ❀

दूसरा प्रसंग उस समय का है, जब पूज्य गुरुदेव ने शरीर छोड़ दिया था। श्री ओमप्रकाश जी भाई साहब पुरानी बातें याद करके रोज लिख रहे थे। मैं प्रतिदिन त्रिपदा 5 में उनके पास जाता था। हम लोग चाय साथ ही पीते थे। एक दिन उन्होंने बताया, ''मेरे पास कल एक महिला आई और बोली आप गुरुजी के पुत्र हैं?'' मैंने कहा, ''हाँ।'' फिर वह बोली, ''मैं आपको कुछ बताना चाहती हूँ। आप मेरी बात सुनें। मैं आपका अहसान नहीं भूलूँगी।'' उसने बताया, ''आज से करीब 25 वर्ष पहले की बात है। मैं रेल में थर्ड क्लास डिब्बे में जा रही थी। मैं गेट के पास ही नीचे बैठी थी। मेरी आँख से आँसू बह रहे थे। एक वृद्ध व्यक्ति खिड़की के पास सिंगल सीट पर बैठा था।'' वह बोला, ''बहन यहाँ बैठ जाओ। तुम्हें हवा मिलेगी। पास में स्थान है। मैं, वहाँ चला जाऊँगा।'' मैं वहाँ बैठ गई। अगले स्टेशन पर वह पानी ले आया। बोला, ''बहन मुँह धो लो, पानी पी लो।'' मैं बोली, ''मुझे कुछ नहीं चाहिये।'' वह चुप बैठ गया। फिर, अगले स्टेशन पर पानी ले आया। बोला, ''बहन पानी पीने से कोई हानि नहीं होगी'' और बड़ी नम्रता से गिलास लिये खड़ा रहा। मैंने पानी पी लिया। फिर उसने पूछा, ''कहाँ जा रही हो?'' मैंने बताया यहीं पास में एक बहुत बड़े संत आ रहे हैं। उनसे मिलने जा रही हूँ। वह बोला अच्छा, ''तो क्या माँगोगी?'' मैंने कहा, ''मौत।'' वह बोला, ''मौत वो नहीं देंगे। और कुछ नहीं माँग सकती?'' मैं चुप हो गई, वह भी बैठ गया। मैं एक वर्ष पहले विधवा हो गई थी। मैंने उसे अपनी व्यथा सुनाई। इतने में स्टेशन आ गया और भीड़ घुस गई। ''पंडित श्रीराम शर्मा आचार्य जी की, जय। परम पूज्य गुरुदेव की, जय'' का शोरगुल करते, फूल माला लिये हुए लोग आगे बढ़े। वह वृद्ध व्यक्ति उठते-उठते कह गया, ''कल तू मुझसे मिलना।'' दूसरे दिन मैं वहाँ पहुँची, तो देखा कि जिन सन्त से मैं मिलने आयी थी, वे और कोई नहीं, वह वृद्ध व्यक्ति ही थे।

वहाँ बड़ी भीड़ थी। प्रणाम करने वालों की लम्बी लाइन लगी थी। उन्होंने जैसे ही मुझे देखा तो एक कार्यकर्ता से कहा, ''उस बेटी को मेरे पास ले आओ।'' ट्रेन में मैंने उन्हें बताया था कि मेरा कोई पुत्र भी नहीं है। मेरा भविष्य अंधकारमय है। मौत नहीं माँगूँ तो क्या माँगूँ? गुरुजी से जब मैं मिली तो उन्होंने कहा, ''बेटी मैं तेरा पिता हूँ, तू मेरी बेटी है। इसको अच्छी तरह समझ ले।'' और एक कार्यकर्ता को बुलाकर कहा, ''तुम अपना काम किसी और को सँभलवा दो, और कहीं से कोई नवशिशु लेकर ही तुम मेरे पास आना। मैं तीन दिन यहाँ हूँ। बस यही काम तुम्हें करना है।'' गुरुजी की आज्ञा मान वह मैटरनिटी होम गया। वहाँ पता चला एक महिला की प्रथम डिलीवरी हुई थी। डिलीवरी में माँ मर गयी है। पिता ने बच्चे को लेने से मना कर दिया है। उन कार्यकर्ता ने उस बच्चे को गोद लेने की बात कही।

दूसरे दिन लेडी डॉक्टर स्वयं कार्यक्रम स्थल पर आयी। यह देखने कि नवजात शिशु को कौन लेने वाला है, और कैसे पालेगा? वह यज्ञ स्थल पर पहुँची तो अपार भीड़ देखकर और गुरुजी से मिलकर वह बहुत प्रभावित हुई। फिर गुरुजी से बोली कि लगता है, ''बच्चे को सच्चे माँ-बाप यहीं मिलेंगे।''

मुझे बच्चे को लेने में थोड़ा संकोच हो रहा था। मालूम नहीं किस जाति का होगा। माता-पिता कैसे होंगे? घरवाले क्या कहेंगे? आदि नाना विचार मेरे मन में आ रहे थे। गुरुजी समझ गये। गुरुजी ने बच्चे को गोद में ले लिया, और बोले, ''बस, यह अब ब्राह्मण हो गया। बेटी! तुझे याद है न, मैं तेरा पिता हूँ। तुझसे कोई कुछ नहीं कहेगा। लोग तेरी सराहना करेंगे, सहयोग देंगे। तू बस बच्चे को पाल और सारी व्यवस्था होती चली जायेगी। यह पिता हर क्षण तेरे साथ रहेगा। यह तेरा शानदार बेटा होगा। तेरी इतनी सेवा करेगा, कि और कोई बेटा क्या माँ की सेवा करेगा।'' मैंने उसका नाम पीयूष रख दिया। आज वह इंजीनियर है, मातृ भक्त है, और जाने क्या जादू हुआ कि उस दिन से सब कोई मेरा कुछ ज्यादा ही ख्याल रखने लगे। मेरा हृदय भी रोने की अपेक्षा बच्चे की देखभाल में लग गया। वह महिला बोलती भी जा रही थी और रोती भी जा रही थी।

फिर बोली, ''आपके पिता श्रीराम शर्मा मेरे भी पिता हैं, वे कभी नहीं मर सकते। भाई साहब, आपको सब बताकर मैं हलकी हो गयी। मेरा शान्तिकुञ्ज आना सफल हो गया।''

गुरुजी-माताजी एक प्राण-दो शरीर थे।

वे जीवनभर खादी पहनते रहे और वह भी गिने चुने कपड़े। लेकिन साफ और क्रीजदार। गुरुजी, माताजी के जन्मदिन और विवाह दिन पर स्वयं जाकर साड़ी खरीद कर लाते थे। एक बार कोई दूसरा व्यक्ति माताजी के लिए साड़ी लाया तो गुरुजी दु:खी हो गये। बोले, ''माताजी की साड़ी तू लाया, तो तूने मुझे दु:खी कर दिया। तू अपनी साड़ी वापिस ले जा। माताजी की हर साड़ी पर मेरी जिम्मेवारी साड़ी की नहीं बल्कि स्नेह की भी है।'' ❁

जब गुरुजी अज्ञातवास में थे, तो माताजी सख्त बीमार पड़ीं। मैं उन्हें देखने आया था। माताजी ने कहा बेटा, ''मुझे कोई दिल का दौरा नहीं है। मैंने साधना में गुरुजी को देखा। वे ठण्ड में सिकुड़ रहे थे। उनका कुर्ता फटा था। उनका कष्ट देखकर मैं चीख उठी। बस मुझे यही तकलीफ है।'' मैंने कहा, ''फिर भी माताजी, आप अपना इलाज तो करवा ही लीजिए।'' माताजी बोलीं, ''तू डाक्टर है। तेरी बात भी मान लेती हूँ।'' इधर गुरुजी को भी माताजी की अस्वस्थता का आभास हो गया था और वे कुछ दिन के लिये शान्तिकुञ्ज लौट आये थे। ❁

ऐसी ही एक घटना माताजी ने घीया मंडी में मुझे बताई थी। ''गुरुजी बाहर गये हुए थे। अखण्ड दीपक की आग पूजा स्थल पर लग गई। मैं घबरा गई, कहीं गुरुजी को कुछ हो तो नहीं गया। मैं बहुत घबराई, मैंने अपने भगवान से कहा कि जब तक मुझे गुरुजी की सूचना नहीं मिलेगी, मैं कुछ ग्रहण नहीं करूँगी। मैं बराबर चिंता में डूबी रही। शाम को किसी ने दरवाजा खटखटाया, मैंने खोला। गुरुजी सामने थे। बोले, ''शैलो, तुझे क्या हो गया?'' मैंने कहा, ''मैं ठीक हूँ। आप कैसे हो?'' तब गुरुजी ने कहा, ''शैलो, तू क्यों चिंता करती है। कोई खास बात नहीं, खिड़की से मेरी ऊँगली कट गई। लेकिन चोट के बाद तुम्हारी घबराहट ने मुझे परेशान कर दिया, और मैं वापिस आ गया। तुम खाना खाओ और पानी पियो।''

सजल श्रद्धा-प्रखर प्रज्ञा

एक दिन हम लोग उनके पास बैठे थे, तो वे बोले, ''मैं शरीर छोड़ने पर कुछ ऐसा करूँगा जैसे कोई कुर्ता उतारता है, पर फिर मैं तीन स्थानों पर रहूँगा एक माताजी के पास, दूसरा सजल-श्रद्धा, प्रखर-प्रज्ञा तीसरा अखंड

दीपक।'' हमारे साथ अमेरिका के एक परिजन भी बैठे थे। उन्होंने कहा, ''गुरुजी, ये तीनों स्थान तो शान्तिकुञ्ज में हैं और हम लोग तो बहुत दूर हैं।'' इस पर गुरुजी बोले, ''बेटा! मेरा चौथा स्थान उगता हुआ सूर्य होगा।'' ❁

जब गुरुजी ने शरीर छोड़ने का मन बना लिया था, तो उसकी तैयारी वे बहुत पहले से ही करने लगे थे। उन्होंने संकेत देना प्रारंभ कर दिया था। जहाँ आज सजल-श्रद्धा, प्रखर-प्रज्ञा है, वहाँ पहले गुलाब की क्यारियाँ थीं। गुरुजी ने एक दिन सोनी जी, महेंद्र जी, कपिल जी, उपाध्याय जी आदि सभी को बुलाया। माताजी भी बैठी थीं और गुरुजी कहने लगे, ''माताजी, हमने अपने लिये स्थान पसंद कर लिया है। वह जो गुलाब की क्यारियाँ हैं, वह हमें बहुत पसंद आईं। हमने सोचा है, वही स्थान हमारे लिये ठीक है।''

माताजी ने कहा, ''आप क्या कह रहे हैं ?'' तो गुरुजी बोले, ''शरीर तो हम छोड़ेंगे ही। अमर तो हैं नहीं।'' फिर अन्य लोगों के उदाहरण देने लगे कि फलाने बाबाजी की समाधी वहाँ बन गई, फलाने की वहाँ। और हम लोगों से कहने लगे कि देखो! हमें बाहर मत ले जाना। हमारा मन है कि हम और माताजी यहीं रहेंगे। हमारी समाधी यहीं बनाना।'' हम सभी उदास हो गये, माताजी भी रोने लगीं। तब गुरुजी बोले, ''भावुक क्यों होती हो, क्या यह सच नहीं है ?'' माताजी बोलीं, ''पर बच्चों के सामने क्यों... ?'' गुरुजी बोले, ''आज नहीं तो कल, हमको जाना तो है ही।'' फिर उस दिन गोष्ठी आगे नहीं बढ़ी।

कुछ दिन बाद गुरुजी ने गोष्ठी में कहा कि हमने अपने दोनों के लिये जगह चुन ली है। हम दोनों के लिये दो घोंसले बनाओ। फिर एक दिन बोले, ''ऋषिकेश जाओ, वहाँ जो गुरुद्वारे में दो छतरियाँ बनी हैं, उन्हें देखकर आओ और हमारे लिये वैसी ही बना दो। एक का नाम होगा, सजल-श्रद्धा और दूसरी का प्रखर-प्रज्ञा।''

इसी दौरान जयपुर से वीरेन्द्र अग्रवाल जी आये, उनके सामने भी चर्चा हुई, तो उन्होंने कहा, ''गुरुजी, संगमरमर की छतरी बना दें?'' गुरुजी बोले, ''ठीक है, संगमरमर की बना दो।'' इस प्रकार गुरुजी ने अपने रहते ही सजल-श्रद्धा और प्रखर-प्रज्ञा का निर्माण करवा दिया था।

संगमरमर का चबूतरा बना, सामने का फर्श कच्चा रखा गया और गुरुजी ने घोषणा कर दी कि हमारा संस्कार यहीं होगा, हम कहीं बाहर नहीं जायेंगे। हम प्रखर-प्रज्ञा में रहेंगे और माताजी सजल-श्रद्धा में रहेंगी। हमारी चेतना यहाँ आगामी सौ वर्षों तक रहेगी और पूरे विश्व का यह शक्ति केंद्र होगा। यहाँ से हम सबको सजल-श्रद्धा और प्रखर-प्रज्ञा का अंश देते रहेंगे। यहाँ हर कोई हमसे मिल सकेगा, अपनी बात कह सकेगा। हम सबकी उसी प्रकार सेवा करते रहेंगे, जैसे जीवित अवस्था में कर रहे हैं। आज सजल-श्रद्धा, प्रखर-प्रज्ञा संपूर्ण गायत्री परिवार की श्रद्धा का केन्द्र है और परिजन यहाँ पर गुरुजी-माताजी की चेतना को अनुभव भी करते हैं और उनके दर्शन भी। ❁

जीवन के अंतिम क्षणों में गुरुजी, माताजी को निर्देश दे गये थे कि उनके शरीर छोड़ने पर भी उनके किसी भी कार्य में कोई व्यवधान नहीं आना चाहिये। उस समय माताजी के उस स्वरूप को देखकर हमें आज भी आश्चर्य होता है, और साथ ही विश्वास भी कि वे साक्षात् पार्वती ही थीं, जिन्हें अपने शिव की अनश्वरता का पूर्ण अहसास था, अन्यथा साधारण माटी की महिला तो ऐसा नहीं कर सकती कि मालूम है, गुरुजी शरीर छोड़ चुके हैं, फिर भी प्रवचन दिया, सबसे मिलीं। जितनी भीड़ आई थी, सबको भोजन करने का निर्देश दिया। सबके भोजन कर चुकने के बाद ही गुरुजी के शरीर छोड़ने के विषय में बताया।

शाम को गुरुजी के पार्थिव शरीर को अग्नि के सुपुर्द कर दिया गया। उस समय हमारे आश्चर्य का ठिकाना नहीं था, जब माताजी ने नादयोग की घंटी बजाने का निर्देश दिया। हम उनकी ओर देखते रह गये। वे बोलीं, ''गुरुजी का निर्देश है, सब कार्य यथावत् चलेंगे, कोई कार्य रुकेगा नहीं। मैं यहीं हूँ, कहीं नहीं जा रहा, बस स्थूल देह त्यागी है।'' शाम को माताजी ने सबके लिये खिचड़ी बनाने का निर्देश दिया और कहा, ''कोई भूखा नहीं सोयेगा।'' अगले दिन सुबह के भी सभी क्रम यथावत् चले, माता जी सबसे मिलीं भी। ❁

गुरुजी के अंतिम समय के शब्दों को सुनने के लिए हम लोग लालायित थे। बड़ी तड़प थी। सो माताजी से जब अनुनय-विनय किया तो उन्होंने कहा, ''वे बहुत पहले से ही कहने लगे थे कि मैं गायत्री जयंती के दिन यह शरीर छोड़ दूँगा। उस दिन साढ़े चार बजे मैं गुरुजी को प्रणाम करके

6:30 बजे स्टेज पर पहुँच गई। मैंने भाषण भी दिया। चार शादियाँ थीं, बच्चों को आशीर्वाद भी दिया, तिलक किया, माला पहनाई, बच्चों को खाना भी खिलाया। प्रणाम में केवल पाँच व्यक्तियों को मैंने फूल दिये और आगे मैं फूल न दे सकी। कारण, मेरा शरीर प्रणाम करा रहा था, पर मुझे मालूम था कि गुरुजी ने अपने शरीर से विदाई ले ली है। चलते समय गुरुजी ने हाथ पकड़कर अंतिम बार मुझे बस इतना ही कहा था कि मैं गायत्री परिवार के बच्चों की जिम्मेदारी तुम पर और केवल तुम पर छोड़े जा रहा हूँ। मैंने भी वायदा निभाने की सौंगध खाई।''

गुरुजी का लिखा यह गीत, जिसे माताजी ने हम सबके लिए गाया है-

तुम न घबराओ, न आँसू ही बहाओ अब,
और कोई हो न हो, पर मैं तुम्हारा हूँ।
मैं तुम्हारे घाव धो, मरहम लगाऊँगा,
मैं खुशी के गीत गा-गाकर सुनाऊँगा।

यह उनके न केवल भाव थे, बल्कि उनका जीवन था, जो हमने देखा।

श्री दिलीप कुमार दत्ता

(श्री दिलीप कुमार दत्ता, डॉ. अमल कुमार दत्ता के छोटे भाई हैं। डॉ. दत्ता का पूरा परिवार पूज्य गुरुदेव से सन् 1960 से सम्पर्क में रहा है और आज भी मिशन के कार्यों में सक्रिय है।)

बालक को जीवन दान

श्री दिलीप कुमार दत्ता, डॉ. दत्ता के भाई हैं, उनके पास भी गुरुजी-माताजी के ढेरों संस्मरण हैं। वे बताते हैं, ''सन् 1967 में, मैं व मेरे भाई डॉ. ए. के. दत्ता का परिवार दोनों एक साथ देवास में रहते थे। वहीं दोनों की सर्विस थी। गायत्री यज्ञों की शृंखला में गुरुदेव देवास आए और हमारे यहाँ ही ठहरे। कार्यक्रम की समाप्ति पर जाते समय गुरुजी ने कहा, ''दिलीप तुझे मालूम है, मैं तुझे क्या देकर जा रहा हूँ?'' मैं हैरानी से उन्हें देखता रहा। मुझे कुछ समझ नहीं आया। उन्होंने पुनः कहा, ''तेरे दो बच्चों में से एक का जीवन आज ही समाप्त था। मैं उसे जीवन देकर जा रहा हूँ।''

मैं अवाक् रह गया। जिसकी मैं कल्पना भी नहीं कर सकता था। गुरुवर ने उसे देख लिया और विधान बदलकर मुझे कृत-कृत्य कर दिया। ऐसी अनेक घटनाएँ मेरे जीवन में बीती हैं जब पूज्यवर ने संरक्षण प्रदान किया है। आज मेरा वह बच्चा अमेरिका में इंजीनियर है।''

मेरी नौकरी, उनका आशीर्वाद

ऐसे ही एक बार मैंने गुरुजी से कहा, ''गुरुदेव मेरी इज्जत का सवाल है। मेरे दो भाई डॉक्टर हो गये हैं।'' गुरुजी ने पूछा, ''तूने क्या पढ़ाई की है ?'' मैंने कहा, ''एम.काम. किया है।'' जवाब मिला, ''तब तू डॉक्टर कैसे बनेगा ?'' मैंने कहा, ''गुरुजी, डॉ. नहीं बन सकता इसलिये तो आपके पास आया हूँ।'' गुरुजी बोले, ''अच्छा! तुझे डॉक्टर के समकक्ष बना दिया जाय तो चलेगा ?'' मैं खुश होकर हामी भरकर घर चला गया तथा डॉक्टर के समकक्ष 'फेमिली प्लानिंग' ऑफिसर के पद के लिये अप्लाई किया। कुछ दिनों बाद मुझे पत्र मिला, लिखा था 'रिग्रेट' यानि नॉट सिलेक्टेड। मैं फिर गुरुजी के पास गया। कहा, ''गुरुजी, मुझे तो रिजेक्ट कर दिया गया।'' गुरुजी ने वह पत्र हाथ में लिया और बोले, ''अरे तेरा हो जायेगा सब कुछ।'' मैंने कहा, ''गुरुजी आपको अंग्रेजी नहीं आती है। इसमें लिखा है रिग्रेट'' गुरुजी ने पुनः कहा, ''चिंता मत कर। सब हो जायेगा तेरा।'' 15 दिन बाद दूसरा पत्र आया। लिखा था यू आर सिलेक्टेड एण्ड पोस्टेड एट रायगढ़। मैं ट्रेन से कहीं जा रहा था। स्टेशन पर पर्चा पढ़ा, रूपराम नगर कॉलोनी में गुरुजी का कार्यक्रम है। मैं तुरंत उतर कर गुरुजी से मिलने चल दिया। गुरुजी के पास पहुँचा व बताया गुरुजी, ''मेरा सलेक्शन हो गया।'' उन्होंने झट से कहा, ''क्यों रे, तूने तो कहा था कि मुझे अंग्रेजी नहीं आती। जा, ट्रेन खड़ी मिलेगी।'' मैं तुरंत वापिस लौट गया और आश्चर्य! सचमुच ट्रेन खड़ी ही मिली। मै बैठा और ट्रेन चल दी, जैसे वह मेरा ही इंतजार कर रही थी। ऐसे कृपालु थे पूज्यवर।

उनकी सर्वज्ञता

यह उन दिनों की बात है जब शान्तिकुञ्ज में लगातार वानप्रस्थ शिविरों का आयोजन चल रहा था। मैं अपने दोस्त के साथ शान्तिकुञ्ज आया। प्रवचन के बाद हम दोनों हरकी पैड़ी घूमने चले गये। लौटकर जब वंदनीया माताजी के पास गये, तब तक गुरुदेव वानप्रस्थ संस्कार सम्पन्न करा कर ब्रह्मदण्ड वितरित करके ऊपर अपने कमरे में जा चुके थे।

माताजी ने हम दोनों को ऊपर, गुरुजी से मिलने भेज दिया। गुरुजी ने दो ब्रह्मदण्ड मँगाए व एक मुझे दे दिया। फिर मेरे दोस्त को देखकर बोले, ''तुझे ब्रह्मदण्ड दूँ कि नहीं। तू जब घर से आया तो तूने अपनी पत्नी को थाली फेंक कर मारी, जिससे उसकी नाक पर चोट लग गई। अब तू ब्रह्मदण्ड से मारेगा। चाय में शक्कर कम थी न। ब्रह्मदण्ड से मारेगा तो मुझे भी पाप लगेगा।''

घटना बिलकुल सत्य थी। मेरा दोस्त सुनकर हैरान रह गया कि गुरुजी को कैसे मालूम हुआ? गुरुजी के चरणों में श्रद्धावनत होकर उसने माफी माँगी और आगे से ऐसा न करने की कसम खाई। तब गुरुदेव ने उसे भी ब्रह्मदण्ड प्रदान किया।

एक और संस्मरण है। मुझे हरिद्वार आना था और उस दिन मुझे तेज बुखार था। मेरा रिजर्वेशन भी नहीं था। फिर भी गुरुजी से मिलने की उत्कंठा इतनी अधिक थी कि मैं घर न जाकर ट्रेन में ही बैठा रहा। रिजर्वेशन कराने जाने की भी मुझमें हिम्मत नहीं थी। अचानक, एक कुली आया और बोला, ''आपको रिजर्वेशन चाहिए?'' मैंने कहा, ''हाँ'' और बिना कुछ पूछे उसे टिकट और पच्चास रुपये दिये। वह टिकट और पैसा लेकर चला गया। उसके जाने के बाद मन में विचार आया, यदि वह न लौटा तो क्या होगा? जो टिकट था वह भी गया।

फिर सोचा, अब जो होगा देखा जायेगा। थोड़ी ही देर में वह कुली आ गया और जिस सीट पर मैं बैठा था, वह उसी सीट का रिजर्वेशन करा कर लाया था। मैंने भगवान को धन्यवाद दिया और चैन से सो गया।

हरिद्वार पहुंचा। माताजी से मिला तो उन्होंने कहा, ''बेटा, गुरुजी के दो फोन आ गये। तुझे ऊपर बुलाया है।'' मैं कुछ समझा नहीं। मन में सोचा, मैं तो अभी आ रहा हूँ। दो फोन पहले से कैसे आ गए?

ऊपर पहुँचा। देखते ही गुरुजी ने कहा, ''रिजर्वेशन मिल गया? और बुखार भी उतर गया न?'' मैंने गुरुजी से पूछा, ''गुरुजी आप कहाँ पर थे?'' पर फिर तुरंत ही मन में सोचा, मैं क्या पूछ रहा हूँ? वे तो सर्वज्ञ हैं, हो न हो, उस सहृदय व्यक्ति के रूप में गुरुदेव ही तो पहुँचे थे और तुरंत श्रद्धावनत हो उनके चरण पकड़ लिये। बहुत से संस्मरण हैं, पूरा जीवन क्या अनेकों जन्म उनका ऋण चुकाने में लगा दें तो भी संभव नहीं है, बस इतना ही कहूँगा कि न जाने किन जन्मों के पुण्य होंगे जो गुरुदेव हम लोगों का इतना ध्यान रखते हैं।

3. गुरुसत्ता के साथ मनोविनोद के क्षण

गुरुजी काम करने के साथ-साथ मनोरंजन भी करते रहते थे। कितना भी काम का दबाव हो वे वातावरण को कभी बोझिल नहीं होने देते थे। सबके साथ हँसते-हँसाते रहते थे। उनके हास्य में भी कोई न कोई रहस्य या शिक्षण अवश्य छिपा रहता था। ऐसा लगता था जैसे उनकी कोई भी बात व्यर्थ नहीं है। हँसते-हँसाते भी वे कुछ न कुछ सिखा देते थे। पढ़ें उनकी विनोद प्रियता से संबंधित कुछ प्रसंग -

मूछों वाला मुन्ना

श्री वीरेश्वर उपाध्यायजी एवं श्रीमती कृष्णा उपाध्याय

श्री गिरजा सहाय व्यास चार आत्मदानियों में से एक हैं। उनके छोटे पुत्र मथुरा आये, तब बहुत छोटे थे। सभी उसे ''मुन्ना'' कहते थे। उस बालक को गुरुवर की गोद में खेलने का बहुत सौभाग्य मिला था। समय के साथ वे बिलासपुर चले गये। बड़े होकर इंजीनियर बन गये।

एक बार वे शान्तिकुञ्ज आये। पूज्यवर से मिलने के क्रम में उन्होंने बताया कि मैं गिरजा सहाय व्यास का लड़का हूँ। गुरुजी उस समय लेखन कर रहे थे। जब उन्होंने सुना कि गिरजा सहाय का पुत्र है तो कलम रोक कर ऊपर से नीचे तक देखा। फिर पूछा-''तुम्हारा क्या नाम है ?'' उसने कहा-''मुन्ना।''

गुरुजी को झट से चुहल सूझी और जोर से बोले-''वीरेश्वर! इधर आना।'' और वे पैर के ऊपर पैर रख बच्चों से मनोरंजन के मूड में आ गये व कहा-''जल्दी आ, देख तुझे मूछों वाला मुन्ना दिखाता हूँ।'' पहली आवाज में ही मैं, लेखन छोड़कर गुरुवर के सामने तक पहुँच चुका था। उसी वाक्य को दुहराते हुए उन्होंने फिर कहा, ''देख! तुझे मूछों वाला मुन्ना दिखाता हूँ। देख! यह वही है न, जो हमारे साथ इतना सा (दोनों हाथ से छोटेपन का इशारा करते हुए) खेला करता था।''

माजरा समझकर, मैं भी हँसने लगा। गुरुजी ने बालक से हाल-चाल पूछा। बहुत स्नेह दुलार दिया एवं विदा किया।

विश्वामित्र-2 में चले जाओ

एक दिन गुरुजी के पास एक सज्जन आये और बोले, ''गुरुजी, मुझे मुक्ति चाहिये।'' गुरुजी उससे दो बार बोले, ''मुक्ति चाहिये, तुझे मुक्ति चाहिये। अच्छा! ठीक है बेटा। जा, विश्वामित्र-2 में चला जा। तुझे मुक्ति मिल जायेगी।'' हम लोगों को सुनकर हँसी आ गई। क्योंकि मुक्ति जीजी उन दिनों विश्वामित्र -2 में ही रहती थीं।

वह सज्जन नीचे उतरे और विश्वामित्र-2 में पहुँचे। मुक्ति जीजी सामने ही बैठी थीं। उन्होंने पूछा, बताइये भाई साहब, किससे मिलना है। वे सज्जन बोले, ''गुरुजी ने मुझे यहाँ भेजा है।'' मुक्ति जीजी ने पूछा क्या काम है? वे बोले, ''मुझे मुक्ति चाहिये।'' मुक्ति जीजी बोलीं, ''मेरा ही नाम मुक्ति है। कहिये।'' सुनकर वे झेंप गये और बोले, ''मेरा मतलब... मेरा मतलब...उस मुक्ति से था।'' सुनकर मुक्ति जीजी को भी हँसी आ गई और गुरुजी ने आपसे मजाक किया है, कहकर उन्होंने उन्हें विदा किया।

जब मुक्ति जीजी, गुरुजी के पास गईं तो गुरुजी उनसे बोले, ''आज एक व्यक्ति मुझसे मुक्ति माँगने आया था। मैंने उसे तेरे पास भेज दिया। उसे मुक्ति मिली कि नहीं।'' फिर तो हम सब खूब हँसे।

अच्छा तो हम मूँछ मुँड़ा लेते हैं

(डॉ. मंजू चोपदार, 1971 में दीक्षा ली, 1990 में पूर्ण रूप से शान्तिकुञ्ज आ गईं)

अपने बुजुर्गों के मुँह से मैंने सुन रखा था कि व्यक्ति जिस किसी भी प्रतिभा का धनी हो, उसे उसकी आवश्यक सामग्री सदैव अपने साथ रखनी चाहिए। यह बात मुझे बहुत अच्छी लगी थी। चूँकि मैं स्त्रीरोग विशेषज्ञा थी, अत: प्रसूति के समय हेतु आवश्यक औजार अपने साथ बैग में ही रखने लगी।

इसी बीच मैं हरिद्वार आई। बैग हमेशा मेरे साथ ही रहता था। मैं ऊपर खाना खा रही थी, तभी माताजी-गुरुजी के पास खबर पहुँची कि ब्रह्मवर्चस के श्री भास्कर तिवारी जी की पत्नी को प्रसव का दर्द उठा है। अत: शीघ्र अस्पताल जाने की व्यवस्था करनी है। मैं डाक्टर हूँ। यह बहुत लोगों को मालूम था। किसी ने मुझे बुलाया और माताजी के पास भेजा। उन्होंने पूछा, मैंने कहा, ''माताजी मेरे पास सब सामान है, कुछ आवश्यकता नहीं पड़ेगी।''

अब तो माताजी बहुत खुश हुईं व बहुत आशीर्वाद देकर ब्रह्मवर्चस भेजा। शीघ्रता के कारण मेरे लिये कार निकलवाई गई, जिसे आदरणीय डॉ. प्रणव भाई साहब ने स्वयं चलाया। हम ब्रह्मवर्चस पहुँचे। सुखपूर्वक प्रसव करवाया। लड़का हुआ, जिसका नाम बाद में ''शरद'' रखा गया। शान्तिकुञ्ज वापस लौटकर वन्दनीया माताजी को रिपोर्ट दी। माताजी ने खूब पीठ थपथपाई। उस समय गुरुजी व माताजी दोनों धूप में, छत पर बैठे थे। माताजी ने जैसे ही सुना ''लड़का हुआ है।'' खुशी से बोल पड़ीं ''मैं जीत गई''।

पता नहीं, गुरुजी एवं माताजी की परस्पर क्या चर्चा हुई थी ? पर उसमें माताजी का कथन सत्य हुआ था। अत: गुरुजी ने कहा, ''अच्छा ! हम हार गये ? तो चलो, मूँछ मुँड़ा लेते हैं।'' उल्लेखनीय है कि गुरुदेव क्लीन शेव रहा करते थे। अत: वातावरण ठहाकों से गूँज उठा। पुत्र जन्म की खुशी अनन्त गुनी हो गई।

उसके मुँह से धुँआ निकले

श्रीमती श्रीपर्णा दत्ता, शान्तिकुञ्ज

एक बार मैंने गुरुजी से कहा, ''गुरुजी जो झूठ बोलते हैं, बेईमानी, चोरी करते हैं। यदि ऐसी कोई व्यवस्था होती कि पाप करते ही उसका पता लग जाता, तो सारे पाप नष्ट हो जाते।'' गुरुजी बोले, ''तू बड़ी होशियार है। अब जब मैं भगवान के पास जाऊँगा, तो तेरी बात कहूँगा कि जब कोई झूठ बोले तो उसके मुँह से धुँआ निकले, और चोरी करे तो उसके हाथ कट जायें।'' और जोर से हँस दिये। वहाँ उपस्थित अन्य लोग भी हँसने लगे।

आज उसे डाक खाने दो

(श्री राम खिलावन अग्रवाल एवं श्रीमती विमला अग्रवाल, 1959 में गुरुदेव के संपर्क में आये। 1963 में दीक्षा ली और 1985 में पूर्ण रूप से शान्तिकुञ्ज आ गये। वर्तमान में ब्रह्मवर्चस में कार्यरत हैं।)

सन् 1977, दिसम्बर की बात है। गुरुजी डाक स्वयं ही देखते थे। उन दिनों पोस्टमास्टर का काम श्री अभिनेष जी देखते थे। गुरुजी को डाक के विषय में कुछ जानकारी चाहिये थी। उन्होंने पास बैठे कार्यकर्त्ता से कहा, ''जा, अभिनेष को बुला ला।''

कार्यकर्त्ता पोस्ट ऑफिस में गया तो पता चला कि वह हरिद्वार के पोस्ट ऑफिस में गया है। उसने गुरुजी के पास आकर कहा, ''गुरुजी, अभिनेष तो डाक खाने गया है।''

गुरुजी अपने काम में तल्लीन थे सो पूरे शब्द ठीक से नहीं सुने और पूछा, ''क्या कहा?'' कार्यकर्त्ता ने पुनः अपनी बात दुहराई, ''गुरुजी, अभिनेष तो डाक खाने गया है।'' उसका बोलने का ढंग कुछ अलग सा था। सो गुरुजी को मजाक सूझी। बोले, ''अच्छा, डाक खाने गया है।'' फिर कुछ देर बाद पुनः बोले, ''अच्छा, अच्छा! डाक खाने गया है, तो अच्छा है, आज उसे डाक खाने दो, हमारा खाना बचेगा।'' और पूरा वातावरण ठहाकों से गूंज पड़ा। ऐसे विनोदी थे पूज्यवर।

इतने बड़े गुरुजी यज्ञ करा रहे हैं!

(श्री शिवप्रसाद मिश्रा जी, 1957 में अखण्ड ज्योति के पाठक बने, 1965 में दीक्षा ली और 1972 में पूर्ण रूप से शान्तिकुञ्ज आ गये।)

यह गायत्री तपोभूमी मथुरा का प्रसंग है। पूज्य गुरुदेव के पास मिलने वालों का ताँता लगा ही रहता था। उस समय 24 कुण्डीय यज्ञ चल रहा था। श्री रमेश चन्द्र शुक्ला जी यज्ञ सम्पन्न करा रहे थे। पूज्यवर उठने ही वाले थे कि एक आगन्तुक आया व गुरुजी से ही पूछने लगा ''पं. श्रीराम शर्मा कहाँ हैं? मैं उनसे मिलना चाहता हूँ।''

गुरुदेव को मजाक सूझा। उन्होंने कहा-''अरे! अरे! देख नहीं रहे हो! इतने बड़े गुरुजी यज्ञ करा रहे हैं।'' और उसे श्री रमेश चंद्र शुक्ला जी की ओर भेज दिया। चूंकि वह अनजान था। श्री शुक्ला जी लम्बी दाढ़ी रखते थे। सो उसने भी गुरुजी की बात पर अविश्वास नहीं किया। उनकी बात को सत्य समझकर वह श्री शुक्ला जी के पास गया और साष्टांग प्रणाम किया।

उसके प्रणाम करते ही श्री शुक्ला जी हड़बड़ा गये और बोले-''हैं..! हैं..! यह क्या कर रहे हो भाई! आप प्रणाम गुरुदेव का करिये। वे वहाँ बैठे हैं।'' तब उन सज्जन ने कहा, ''मैं तो उन्हीं से पूछकर आया हूँ। उन्होंने ही आपके पास भेजा है।''

अब तो उनसे कुछ कहते नहीं बना। समझ गये, गुरुदेव ने मजाक किया है। अतः उनसे पुनः बोले, ''भाई, मेरी बात का विश्वास करें। वे ही पंडित श्रीराम शर्मा आचार्य हैं। उन्होंने आपसे विनोद किया है। आप जाइये, उनके ही चरण पकड़िये।''

जब वह लौटकर आया तो पूज्य गुरुदेव ने मंद-मंद मुस्कराते हुए पूछा, ''पंडित श्रीराम शर्मा आचार्य नहीं मिले क्या?''

''क्यों हमारा मजाक बनाते हैं प्रभु..? कहते हुए वह सज्जन उनके चरणों में गिर पड़े।''

चरण मत छोड़ना

ऐसे ही एक दिन श्री रमेश चन्द्र शुक्ला जी और अन्य दो चार कार्यकर्ता पूज्य गुरुदेव के साथ कुर्सियों पर बैठे थे। इतने में एक सज्जन वहाँ आये। वह गुरुजी को पहचानते नहीं थे। श्री रमेश चन्द्र शुक्ला जी की लम्बी दाढ़ी और मूँछ देखकर उन्होंने सोचा, ''यही गुरुजी होंगे,'' और उनके चरण पकड़कर दण्डवत प्रणाम की मुद्रा में लेट गये। श्री रमेश चन्द्र शुक्ला जी हकबकाकर खड़े हो गये और बोले, अरे! अरे! क्या करते हो भाई, मैं गुरुजी नहीं हूँ।

इधर गुरुजी उसे बोले, ''पकड़े रहो, पकड़े रहो। चरण मत छोड़ना, जब तक गुरुजी आशीर्वाद न दे दें।''

उनकी बात सुनकर उन सज्जन ने और भी कसकर शुक्ला जी के चरण पकड़ लिये। श्री रमेश चन्द्र शुक्ला जी बोले, ''अरे भाई, सच मानो, मैं गुरुजी नहीं हूँ।'' और गुरुजी की ओर इशारा करते हुए बोले, ''गुरुजी इधर हैं।'' पर गुरुजी ने फिर से कह दिया, ''चरण मत छोड़ना। गुरुजी सहजता से आशीर्वाद नहीं देते।'' और हँस दिये।

वह सज्जन कुछ देर शुक्ला जी के पैर पकड़कर लेटे रहे। इधर सभी लोगों को हँसी आ गई। सबको हँसते देख उन सज्जन को लगा कि कहीं कुछ गड़बड़ है और वह उठकर खड़े हो गये। फिर न जाने क्या सोचा और उन्होंने गुरुजी के चरण पकड़ लिये।

गुरुजी को बैठने दो

उन दिनों पूज्यवर सारे देश में गायत्री एवं यज्ञ के प्रचार-प्रसार हेतु जाते थे। वे सदैव ही तीसरे दर्जे में सफर करते।

एक बार श्री रमेश चन्द्र शुक्ला जी व पूज्य गुरुदेव ट्रेन में चढ़े। उस दिन भारी भीड़ थी सो बैठने की जगह नहीं मिली। दोनों सामान को एक किनारे जमाकर थोड़ी देर खड़े रहे। कुछ देर बाद गुरुदेव ने रमेश चन्द्र शुक्ला जी की ओर इशारा करते हुए ट्रेन में एक व्यक्ति से कहा-''थोड़ी जगह हमारे गुरुजी को

बैठने के लिये दे दीजिए।'' श्री शुक्ला जी कुछ बोलते इसके पूर्व ही गुरुदेव ने उन्हें अपनी बड़ी-बड़ी आँखे दिखाते हुए चुप रहने का निर्देश दे दिया। बेचारे क्या करते, चुप रहे।

श्री शुक्ला जी लंबी दाढ़ी एवं लंबे बाल रखते थे। जिससे वे संत जैसे दिखाई पड़ते थे। अत: उन्होंने उन्हें सचमुच ही गुरुजी मान कर थोड़ी जगह बना दी। गुरुदेव ने उन्हें पुन: आँख दिखाकर बैठने का निर्देश दे दिया। मरता क्या न करता वे चुप-चाप बैठ गये। वे बैठ तो गये पर उन्हें बिल्कुल अच्छा नहीं लग रहा था कि वे बैठें और गुरुदेव खड़े रहें।

थोड़ी देर तक वे सोचते रहे फिर बोले, ''भाई इन्हें भी थोड़ी जगह दे दो।'' उन्हीं महाशय ने पुन: थोड़ी जगह बनाई और कहा-''आप भी बैठ जाइये।'' अब गुरुजी भी बैठ गये।

ट्रेन से उतरने पर जब श्री शुक्ला जी ने फिर से ऐसा न करने की बात कही तो उन्होंने कहा, ''तुझे बैठाया तो बाद में मुझे भी बैठने को मिल गया न। अन्यथा दोनों ही खड़े रहते।'' और ठहाका मार कर हँसने लगे। अब शुक्ला जी भी हँसने लगे और दोनों हँसते हुए आगे बढ़ गये।

मज़ाक में भी भविष्य की ओर इशारा

श्री केसरी कपिल जी, शान्तिकुञ्ज

मथुरा की बात है। श्री शरण जी सपरिवार मथुरा पहुँचे। रास्ते में उनका सामान चोरी हो गया। उनकी पत्नी इस कारण बहुत दु:खी हो रही थीं। वे गुरुजी से बोलीं, ''गुरु जी, हमने कौन सा पाप किया जो हमारा सारा सामान चोरी हो गया?'' इस पर गुरुजी ने पहले उन्हें थोड़ा समझाया फिर मजाक करते हुए कहने लगे, ''राम के जमाने में तो रावण सीता जी को भी उठा कर ले गया था। तुम्हारा तो सामान ही गायब हुआ है।''

फिर मेरी ओर इशारा करते हुए कहने लगे, ''परसों ये लखनऊ जाने वाला है इसका कोई बिस्तर ही उठा कर चलता बनेगा, तो यह क्या कहेगा?'' उस समय तो हम सबको हँसी आ गई और वातावरण हल्का हो गया। पर मज़े की बात यह हुई कि वास्तव में उस यात्रा के दौरान लखनऊ स्टेशन पर से कोई मेरा बिस्तर लेकर चलता बना।

कौआ कान न काट ले जाय

श्रीमती मुक्ति शर्मा, शान्तिकुञ्ज

एक दिन जब मैं माताजी को प्रणाम करने गई, तो जैसे ही मैंने माताजी को प्रणाम किया, माताजी हँस दीं। मैंने माताजी से हँसने का कारण पूछा तो बोलीं, ''रात को गुरुजी मजाक कर रहे थे। उन्होंने अखबार में कोई खबर पढ़ी है कि शहर में कोई ऐसा कौआ आया है जो महिलाओं के कान काट कर जेवर ले जाता है। फिर मुझे पूछने लगे कि हमारे यहाँ कौन कान में बाली पहनती है ? मैंने कहा, और का तो मुझे ख्याल नहीं पर मुक्ति पहनती है। इस पर गुरुजी बोले, ''हाँ, वह तो रोज ब्रह्मवर्चस से आना जाना भी करती है। तुम उसे समझा देना कि ध्यान रखे, देखना कहीं कौआ कान न काट ले जाये'' और हँसने लगे। सो मुझे, तुझे देखकर उनकी बात याद आ गई।'' मुझे भी माताजी की बात सुनकर हँसी आ गई और बोली गुरुजी भी मजाक करते रहते हैं। माताजी भी हँसने लगीं।

रात को मैंने इनसे माताजी की बात बताई तो इन्होंने कहा, ''तुमको तो हर बात मजाक लगती है। गुरुजी के मजाक में भी रहस्य छिपा रहता है। तुम अपनी ये बाली-वाली उतार कर रख दो।'' मैंने बालियाँ उतार कर रख दीं।

सुबह जब माताजी को प्रणाम करने गई तो माताजी बोलीं, लाली, ''बाली कहाँ गई।'' मैंने कहा माताजी आपने ही तो कल कहा था कि कौआ कान काट ले जाता है। मैंने इनसे सब बात बताई तो ये बोले कि गुरुजी की हर बात में कोई न कोई रहस्य रहता है सो तुम तो इन्हें उतार कर रख ही दो। इसलिये मैंने उतार दीं। माताजी बोलीं, ''कहने दे उसे, कहीं कौआ भी कान काट ले जाता है। ले भी जाता होगा तो मैंने तुझे संरक्षण दिया। तू तो अपनी बाली पहन, नंगे कान अच्छे नहीं लग रहे। आज ही पहन लेना।'' मैंने कहा, ''ठीक है, माताजी।''

कमरे में आकर मैंने अपनी बालियाँ पहन लीं। इन्होंने देखा तो कहा कि तुमने फिर लटका लीं। मैंने कहा माताजी ने संरक्षण दे दिया है। लेकिन वास्तव में गुरुजी की बात व्यर्थ नहीं थी। कुछ दिन बाद मेरी ससुराल से पत्र आया जिसमें लिखा था कि एक रात घर में चोर घुस आया था। अम्मा ने उसे देख लिया और तो वो कुछ नहीं कर पाया लेकिन अम्मा के कान का एक बूंदा खींच ले गया जिससे अम्मा का कान कट गया।

पत्र पढ़कर इन्होंने कहा कि ''देखा! तुम्हें तो माताजी ने संरक्षण दे दिया, पर घटना तो घटी ही, यहाँ नहीं तो, घर में। गुरुजी मजाक-मजाक में भी कुछ न कुछ संकेत करते रहते हैं।''

कौए वाली खबर भी सच थी। उसने शहर में आतंक मचा रखा था। प्राय: रोज ही कोई न कोई घटना घटती थी सो पुलिस उसके पीछे लगी थी। एक दिन फिर अखबार में छपा कि कान काटने वाला कौआ पकड़ा गया और उसके कोटर में से बहुत से कान के जेवर मिले।

मिठाई की दुकान तो खूब चलेगी

श्री मिठाईलाल जी चौधरी, ओरीजोत, बस्ती (उ. प्र.)

एक बार 1981 में जब मैं शान्तिकुञ्ज आया और पूज्यवर को प्रणाम करने गया तो मुझे देखते ही गुरुजी मज़ाक करते हुए बोले-''अहा! मिठाईलाल जी भी आ गये। अब तो इनके आगे पीछे सब बच्चे घूमते रहेंगे। इनकी मिठाई की दुकान तो खूब चलेगी।'' वहाँ उपस्थित सब लोग हँसने लगे। मुझे भी हँसी आ गई।

लेकिन गुरुजी के यह शब्द तो वरदान थे यह मैं नहीं जानता था। हमारे एक मित्र की मिठाई की दुकान थी। जो उन दिनों चलती नहीं थी पर उसके बाद जब भी मैं उनकी दुकान पर जाकर बैठ जाता तो थोड़ी सी ही देर में उनकी खूब बिक्री हो जाती। आज उनकी वह दुकान खूब तरक्की कर रही है।

गायत्री माँ चाय पिलाती थी

डॉ. अमल कुमार दत्ता, शान्तिकुञ्ज

सतीश भाई साहब की शादी थी। गुरुजी का एक भतीजा जिसका प्यार का नाम सत्तो है, अपने जीजा जी की खूब तारीफ कर रहा था। जब कुछ ज्यादा ही तारीफ होने लगी तो गुरुजी उसका मजा लेते हुए बोले, ''सत्तो! तुमने अपने जीजा जी की तारीफ तो बहुत की, बस एक ही बात की कमी रह गई कि तुमने यह नहीं कहा कि हमारे जीजा जी को गायत्री माँ चाय पिलाती थी।'' गुरुजी की बात सुनकर सब लोग जोर से हँस दिये।

भूत तुझे उठा ले जायेगा

एक बार गुरुजी हमारे यहाँ आये हुए थे। मुझसे बोले, ''डॉक्टर, तुझे कार चलाना नहीं आता।'' मैंने कहा, ''गुरुजी, मैं सीख रहा हूँ। मेरा मन था कि जब तक आप रहें कार मैं ही चलाऊँ पर अभी ठीक से सीख नहीं पाया।'' गुरुजी बोले, ''तू चला।'' मैंने ड्रायवर को पीछे भेज दिया। गुरुजी बतलाते रहे कार कैसे बचा-बचाकर चलायें और हम अमई पहुँच गये।

रमन जी की पत्नी निर्मला जीजी भी हमारे साथ थीं। हम और गुरुजी आगे बैठे थे। इतने में पीछे से ड्रायवर बोला, ''गुरुजी, इस दायीं तरफ की बिल्डिंग में भूत रहता है।'' गुरुजी बोले, ''निम्मो, यह ड्रायवर कह रहा है, यहाँ भूत रहता है। सँभलकर बैठ, नहीं तो भूत तुझे उठा ले जायेगा।'' वह बोलीं, ''गुरुजी, आप बैठे हैं तो डर क्या? '' गुरुजी बोले, ''गुरुजी तो सामने बैठे हैं, पीछे से तुझे उठा ले गया तो मैं क्या करूँगा?'' और हम सब हँसने लगे।

गुरुजी का बच्चा गुरुजी

मेरा छोटा बेटा सिद्धार्थ 3-4 वर्ष का था। उन दिनों हम लोग अशोक नगर में रहते थे। गुरुजी अशोकनगर आये हुये थे। लोगों ने उन्हें बहुत सी फूल मालायें पहनाई थीं। गुरुजी फूलमाला रखकर अपने स्थान से उठे तो सिद्धार्थ ने वह सब अपने गले में पहन लीं। इतने में पंडित लीलापत शर्मा जी वहाँ से निकले। वह बच्चे से हिले-मिले हुए थे। सिद्धार्थ ने उन्हें बुलाया और कहा,''मुझे प्रणाम करो, मैं गुरुजी हूँ।'' लीलापत शर्मा जी भी उसे ''गुरुजी प्रणाम! गुरुजी प्रणाम!'' कहते हुए गोद में उठा कर गुरुजी के पास ले गये और बोले, यह कहता है, ''मैं गुरुजी हूँ।'' गुरुजी ने उसे गोद में उठाया और बोले, ''ठीक तो कहता है यह अमलकुमार का बेटा। शेर का बच्चा शेर। बकरी का बच्चा बकरी। गुरुजी का बच्चा गुरुजी।'' और ठहाका लगाकर हँस दिये। हम सब भी जो वहाँ खड़े थे, हँसने लगे।

पर उनकी इस बात के पीछे गहरी प्रेरणा भी छिपी थी, जिसे हम सबने हृदयंगम भी किया। वे अपने प्रवचनों में भी अक्सर कहते थे, ''बेटा! शेर का बच्चा शेर होता है। तुम शेर के बच्चे बनना। बकरी के नहीं।''

कुहनी मारो!

श्रीमती विमला अग्रवाल, ब्रह्मवर्चस

अक्षय तृतीया का दिन था। सरोज अग्रवाल का विवाह दिन था व मेरे सवा लक्ष अनुष्ठान की पूर्णाहुति थी। तारीख से हमारा भी विवाह दिन था सो हम दोनों दम्पत्ति एक साथ वंदनीया माताजी के कमरे में दाखिल हुए। माताजी ने चुटकी लेते हुए कहा, ''अरे! आज तो सब इकट्ठे चले आ रहे हो, क्या बात है?'' मैंने कहा, ''माताजी, सरोज का विवाह दिन है।''

सरोज ने कहा, ''माताजी, आज भाभी का भी सवालक्ष का अनुष्ठान पूरा हुआ है।''

सुनकर माताजी ने कहा, ''लगता है दिन गिन कर अनुष्ठान शुरु किया था। यह तेरी भाभी है कि तू इसकी भाभी है।''

मैंने कहा, ''यह मेरी ननद है।'' तब माताजी ने पुनः चुटकी ली, ''ननद भाभी हो तो कुहनी मारो।'' और खिलखिला कर हँस पड़ी। उनकी बात सुनकर हम सबको भी हँसी आ गई।

रोटियाँ तो तुम्हारे जैसे ही फूल रही हैं

प्रणाम के समापन व लेखन के पश्चात् गुरुजी चौके में आकर थोड़ी देर टहलते थे। साथ-साथ सबके कार्यों का निरीक्षण करते, आवश्यक निर्देश देते व हँसी मजाक करते हुए हँसाते भी रहते। कभी-कभी कोई लड़की किसी से गुस्सा हो जाती तो उस समय तो गुरुजी-माताजी उसे समझा देते। किंतु बाद में गुरुजी सबका मनोरंजन करते हुए कहते-''छोरियो! रोटीयाँ तो तुम्हारे जैसे ही फूल रही हैं''।

सबको हँसी आ जाती। जो गुस्सा होती वह भी समझ जाती और गुस्सा भूलकर सबके साथ हँसने लगती।

4. हम पाँच शरीरों से काम कर रहे हैं

पूज्य गुरुदेव एक नहीं, अपितु अनेक शरीरों से काम करते थे। सन् 1984 में परम पूज्य गुरुदेव ने सूक्ष्मीकरण साधना की थी। उस साधना के कुछ विशिष्ट प्रयोजन थे, जिनका वर्णन भी उन्होंने उस वर्ष की अखण्ड ज्योति पत्रिकाओं में किया है। उसके विषय में अखण्ड ज्योति, जुलाई 1984 पृ. 2 पर वे लिखते हैं– ''हमारी सूक्ष्मीकरण प्रक्रिया का प्रयोजन पाँच कोशों पर आधारित सामर्थ्यों को अनेक गुनी कर देना है। मनुष्य में पाँच कोश हैं। अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय, आनंदमय। मोटे तौर से सभी कोशों के जागृत होने पर एक मनुष्य को पाँच गुनी सामर्थ्य सम्पन्न माना जाता है। पर दिव्य गणित के हिसाब से 5×5×5×5×5=3125 गुणा हो जाता है। चेतना के पाँच प्राण भी शरीर की परिधि में बँधे रहने तक पाँच विज्ञजनों जितना ही होते हैं, पर सूक्ष्मीकृत होने पर गणित की परिपाटी बदल जाती है और एक सूक्ष्म शरीर की प्रखर सत्ता 3125 गुनी हो जाती है। यह कार्य युग परिवर्तन प्रयोजन में भगवान् की सहायता करने के लिये मिला है। इस अवधि में हमें न बूढ़ा होना है, न मरना। अपनी 3125 गुनी शक्ति के अनुसार काम करना है।'' ''हमारे मार्गदर्शक की आयु 600 वर्ष से ऊपर है। उनका सूक्ष्म शरीर ही हमारी रूह में है। हर घड़ी पीछे और सिर पर उनकी छाया विद्यमान है। कोई कारण नहीं कि ठीक इसी प्रकार हम अपनी उपलब्ध सामर्थ्य का सत्पात्रों के लिये सत्प्रयोजनों में लगाने हेतु उपयोग न करते रहें।''

यह रहस्योद्घाटन भले ही उन्होंने 1984 में किया, किन्तु अपने नैष्ठिक परिजनों के सम्मुख वे स्वयं को प्रारंभ से ही प्रकट करते रहे हैं।

एक शरीर तो हिमालय में तप करता रहता है

(श्री रामाधार विश्वकर्मा जी बिलासपुर, छ.ग. के सक्रिय कार्यकर्ता थे। वे पूज्य गुरुदेव के प्रारंभिक शिष्यों में से एक रहे हैं। सन् 1953 में वे पूज्य गुरुदेव से जुड़े व सतत् संपर्क में बने रहे।)

वे बताते हैं कि एक बार वे पूज्यवर के पास मथुरा गये थे। पूज्यवर अपने कक्ष में पत्र लेखन में तल्लीन थे। फिर उन्हें याद आया कि किसी के पास मिलने जाने का निश्चय हुआ है। उन्होंने आधे पत्र ही लिखे थे, आधे ऐसे ही छोड़ दिये। अपने कक्ष में ताला लगाकर मुझे साथ लेकर निश्चित कार्यक्रम हेतु चल दिये। जब हम लौटकर आये, तो उन्होंने स्वयं ही ताला खोला। मैंने देखा, कि पूज्यवर ने जो आधे पत्र छोड़ दिये थे, वे भी पूरे हो गये हैं। मैंने गुरुजी से पूछा, ''गुरुजी! आपने तो आधे पत्र लिखे थे, फिर ये पूरे पत्र कैसे लिख गये?''

गुरुजी ने मुस्कुराते हुए कहा- ''बेटा! एक अकेले शरीर से इतना बड़ा काम कैसे हो पायेगा? मेरे पाँच शरीर हैं न। एक शरीर तो हिमालय में तप करता रहता है, अन्य शरीरों से युग निर्माण के बड़े कार्य हो रहे हैं। हमारा जो भी कार्य आपको दिखायी दे रहा है, यह केवल दो परसेण्ट ही है। तीसरे प्रतिशत का थोड़ा सा हिस्सा ही साधक स्तर के व्यक्ति जान पाये हैं। शेष 97 प्रतिशत कार्य तो हमने अदृश्य स्तर पर ही किया है, पूरी दुनिया से छिपाकर किया है।''

गुरुजी का नाश्ता

एक बार तो मैंने उनके सूक्ष्म शरीर के दर्शन भी किये। वह पल तो मुझे भुलाये नहीं भूलते। कुछ क्षणों तक तो मैं धर्म संकट में फँस गया था, मुझे लग रहा था कि मेरी जान ही निकल जायेगी। यह शायद सन् 1965 या 1966 की घटना है। परम पूज्य गुरुदेव चौबीस कुण्डीय यज्ञों की शृंखला में श्री उमाशंकर चतुर्वेदी के घर रुके हुए थे। जब गुरुदेव बिलासपुर में होते, तब मैं पूरे समय उनके आसपास ही रहता, क्योंकि श्री चतुर्वेदीजी को अनेक कार्य देखने होते थे। उस दिन भी ब्रह्ममुहूर्त में ही मैं, श्री चतुर्वेदी जी के घर पहुँच गया। गुरुवर कमरे में (जहाँ उन्हें ठहराया गया था) जा चुके थे। मैं सीधे ऊपर उनके कमरे में ही चला गया।

थोड़ी देर आपस में हम दोनों की बातचीत हुई। गुरुदेव के साथ जो सज्जन आये थे, उन्हें गुरुजी ने व्यवस्था हेतु यज्ञशाला भेज दिया। यज्ञ प्रारंभ होने में अभी काफी देर थी। इसी समय गुरुजी ने जाने मन में क्या सोचा, मुझसे कहा-''रामाधार! न मेरे शरीर को छूना, न किसी को पास आने देना, न तुम पास आना, दरवाजा हल्का लगा दो व तुम देखते रहना, कहीं मत जाना, यहाँ से हिलना मत। मैं नाश्ता करके आ रहा हूँ।''

क्योंकि मैं साधना करता था, थोड़ा बहुत साहित्य भी पढ़ता था। अत: स्पर्श की बात तो मुझे ठीक लगी, पर ''नाश्ता करके आ रहा हूँ!'' यह बात कुछ समझ नहीं आई। फिर भी गुरुजी का आदेश है, उसका प्राण-पण से पालन करेंगे मानकर जमा रहा। दरवाजा हल्का सा लगा दिया ताकि अन्दर भी दिखाई देता रहे व ठीक दरवाजे से सटकर बैठ गया तथा अन्दर-बाहर देखने लगा। मैंने देखा कि गुरुदेव ने चटाई बिछाई, उस पर लेट गये व ध्यानस्थ हो गये। मैं देखता रहा। इतने में क्या देखता हूँ कि गुरुवर के शरीर से एक छाया प्रकाश, नीले रंग के छाया गुरु निकले और आकाश की तरफ धीरे-धीरे उड़ चले। साधना में कहीं भी आ-जा सकने की क्षमता के विषय में पढ़ने को तो बहुत मिला था, पर उसे, उस दिन मैं प्रत्यक्ष देख रहा था। सो अधिक अचंभा तो नहीं हुआ किन्तु इसे अपनी आँखों से देख सकने पर स्वयं को धन्य-धन्य मान रहा था।

मैं गुरुदेव के विषय में चिन्तन करते हुए उनकी आज्ञानुसार वहाँ बैठा रहा। समय कब बढ़ रहा था, पता ही न चला। एक घंटा बीत गया। इतने में श्री चतुर्वेदी जी आये, मैंने इशारे से मना किया वे लौट गये। थोड़ी देर में फिर आये, कहा-विश्वकर्मा जी, मिलने वाले लोग बढ़ रहे हैं, मैंने इशारे से फिर मना किया। वे फिर चले गये। इसी प्रकार जब कई बार हुआ तो अन्त में चतुर्वेदी जी ने कहा-''भीड़ काफी बढ़ गई है, गुरुदेव को उठाना ही होगा। आप नहीं उठाते तो मैं उठाऊँगा।'' मैं पसीने-पसीने हो गया। हे भगवान! क्या करूँ? गुरुदेव का आदेश है, कैसे नहीं मानूँ ? पर दो घंटे से भी अधिक समय बीत चुका था। अब मेरा मन आशंकित होने लगा। कहीं कुछ अनहोनी न हो जाय। पर भीतर जा नहीं सकता, किसी को बता भी नहीं सकता, गुरुदेव का निर्देश था। मैं भीतर ही भीतर डर रहा था। फिर भी मैंने अपना कर्तव्य निभाया व चतुर्वेदी जी को

रोका। कहा-''कम से कम थोड़ी देर और इंतजार कर लीजिए, अन्यथा गुरु आज्ञा की अवहेलना का पाप सहना पड़ेगा।''

इस तर्क से चतुर्वेदी जी हार मानकर नीचे चले गये, पर मेरा मन बहुत भारी हो रहा था। पब्लिक को कैसे समझायें? मेरे तो जैसे प्राण ही निकले जा रहे थे। अब मैं मन ही मन कभी भगवान से तो कभी गुरुजी से अनुनय-विनय करने लगा, ''हे प्रभो! अब तो आ जाओ, मेरी लाज रख लो'' आदि-आदि प्रार्थना से अपने इष्ट को मना रहा था। उन्हें देखता भी जा रहा था। इतने में पूज्यवर के शरीर में कुछ हलचल हुई, प्रकाश शरीर आया जिसे पुनः मैंने स्पष्ट देखा और गुरुदेव उठ कर बैठ गये। मेरी जान में जान आई। मन में कहा, गुरुदेव! आज तो आपने मेरी कठिन परीक्षा ले ली। कृपा कर बचा लिया, शायद अब मैं आपकी चौकीदारी न कर सकूँ। लीलाधारी को तो रहस्य एक बार दिखाना था सो दिखा दिया। गुरुदेव उठे, तो मैं बस इतना ही कह सका, ''गुरुदेव आपका नाश्ता मुझे भारी पड़ रहा था।'' गुरुदेव मुस्कुरा दिये व भीड़ को सँभालने यज्ञस्थल की ओर चल दिये।

मैं हर एक के कमरे में रहता हूँ

(श्री गजाधर भारद्वाज जी सन् 1957 में पूज्य गुरुदेव से जुड़े व सन् 1977 में पूज्य गुरुदेव के कहने पर सपरिवार शान्तिकुञ्ज में समर्पित हो गये।)

सन् 1973 में चौबीसवें प्राण प्रत्यावर्तन शिविर में, मैं सम्मिलित हुआ था। मैं वशिष्ठ भवन 31 नम्बर कमरे में दर्पण साधना कर रहा था। अचानक मैंने देखा, गुरुजी मेरे पीछे खड़े हैं। मैं पीछे मुड़ा पर गुरुजी मुझे कहीं दिखाई नहीं दिये। फिर मैंने दर्पण में देखा तो गुरुजी फिर दरवाजे में खड़े दिखाई दिये। फिर पीछे मुड़कर देखा तो कोई नहीं था। मेरे कमरे का दरवाजा भी बंद था। जब प्रणाम करने गया तो गुरुजी से पूछा कि गुरुजी ऐसा क्यों हुआ। गुरुजी ने बताया, ''बेटा! मैं इन दिनों हर एक के कमरे में रहता हूँ।''

अभी -अभी यहाँ गुरुजी खड़े थे

20 मार्च से 20 अप्रैल के 29 दिन में गुरुजी के 58 भाषण हुए और मैंने, उपाध्याय जी, चौरसिया जी, महेन्द्र जी, कपिल जी, शिव प्रसाद जी आदि ने साथ-साथ वानप्रस्थ धारण किया। सन् 1977 में मैंने समयदान किया। फिर मैंने कार्यकर्त्ताओं से कहा कि अब मैं घर जाऊँगा और पैसे कमाऊँगा। मुझे

अपने बच्चे पालने हैं। गुरुजी ने मुझे बुलाया और कहा, ''अब तू अपना दिमाग मत लगा, यहाँ आ जा। बच्चों की देखभाल मैं करूँगा। बच्चों को यहाँ भर्ती कर दे और तू भी भर्ती हो जा। बस तू चार बातों का ध्यान रखना। बच्चों को क्या करना है, कोई दबाव नहीं डालना। नौकरी करेंगे तो उन्नति करा दूँगा, व्यापार करेंगे तो फायदा करा दूँगा। हमारे पास रहेंगे तो बाबा-नाती का रिश्ता भी फायदेमंद ही रहेगा।'' उनके कहने पर मैं शांतिकुंज का ही हो गया। दशहरे में उन्होंने मुझे आँवलखेड़ा भेज दिया। वहाँ पर एक दिन जब अखण्ड जप चल रहा था तो जप करते समय मैंने मंदिर में बहुत ऊँचे लगभग 30-40 फीट ऊँचे गुरुजी को खड़े देखा। मैंने तीन-चार बार आँखें मलीं, पर मुझे वही दृश्य दिखाई दिया। वहीं पर मेरे साथ जानकी प्रसाद जोशी जी भी जप कर रहे थे। मैंने पूछा, ''आपको कुछ अनुभव हुआ।'' वे बोले, ''हाँ, अभी-अभी मैंने यहाँ गुरुजी को खड़े देखा। वे बहुत ऊँचे, लंबे-चौड़े दिखाई दे रहे थे।''

माताजी का सूर्यार्घ्य

सन् 1981-82 की बात है एक दिन मैंने माताजी को सूर्य भगवान् को अर्घ्य देते हुए देखा। मैंने देखा सूर्य की गहरी प्रकाश किरणों का एक समूह उनके चरणों में आ रहा है। फिर यह प्रकाश किरणें बिखर कर शान्तिकुञ्ज के परिसर द्वारा सोखी जा रही हैं। मैंने गुरुजी से पूछा, ''गुरुजी, आज मैंने माताजी का विलक्षण स्वरूप देखा। यह क्या है ?'' तो गुरुजी ने कहा, ''माताजी के इसी दिव्य प्रकाश और शक्ति से शान्तिकुञ्ज और युग निर्माण योजना संचालित है।''

तूने मेरे सूक्ष्म शरीर के दर्शन किये हैं

ऐसे ही एक दिन जब मैं गुरुजी के कमरे में गया तो गुरुजी ज़मीन पर बैठकर नक्शे में कुछ देख रहे थे। गुरुजी के पैरों के तलवे मुझे स्पष्ट दिखाई दे रहे थे। मैंने देखा कि उनमें चक्र, कमल, शंख आदि चिह्नित हैं। वह इतने स्पष्ट दिखाई दे रहे थे, जैसे कैलेण्डर में बने चरणों में दिखाई देते हैं। मैंने गुरुजी से कहा, ''गुरुजी, मैंने अभी-अभी आपके चरणों में चक्र कमल के दर्शन किये।'' तो गुरुजी ने बताया कि बेटा, तूने मेरे सूक्ष्म शरीर के दर्शन किये हैं, पर इस बात की चर्चा बाहर मत करना।''

गुरुदेव की लीला

(श्री कैलास प्रसाद लाम्बा जी, कोरबा छ.ग. के सक्रिय कार्यकर्ता हैं। सन् 1959 में वे राठ, हमीरपुर, उ.प्र. में पूज्य गुरुदेव से जुड़े।)

श्री कैलास प्रसाद लाम्बा जी, कोरबा में ठेकेदारी का कार्य करते हैं। किसी भी ठेकेदार के लिये मार्च का महीना बहुत महत्त्वपूर्ण होता है क्योंकि सरकारी काम का पैसा इसी समय प्राप्त होता है। अत: वे भी अपने वर्ष भर के बिलों के भुगतान की प्राप्ति हेतु प्रयासरत थे। प्रसंग सन् 1977 मार्च के मध्य का है। शान्तिकुञ्ज से वंदनीया माताजी का पत्र आया, 'आपको पूज्यवर ने याद किया है, फौरन चले आयें।'

श्री लाम्बा जी कहते हैं कि मैं बड़े पशोपेश में पड़ गया। यदि हरिद्वार जाता हूँ, तो सारे बिल रह जायेंगे। यदि नहीं जाता हूँ, तो गुरुवर के आदेश की अवज्ञा होगी। दो रात मैं सो नहीं सका। क्या करूँ ? कुछ समझ नहीं आ रहा था। अन्त में तीसरे दिन निर्णय ले ही लिया कि चाहे जो हो, मुझे शान्तिकुञ्ज पहुँचना ही है। सभी बिल जैसे-तैसे बनाकर, पेश करके मैं हरिद्वार पहुँच गया।

उन दिनों शान्तिकुञ्ज में गुरुजी से मिलने की कोई बंदिश नहीं थी। परम वन्दनीया माताजी से मिलकर मैं ऊपर गुरुदेव से मिलने गया। एक सीढ़ी नीचे से ही देखा कि पूज्यवर अपने साधना कक्ष में तखत पर बैठे हैं। उन्होंने भी मुझे देख लिया व इशारे से मुझे वहीं बुला लिया। मैंने वहाँ पहुँच कर गुरुदेव को प्रणाम किया व धीरे-धीरे उनके पैरों को सहलाने लगा। किन्तु जैसे ही मैंने सिर उठाकर गुरुजी की ओर देखा, मैं आश्चर्य चकित रह गया, मैंने देखा, तखत पर पूज्यवर की जगह दादा गुरुजी बैठे हैं। कुछ सूझा नहीं, क्या करूँ ? फिर मैंने गुरुदेव की साधना स्थली की ओर मुँह किया तो वहाँ गुरुदेव बैठे दिखाई दिये। फिर पलट कर तखत को देखा, तो पता चला, गुरुजी तखत पर बैठे हैं। अब तो मेरी स्थिति अजीबोगरीब हो गई। मैंने फिर साधना स्थली देखी, तो वहाँ दादा गुरुजी थे। तखत पर देखा, तो वहाँ भी दादा गुरुजी नजर आये। फिर, साधना स्थली पर गुरुजी दिखे। इस प्रकार तीन बार अलट-पलट कर देखा। मेरी स्थिति विचित्र हो रही थी। मुझे कुछ सूझ नहीं पड़ा, मैंने गुरुदेव के चरणों में अपना सिर रख दिया और मन ही मन कहने लगा, ''गुरुदेव! आपकी लीला न्यारी है। मैं अकिंचन कुछ भी नहीं समझ सकता।'' तब गुरुदेव ने मुस्कुराते

हुए मेरे सिर पर प्यार भरा हाथ रखा व कहने लगे, ''तूने कुछ नहीं देखा है। उठ। जा! मैं तेरा सब काम ठीक कर दूँगा।'' उस समय तो मुझे कुछ समझ नहीं आया। लगा कि गुरुदेव तो ऐसा कहते ही हैं, पर सचमुच उन दिनों मैं आर्थिक तंगी के दौर से गुजर रहा था। घर आने पर पता चला, मेरा ढाई लाख का बिल पास हो गया था और मैं आर्थिक तंगी के भँवर से उबर चुका था। ऐसे कृपालु थे पूज्यवर।

ऐसा था उनका विश्राम

(श्री वीरेश्वर उपाध्याय जी पूज्य गुरुदेव के निकटतम शिष्यों में से हैं। सन् 1954 में वे पूज्य गुरुदेव से जुड़े व सतत संपर्क में बने रहे। सन् 1958 के यज्ञ में भी शामिल हुए। सन् 1967 में मथुरा में ही उन्होंने पूर्ण समर्पण कर दिया और महत्वपूर्ण जिम्मेदारियाँ सँभालीं। सन् 1973 में गुरुदेव ने उन्हें मथुरा का कार्यभार छोड़कर शान्तिकुञ्ज आने के लिये कह दिया और वे सपरिवार शान्तिकुञ्ज आ गये।)

श्री वीरेश्वर उपाध्याय जी बताते हैं कि विश्राम के क्षणों में भी उनकी चेतना सक्रिय रहती थी। हमें लगता था कि वे विश्राम कर रहे हैं परंतु उन क्षणों में वे सूक्ष्म स्तर से अन्य कार्यों में लगे रहते थे।

वे बताते हैं कि, ''मेरे मथुरा छोड़ने (जून 1971) तक आप निश्चित रूप से इसी शरीर में रहेंगे।'' यह आश्वासन, पूज्य गुरुदेव ने कुछ स्नेही अनुयायी परिजनों को स्पष्ट शब्दों में दिया था। विदाई वर्ष के कार्यक्रमों की शृंखला में वे लगातार कई-कई दिनों तक मथुरा से बाहर रहे। ऐसी ही एक अवधि में उक्त आश्वासन प्राप्त व्यक्तियों में से दो (जयपुर से श्रीमती चन्द्रमुखी देवी रस्तोगी के पतिदेव तथा भोपाल से श्रीरामचरण राय) की स्थिति गंभीर होने के पत्र एवं टेलीग्राम मथुरा पहुँच गए। दोनों ही गंभीर हृदय रोग से पीड़ित थे। तीन दिन बाद पूज्य गुरुदेव दौरे से लौटे। सबेरे के समय मथुरा पहुँचे। आवश्यक सूचनाओं के साथ उन्हें उक्त जानकारी भी दी गई। थोड़ा सोचकर वे चिंतित स्वर में बोल उठे-''कहीं यह दौरा, दोनों के लिये ...घातक न हो...।'' यह शब्द उन्होंने नहाते-धोते, भोजन करते कई बार कहे। फिर नियमानुसार भोजन के बाद विश्राम के लिए चले गए। कहते गए कि तुम लोग अपना काम कर लो और घंटे भर बाद मिलो।

घंटे भर बाद मिलते ही स्पष्ट शब्दों में बोले–''अब टेलीग्राम भी भेज दो और पत्र भी लिख दो कि वे निश्चिन्त रहें, सब ठीक हो जायगा।'' वैसा ही किया गया। बाद में पता लगा कि उसी दिन दोहपर से दोनों परिजनों की तबियत में काफी तेजी से सुधार आने लगा और वे स्वस्थ हो गये।

ऐसा ही एक प्रसंग यह भी है, सबेरे सात–साढ़े सात बजे के बीच पूज्य गुरुदेव अपने कक्ष में कार्यकर्त्ताओं को दिशा–निर्देश दे रहे थे। नीचे से सूचना मिली कि दिल्ली से ट्रंककाल आया है। एक भाई ने जाकर बात की। लौटकर बताया श्री शिवशंकर गुप्ता (तत्कालीन ट्रस्टी और कानूनी सलाहकार) कल दोपहर 11 बजे से बेहोश हैं। सबेरे तक होश नहीं आया।

पूज्य गुरुदेव ने सुना तो बोले–''अच्छा, आज की बात यही बंद करते हैं।'' यह कहकर नियमानुसार वन्दनीया माताजी के पास जाकर भोजन लिया और विश्राम के लिए लेट गए। बाद में पता लगा कि श्री शिवशंकर जी को सामान्य बेहोशी नहीं थी। केस ब्रेनहैमरेज का था। परिजनों को इसका अहसास भी नहीं था और एक सामान्य चिकित्सक को दिखा कर ही परिणाम की प्रतीक्षा करने लगे थे। दोपहर ११ बजे से शाम हुई, रात बीत गई, तब सबेरे पूज्य गुरुदेव को फोन से सूचना दी और एक भाई वहाँ से हरिद्वार के लिए रवाना भी हो गए।

फोन से सूचना पाकर पूज्य गुरुदेव जिस अवधि में विश्राम में रहे, उसी बीच श्री शिवशंकर जी की बेहोशी टूटी। उन्होंने आँखें खोली। बोले कुछ नहीं। तकलीफ पूछने पर सिर की तरफ इशारा भर किया। सहारा देने पर बैठ गए। चाय के लिए पूछा तो सिर हिलाकर सहमति दे दी। चाय के साथ एकाध टुकड़ा ब्रेड का लेकर लेटे और पुनः उसी बेहोशी में डूब गए।

बाद में उनके रोगोपचार का लम्बा क्रम चला। उन्हें कई चमत्कारी अनुभव भी हुए। डॉक्टरों को आश्चर्य में डालते हुए वे ठीक हो गए।

(लेकिन उक्त प्रसंगों से यह तो स्पष्ट होता है कि युग ऋषि का कथित विश्राम कैसा होता था। शरीर को शिथिल छोड़ कर वे चेतना स्तर पर कैसे विलक्षण प्रयोग किया करते थे।)

जब गुरुजी ने इलाहाबाद में पुस्तकें पढ़ीं

माधवपुर के **श्री बहादुर सिंह** बताते हैं कि इलाहाबाद वाले श्री रामलाल जी ने मुझे एक घटना सुनाई। पूज्य गुरुदेव मध्य प्रदेश के दौरे पर थे। उन्हें इलाहाबाद होते हुए जाना था। स्टेशन के लिये निकलते समय बोले, ''ट्रेन तो देरी से है, इस बीच यूनिवर्सिटी पुस्तकालय हो लेते हैं।'' पहले भी गुरुदेव पुस्तकों के लिये 2-3 बार इलाहाबाद पुस्तकालय आ चुके थे। यह सोचकर कि यदि देर हो जायेगी तो युनिवर्सिटी से ही सीधे स्टेशन निकल जायेंगे, मैं, गुरुदेव का सामान आदि लेकर चलने लगा। गुरुजी बोले, ''भई रामलाल! यहीं आकर जायेंगे। अभी आते हैं।'' मैंने सामान रख दिया।

विश्वविद्यालय के पुस्तकालय में पहुँचकर पूज्यवर ऐसे डूब गये कि उन्हें दीन दुनिया का होश ही नहीं रहा। जैसे-जैसे ट्रेन के आने का समय समीप आ रहा था, मेरा मन घबरा रहा था। मैंने दो-तीन बार कहा कि गुरुजी, सामान भी लेना है और स्टेशन भी पहुँचना है। थोड़ी देर बाद गुरुजी बोले, ''समय हो गया होगा। यह भी तो एक यज्ञ है। इसे बीच में छोड़कर नहीं चल सकते।'' गुरुदेव पुस्तकें पढ़ने में पूरी तरह मगन थे। एक पुस्तक में लगभग 10 मिनट लगते। वे पुस्तक पढ़ते व एक तरफ रख देते। वे हिन्दी, अंग्रेजी, प्राकृत, पाली, संस्कृत सभी भाषाओं की किताबें देख गये।

इसी बीच मेरे मित्र भटनागर जी गुरुदेव को लेकर स्टेशन जाने के लिए घर पहुँचे तो उन्हें पता चला कि गुरुजी और मैं दोनों साथ में ही हैं। उन्होंने अनुमान लगाया कि हम लोग स्टेशन ही गये होंगे। सो वे सीधे वहीं पहुँच गये। थोड़ी देर ढूँढा पर यह सोचकर कि कहीं बैठ गये होंगे, और वे छूट जायेंगे, भटनागर जी ने टिकिट लिया व चलती गाड़ी में बैठ गये।

निर्धारित कार्यक्रम में पूरा भाग लिया, लौटे तो बहुत खुश। कहने लगे कि न जाने कैसे गुरुदेव ने ट्रेन में हमें ढूँढ लिया और अगले स्टेशन पर ही हमारे पास आकर बैठ गये पर आप नहीं मिले। उन्होंने बताया, कार्यक्रम बहुत बढ़िया रहा। हम सीधे स्टेशन से ही आ रहे हैं, पर स्टेशन पर उतरने के बाद गुरुदेव दिखे ही नहीं! इसलिए सीधा आपके पास ही आ रहा हूँ।

मुझे थोड़ा आश्चर्य हुआ कि वे क्या कह रहे हैं? गुरुदेव तो लाइब्रेरी से ट्रेन टाइम के निकल जाने के भी आधे घण्टे बाद मेरे साथ घर लौटे व चादर

ओढ़कर सो गये। कार्यक्रम में तो वे गये ही नहीं थे। पिछले तीन-चार दिन से गुरुदेव तो हमारे घर पर ही थे। वे रोज इलाहाबाद विश्वविद्यालय की लाइब्रेरी में किताबें पढ़ने जाते रहे थे। मैंने पूछा भी कि अब कार्यक्रम का क्या होगा? तब वे हँसकर टाल गये थे और बोले, ''कार्यक्रम की व्यवस्था भी हो जायेगी।''

मैंने भटनागर जी से कहा, ''गुरुदेव तुम्हें दिखते भी कैसे वे तो यहीं हैं। कार्यक्रम में तो वे गये ही नहीं थे।''

भटनागर जी ने आश्चार्य मिश्रित स्वर में कहा, ''क्या कह रहे हैं आप? मैं झूठ बोल रहा हूँ क्या? मैं, गुरुजी के साथ था। मैं तो यह सोच रहा था कि आप कैसे हैं, जो गुरुजी को अकेले भेजकर खुद घर पर रह गये?''

हम दोनों का वार्तालाप गुरुजी अन्दर लेटे-लेटे सुन रहे थे। उन्होंने हमें बुलाया और कहा, ''क्या लड़कपन करते हो? दोनों की बात सच्ची है। मैं यहाँ भी था, वहाँ भी था। वहाँ रेल में भी भटनागर जी के साथ मैं ही था। यज्ञ में भी मैं ही था। तुम इस बात को गोपनीय ही रखना। यह मेरा स्वरूप मेरे महाप्रयाण के बाद ही लोगों को पता लगे, यह ध्यान रखना। समय आने पर ऐसी ढेरों बातें लोगों को पता चलेंगी, तब वे हमारे स्वरूप को पहचान पायेंगे।''

देखता हूँ कैसे नहीं मानती?

कोरबा के श्री कैलाश प्रसाद लाम्बा जी कहते हैं कि जांजगीर तहसील छत्तीसगढ़ के **कुलीपोटा ग्राम के श्री साध राम साहू** अक्सर अपने जीवन की एक अविस्मरणीय घटना सुनाया करते थे। यह सन् 67-68 की घटना है। एक दिन गुरुदेव प्रवचन कर रहे थे। प्रवचन करते-करते ही अचानक उनका चेहरा गुस्से से लाल हो गया व कहने लगे- नहीं मानती, नहीं मानती, देखता हूँ कैसे नहीं मानती? बंद करना पड़ेगा। आदि-आदि।

राजस्थान के कोटा जिले के बूँदी तहसील में इन्द्रगढ़ देवी का मंदिर है। उन दिनों वहाँ प्रति वर्ष एक हजार से भी अधिक बकरों की बलि दी जाती थी। संभवतः उसी परिप्रेक्ष्य में पूज्यवर ने वह कथन कहे थे, क्योंकि इसके तुरंत बाद वे शिविरार्थियों की ओर मुखातिब होकर बोले, ''गुरु गोविन्द सिंह के पंच प्यारे थे, जिन्होंने आदर्शों के लिये स्वयं को बलिदान कर दिया। गुरु आज्ञा पर अपना सिर कटाने को तैयार हो गये थे। क्या आज हमारे शिष्यों में भी ऐसे पंच प्यारे हैं? जो हमारी आज्ञा पर अपना सिर देने को तैयार हैं।'' शिविरार्थी

शिष्य जो लगभग 50-60 की संख्या में थे, उनमें से 27-28 व्यक्तियों ने हाथ उठाया। पुनः गुरुदेव ने पूछा, ''देखो भई, ये बताओ कितनों को घर से परमीशन लेनी पड़ेगी ? अभी यहीं से जाने के लिये कौन-कौन तैयार है ?''

कहाँ जाना है ? क्या करना है ? अभी यह बात स्पष्ट नहीं थी। बात, सिर कटाने की थी, सो घर से परमीशन की आवश्यकता नहीं लेने वाले केवल आठ ही हाथ ऊपर उठे बाकी सभी नीचे हो गये।

प्रवचन समाप्त हुआ। उन आठों को घीयामंडी बुलाया गया। सारी बातें समझाई गईं। तुम्हें एक माह के लिये इन्द्रगढ़ जाना है। पशु बलि के विरुद्ध अभियान छेड़ना है। सुबह यज्ञ करना व दिन भर प्रचार-प्रसार।

माताजी ने सारी बातें सुनीं तो रो पड़ीं। कहने लगीं- ''बेटा, वहाँ रेगिस्तान की तपती रेत में तुम्हें नंगे पैरों चलना होगा। जब वहाँ रेत की आँधी चलती है, तब कुछ सूझता नहीं। खाने-पीने का कोई ठिकाना नहीं।'' भारी मन लिये उन्होंने हमारे साथ पाँच-किलो सत्तू व एक किलो गुड़ बाँध दिया। कहा, ''बेटा, जब भूख लगे खा लेना।''

दिये हुए पते पर आठों बलिदानी गये। देखा पूरा खटीकों का गाँव था। गाँव से बाहर अपना तम्बू लगाया। जैसा समझाया गया था, वैसा कार्य सबने दूसरे दिन से प्रारंभ कर दिया। तीसरे दिन एक साधु मिला, केवल लंगोटी धारी। बातचीत हुई, सबने अपना उद्देश्य बताया। उसने कहा, आप लोग अच्छा काम कर रहे हो। आपके गुरु महान् हैं। मैं भी आपके साथ चलूँ तो नौ हो जायेंगे। सब मान गये। नौ की टोली प्रचार-प्रसार हेतु जुट गयी। दूसरे दिन यज्ञ के उपरान्त सबके चलने की बारी आई तो उस साधु ने कहा-मुझे घर पर ही रहने दें तो अच्छा हो।

हम सब चले गये। रात को वापस आये तो देखा आस-पास से फूस लाकर तम्बू में लगा दिया गया है। गरम पानी किया रखा है। भोजन भी तैयार हो चुका है। सबने इसे गुरु कृपा माना। इसके बाद साधु सबके पैर, गरम पानी से धोने लगा। हम सब मना करते, फिर भी वह खींच-खींच कर पैर धोता। रोज वही भोजन बना कर खिलाता। इस प्रकार वह साधु हमें वरदान बनकर मिला।

पूरे एक माह तक सबने पशु बलि निषेध का प्रचार किया। इसकी हानियाँ समझाईं। देवताओं के रुष्ट होने की बात कही। प्रतिदिन 20 किलोमीटर

तक अलग-अलग क्षेत्रों में पैदल नापते थे। सबके पैरों में छाले पड़ जाते थे। फिर भी गुरु श्रद्धा के वशीभूत हो सभी ने एक माह के अन्दर जन-जागृति की हवा फैला दी।

अब वह गाँव जो खटीकों का था, उन्हें भी भय लगा कि क्या... ? सचमुच पशुबलि बंद हो जायेगी ? अत: पूरा गाँव इकट्ठा हुआ और तय किया कि आठ ऐसे बुड्ढे जो मरने वाले हों, वे खड़े हो जाएँ व आठों की गर्दन उड़ा दें। फिर भले फाँसी पर लटक जाना पड़े। इस प्रकार दोनों तरफ के जागरण का असर प्रशासन के कानों तक भी पहुँचा। वह भी कैसे चुप रहता ? पूरे जिले के प्रशासन की बैठक हुई। वातावरण ऐसा बन गया था कि कब क्या हो जाय ? अत: पुलिस भी पूरी तरह चौकन्ना थी। किसी भी अप्रत्याशित घटना से निपटने के लिये वहाँ पुलिस छावनी बन गई थी।

नवरात्रि के अंतिम दिन हम आठों बलिदानियों ने सुबह चार बजे ही नहा-धोकर मंदिर को घेर लिया। ताकि कोई भी व्यक्ति हमारे जीवित रहते तक बलि न दे सके। उस समय वह साधु साथ नहीं था। सभी अंध श्रद्धालु अपने साथ बकरा लिये हुए मंदिर की ओर आ रहे थे। वहाँ भीड़ बढ़ती जा रही थी। इस सबसे मंदिर के अन्दर जाने में दिक्कत होने लगी। हम आठों ने भी स्पष्ट कर दिया कि बिना हमको मारे आप मंदिर के अन्दर नहीं जा सकते। हालात नाजुक बनते जा रहे थे। अचानक वे लंगोटीधारी साधु अपने कन्धों पर बकरा लादे हुए प्रकट हो गये। अपने साथी को इस प्रकार बकरा लाते देखकर हम सभी आश्चर्य में पड़ गये। सब, कुछ सोच पाते, इसके पहले ही उन्होंने बकरे को नीचे पटका और जोर की गर्जना करते हुए बोल पड़े। पशु में भी आत्मा का निवास है। यह बात किसी को समझ में नहीं आ रही है ? हिम्मत है ? तो इस बकरे को काटकर दिखाओ। उस साधु के सिंह नाद में वह गर्जना थी कि जो व्यक्ति थोड़ी देर पहले पशु बलि के पक्ष में खड़े थे, सभी भाग खड़े हुए। मौका देखकर पुलिस ने भी कमान संभाल ली और धारा 144 लागू हो गयी। सभी तितर-बितर हो गये। गर्दन उड़ाने वाले खटीक भी खिसक लिए।

हम आठों को लग रहा था कि आज तो हमारी गर्दन उड़ेगी ही क्योंकि, इसके लिये ही तो मथुरा से चले थे। किन्तु पलक झपकते ही वह साधु आया, ललकारा और भीड़ को तितर-बितर कर अंर्तध्यान हो गया। फिर कहीं ढूढँने

पर भी नहीं मिला। तभी कुछ लोगों ने कहा हमने तो उसे उसी समय नीचे देखा था। साढ़े सात सौ सीढ़ियाँ दो-चार मिनटों में कैसे तय की जा सकती हैं ? अत: सबने एक स्वर से उन्हें चमत्कारी बाबा ही माना, जो ऐन वक्त पर अपने शिष्यों की रक्षा हेतु प्रकट हुए थे। अन्यथा क्षण भर की भी देर होती तो सभी की गर्दन कट जाती। पूज्यवर भला ऐसा कैसे होने देते ? साधु का भी कहीं अता-पता नहीं था। अत: आठों अपना डेरा उठाकर मथुरा आये। गुरुदेव ने मुस्कुराते हुए समाचार पूछा, ''कहो, क्या हाल चाल है ?'' सबने एक स्वर से कहा, ''आप हमसे क्यों पूछते हैं गुरुदेव ? आप स्वयं तो वहाँ मौजूद थे। आपकी क्षण भर की देरी हम सब की गर्दन उड़ा देती।'' सुनकर, गुरुदेव मुस्कुरा दिये।

तब से वहाँ पशु बलि बिलकुल बंद है। ऐसे क्रांतिकारी और परीक्षक भी थे, पूज्य गुरुदेव।

मैं कहीं और भी रहता हूँ

(श्री संदीप कुमार, सन् 1980 में इन्होंने दीक्षा ली और सन् 1985 में स्थाई तौर पर शान्तिकुञ्ज आ गये।)

एक दिन मैंने गुरुदेव से प्रश्न किया, ''गुरुदेव युग निर्माण कैसे होगा ? अभी तो इसके कुछ भी लक्षण दिखाई नहीं देते ?'' गुरुजी ने कहा-''तुम लोग क्या समझते हो ? क्या मैं केवल शान्तिकुञ्ज में ही निवास करता हूँ, या कहीं और भी रहता हूँ ? मैं लगातार सजातियों को खींच रहा हूँ।''

उस समय हमें लगा कि गुरुदेव का पाँच शरीरों से काम करने का कथन पूर्णतया सही है।

वहाँ क्या हो रहा है

इसी प्रकार जब गुरुदेव मध्यप्रदेश के दौरे पर थे, तब एक कार्यकर्ता ने जिद पकड़ ली कि गुरुदेव आप पाँच शरीरों से कैसे कार्य करते हैं- कुछ तो झलक हमें भी दिखाइये।

पहले तो गुरुदेव टालते रहे। जब देखा, ये मानने वाले नहीं हैं, तो उन्होंने बिलासपुर का एक टेलीफोन नम्बर दिया। कहा, ''पूछो, वहाँ क्या हो रहा है ?'' जवाब मिला-''गुरुदेव अभी-अभी प्रवचन से आए हैं व भोजन करने बैठे हैं।'' कार्यकर्ता सुन कर हतप्रभ रह गया। गुरुदेव के पैर पकड़ पुन: शंका न करने का वचन दिया।

इसी से मिलता जुलता एक प्रसंग और भी है। श्री जयराम मोटलानी जी बताते हैं कि हम कुछ दिनों के लिये छ.ग., जिला काँकेर में आँवरी आश्रम के प्रवास पर थे। दूर-दूर से परिजन वहाँ आते रहते थे। एक दिन एक बूढ़े बाबाजी आये। उन्होंने बताया कि गुरुदेव जब उनके गाँव में आये थे तो कार्यक्रम के दौरान मंच पर से ही उन्होंने एक गाँव का नाम लिया और कहा कि इसी समय हम वहाँ पर भी कार्यक्रम करा रहे हैं। जिन्हें विश्वास न हो वे जाकर देख सकते हैं। वह गाँव हमारे गाँव से 12 कि.मी. दूर है। मैं वहाँ से उठा और साईकिल से तुरंत वहाँ पहुँचा। जाकर देखा गुरुदेव मंच से उतरे ही थे और लोगों के साथ बातचीत करते हुए भोजन के लिये रवाना हो रहे थे।

मैं उन्हीं पैरों तुरंत वापिस मुड़ गया। सोचा शायद दूसरे रास्ते से गाड़ी से आ गये हों। साईकिल से मुझे ज्यादा समय लगा। अपने गाँव में पहुँच कर देखा तो गुरुजी वहाँ भी थे। पूछने पर पता चला कि वे तो यहीं हैं। एक पल के लिये भी वह इधर-उधर नहीं गये।

प्रसंग सुनाते हुए बाबा जी की आँखों से अश्रुधारा बह रही थी। बाबाजी बोले, ''बेटा, वह सबको अपना स्वरूप दिखा रहे थे, फिर भी हम लोग समझ नहीं पाये कि यह साक्षात भगवान् हैं।'' अश्रु उनके गालों को भिगोते हुए गले तक जा रहे थे। उनके हृदय की भावनाएँ शब्दों के साथ-साथ आँखों से भी बह रही थीं।

तू मुझे देख रहा है ?

श्री शिवप्रसाद मिश्रा जी, शान्तिकुञ्ज

1970 की घटना है। टाटा नगर में 1008 कुण्डीय यज्ञ सम्पन्न होना था। गायत्री तपोभूमि से श्री रमेशचन्द्र शुक्ला जो पूज्य गुरुदेव के साथ चला करते थे, लोहरदगा (झारखण्ड) पधारे। मैं वहाँ बाक्साइट पत्थर का व्यापार करता था। उन्होंने मुझसे यज्ञ के लिए अनुदान और समयदान माँगा। मैंने जो कुछ बन पड़ा दिया और यज्ञ के एक माह पूर्व समयदान के लिए टाटानगर पहुँच गया। वहाँ यज्ञ को सफल बनाने हेतु कार्य में जुट गया। मेरी निष्ठा को देखकर उन्होंने मुझे और मेरी पत्नी को मुख्य यजमान बना दिया। इस यज्ञ के उपरान्त हमने पूज्य गुरुदेव से 9 कुण्डीय गायत्री यज्ञ के लिये निवेदन किया। उन्होंने कहा ''अब समय नहीं है।'' सुनकर मुझे बड़ा दुःख हुआ। लोहरदगा पहुँचकर मैंने सोचा

गुरुदेव के जन्मदिन बसंत पंचमी पर ही एक छोटा सा 9 कुण्डीय यज्ञ कर लिया जाए। संकल्प कर लिया। उसी दिन रात्रि को लगभग 3:00 बजे एक आवाज सुनी-शिव प्रसाद! शिव प्रसाद! आवाज गुरुदेव की सी लगी। आँख खोली तो देखा जमीन से कुछ ऊपर स्वयं गुरुदेव ही साक्षात खड़े हैं। मैंने कहा, ''जी गुरुजी,'' आवाज आई ''तू मुझे देख रहा है? मेरी आवाज़ सुन रहा है? तूने बसंत पर्व पर यज्ञ करने का संकल्प लिया है, बसंत पर्व पर नहीं, 13-14 जनवरी को यज्ञ करना। हमने अन्य जगहों से 2 दिन की कटौती करके यह समय तुम्हें दिया है।'' मैंने कहा, ''जो आज्ञा गुरुदेव।'' बस गुरुदेव चले गए। मैं प्रणाम भी न कर सका और किंकर्त्तव्य विमूढ़ की भाँति देखता ही रह गया। फिर सो गया। थोड़ी देर बाद ही स्वप्न में देखता हूँ कि पं. लीलापत जी का एक एक्सप्रेस डिलीवरी पत्र आया है। उसमें वही बातें लिखी हैं जो गुरुदेव ने कही थीं। मैंने यह स्वप्न पत्नी को बताया और कहा संभवत: आज ही वह पत्र भी आ जाए? आते ही मेरे पास माइंस पर भिजवा देना। प्रात: 8:00 बजे पोस्टमैन आया और एक्सप्रेस डिलीवरी पत्र दे गया। इस प्रकार गुरुदेव ने सूक्ष्म शरीर से स्वयं आकर कार्यक्रम का निर्देश दिया। जिसे हमने पूरी श्रद्धा व उत्साह के साथ संपन्न किया और कार्यक्रम भी आशातीत रूप से सफल रहा।

तेरे दोस्त का आपरेशन मैंने कर दिया है

(श्रीमती सावित्री गुप्ता, सन् 1968 में इन्होंने दीक्षा ली और सन् 1974 में स्थाई तौर पर शान्तिकुञ्ज आ गईं।)

शान्तिकुञ्ज में मुझे पत्र लेखन का काम मिला। उस समय कम ही लोग थे। प्राय: सभी पत्र हाथों से गुजरते थे, अत: पूर्व पत्रों का भी ध्यान रहता था।

बरेली जिले के एक गाँव से एक लड़के के पिता का पत्र मुझे आज भी स्मरण है। उन्होंने पूज्यवर से प्रार्थना की थी। ''पूज्यवर! मेरे लड़के को कैन्सर है। डॉक्टर ने कहा है, भगवान का नाम लो, प्रार्थना करो। अब उपचार कुछ नहीं है। हे गुरुदेव! मुझ पर कृपा करें। मेरे बच्चे को ठीक कर दें।'' आदि-आदि।

लड़के का दोस्त भी गायत्री परिवार का सदस्य था। उसने भी पत्र लिखकर अपने दोस्त की कुशलता के लिये गुरुदेव से निवेदन किया था।
(उन दिनों न जाने कैसे, पत्र लिखते ही पूज्यवर तक संदेश पहुँच जाते थे, अनेकों ऐसे अनुभव पत्रों द्वारा ज्ञात होते हैं।)

जल्दी ही फिर दोनों के पत्र आये। दोनों ने अपने-अपने पत्र में अपना अनुभव लिखा था।

''पत्र लिखने के दूसरे ही दिन गुरुदेव सूक्ष्म शरीर से मेरे लड़के के पास पहुँचे और कहा, ''बेटा! हम आ गये हैं, तू चिन्ता मत कर। मैं तेरा आपरेशन करता हूँ। तू एक हफ्ते में ठीक हो जायेगा।''

इसके बाद गुरुदेव उसके दोस्त के पास गये और कहा, ''बेटा, तेरे दोस्त का ऑपरेशन मैंने कर दिया है। अब वह बिलकुल ठीक हो जायेगा, चिन्ता की कोई बात नहीं।''

जब दोनों दोस्तों ने अपना-अपना अनुभव एक-दूसरे को सुनाया तो वे दोनों आश्चर्य चकित हुए कि किस प्रकार दोनों के अनुभव एक समान हैं।

फिर उन्होंने इसकी वास्तविकता की जाँच करने की ठानी व डॉक्टर के पास गये और कहा, ''डॉक्टर साहब, एक बार दुबारा चैक कर लीजिए।''

डॉक्टर ने मना किया। कहा, अभी कुछ दिन पहले ही तो चैक किया है। बार-बार आवश्यकता नहीं है। बस आप तो जैसे-तैसे दिन काटिए।

फिर भी सबने जिद की कि एक बार फिर से चैक कर ही लें। तब अनमने मन से डॉक्टर ने चैक करना स्वीकार किया।

किन्तु जब चैक किया तो घाव सूखता हुआ नजर आया, उसे अपनी आँखों पर विश्वास ही नहीं हो रहा था। इतना बड़ा घाव, सूख कैसे रहा है? उसने फिर से देखा व पूछा, ''आप लोगों ने किस डॉक्टर को दिखाया है? कौन डॉक्टर मिल गया जिसने यह घाव सुखा दिया?'' डाक्टर से हम केवल इतना ही कह पाये कि यह हमारे पूज्य गुरुदेव की अनुकम्पा है।''

(इसी तरह डॉ. अमल कुमार दत्ता जी को लिखा एक पत्र यहाँ उद्धृत है जिसमें गुरुदेव स्वयं अपने सूक्ष्म शरीर द्वारा संरक्षण की बात लिखते हैं। इस पत्र में संरक्षण के साथ-साथ अपने स्नेह का प्रकटीकरण और कर्तव्य पालन हेतु मार्गदर्शन, बहुत कुछ एक साथ कितने कम शब्दों में व्यक्त कर दिया गया है। इस पत्र में उनकी पत्र लेखन कला का भी दर्शन मिलता है।)

''हमारे आत्मस्वरूप,

आपका पत्र मिला। पढ़कर प्रसन्नता हुई। यों पिछले सप्ताह हमारा सूक्ष्म शरीर इन्दौर ही रहा है। रोग अबकी बार अतीव-कष्ट लेकर आया था।

हमें प्रतीत हो रहा था कि बेटी श्रीपर्णा इस कष्ट को सहन न कर सकेगी। इसलिये सुरक्षा के लिये हमारा सूक्ष्म शरीर आप लोगों के पास ही बना रहा। आप लोगों ने दौड़-धूप की उससे हमें संतोष है। कर्तव्य पालन इसी प्रकार करना चाहिये, किंतु इतने पर भी बेटी श्रीपर्णा की इस बार की जीवन रक्षा का श्रेय, माता की विशेष कृपा को ही है। अब अनिष्ट टल गया है। जो कमजोरी रही होगी वह भी जल्दी ही दूर हो जायेगी।

बीमारी के समय जिन-जिन स्वजनों ने सेवा एवं सहानुभूति का व्यवहार किया हो उन सबको हमारा धन्यवाद कहना। तुम्हारी धर्मपत्नी भी वह है, पर असल में तो हमारी प्रिय पुत्री ही है। तुमने या जिसने भी उसकी सेवा की है उन सबके हम हृदय से कृतज्ञ हैं।

जब तक सौ. श्रीपर्णा की तबियत पूरी तरह ठीक नहीं हो जाती तब तक हमें चिंता बनी रहेगी, सो उसका समाचार हमें भेजते रहें। यों सूक्ष्म शक्ति से हम उसकी आवश्यक जानकारी रख ही रहे हैं और संपर्क भी बनाये हुये हैं।...''

श्रीमती श्रीपर्णा दत्ता के नाम भी उन्होंने पत्र लिखा। जिसमें लिखा, ''इस नये जीवन को तुम ऋषि पुत्री, ऋषि पत्नी और ऋषि माता की तरह व्यतीत करना।''

काम पूरा होने पर शक्ति वापस हो जायेगी

श्री कैलास प्रसाद लाम्बा, कोरबा

घटना सन् 84 सूक्ष्मीकरण में जाने से 3-4 माह पूर्व की है। मैं हरिद्वार गया था। गुरुजी मुझसे अकेले में मिले व कहा, ''बता बेटा, तेरा क्या-क्या चल रहा है ?''

मैंने कहा, ''जप अधिक करता हूँ। अत: समय कम मिल पाता है। अपना काम भी करता हूँ व शाम को प्रचार में भी निकलता हूँ।''

एक-दो सेकन्ड के बाद उन्होंने कहा, ''बेटा ऐसा कर, तू जप कम कर, ध्यान अधिक कर। उगते सूर्य में गायत्री माता का ध्यान करो।'' 2-3 तरीके से गायत्री उच्चारण की विधि उन्होंने स्वयं बतलाई। गले से उच्चारण करना, तालु से उच्चारण करना, व नाक से उच्चारण करने की विधि बतलाई।

नाक से आवाज को ऊपर उठाकर उच्चारण करने से मंत्र का कम्पन्न भृकुटि को ठोकर मारता है।

इसके साथ ही उन्होंने कहा, ''बेटे, मुझे तुझसे जितना काम लेना है, उतनी शक्ति दूँगा तथा वह अनवरत मिलती रहेगी। किन्तु जब काम पूरा हो जायेगा तब शक्ति वापस हो जायेगी।

श्री लाम्बा जी कहते हैं, ''उस अभ्यास को मैंने बहुत दिनों तक किया, सूक्ष्मीकरण तक वह शक्ति रही। साधना के क्षेत्र में पूज्यवर ने मुझे काफी ऊँचा उठाया। उन दिनों शरीर के किसी भी अंग को यहाँ तक सहस्त्रार तक को कंपित कर लेता था। जिसके लिये जो कह देता, वह पूरा होता। अत: घर वाले कहते किसी के प्रति मन में दुर्भावना मत रखना। अन्यथा उसका बुरा होगा। सूक्ष्मीकरण के बाद वह शक्ति चली गई। जैसा गुरुवर ने चाहा था ठीक वैसा ही हुआ। ''

अश्वमेध यज्ञ, जयपुर के पर्चे पूज्य गुरुदेव ने बाँटे

(श्री वीरेन्द्र अग्रवाल जी, जयपुर, राज्यस्थान के सक्रिय कार्यकर्ता हैं। सन् 1974 में वे पूज्य गुरुदेव से जुड़े और तब से आज तक सतत संपर्क में बने हुए हैं।)

अश्वमेध यज्ञों की शृंखला के अंतर्गत प्रथम अश्वमेध यज्ञ, जयपुर में हुआ था। प्रत्येक अश्वमेध यज्ञ के साथ परिजनों की अनेकों स्मृतियाँ जुड़ी हुई हैं। श्री वीरेंद्र अग्रवाल जी जयपुर अश्वमेध यज्ञ के संयोजक थे। वे बताते हैं कि उन्होंने प्रत्येक गाँव के प्रत्येक घर तक पहुँचने का प्रयास किया और उसके लिये टोलियाँ गठित की गईं।

एक दिन प्रचार कार्य के लिये दो-तीन टोलियों को दूर-दराज के क्षेत्रों में, जहाँ सड़क यातायात नहीं है, भेजा गया। उन परिजनों ने लौटकर बताया कि जहाँ वे निमंत्रण देने गये थे, वहाँ के निवासियों ने बताया कि उन्हें तो निमंत्रण मिल चुका है। पत्रक पर पूज्य गुरुदेव की फोटो देखकर वे सब आश्चर्यचकित थे और बता रहे थे कि यही व्यक्ति तो हमें 2-3 दिन पूर्व ही यज्ञ का निमंत्रण और पॉम्पलेट देकर गया है। कार्यकर्ताओं ने बताया कि ऐसा वहाँ पर बहुत से लोगों ने बताया और सब लोग पूरे विश्वास के साथ बता रहे थे, कि यही व्यक्ति था। जबकि उन गाँवों के लोग पूज्य गुरुदेव तो क्या गायत्री परिवार को भी नहीं जानते थे।

उन कार्यकर्ता भाइयों की बात सुनकर हमें पूज्यवर के उन शब्दों का ध्यान हो आया कि बेटा शरीर छोड़ने के बाद हम हजारों गुनी शक्ति से काम करेंगे। हम सबको यही आभास हुआ कि पूज्य गुरुदेव ने अश्वमेध यज्ञ में न केवल सूक्ष्म रूप से संरक्षण ही दिया बल्कि प्रचार कार्य में स्थूल शरीर धारण कर स्वयं पॉम्पलेट भी वितरित किये।

हाँ-हाँ, यही व्यक्ति थे

यह लखनऊ अश्वमेध यज्ञ का प्रसंग है। खीरी लखीमपुर जिले के एक गाँव पलिया कलाँ के लोग जब अश्वमेध यज्ञ में आये, तो वे परम पूज्य गुरुदेव का चित्र देखकर हैरान रह गये। यहाँ-वहाँ परिजनों से उनके बारे में पूछ-ताछ करने लगे। लोगों ने बताया कि यह हमारे गुरुदेव हैं। तब वे गुरुदेव से मिलने की इच्छा व्यक्त करने लगे। जब उन्हें यह मालूम हुआ कि परम पूज्य गुरुदेव को शरीर छोड़े 3 वर्ष हो गये हैं, तो वे अत्यंत विस्मित रह गये। उन्होंने कहा कि ये कैसे हो सकता है ? क्योंकि यही व्यक्ति तो हमारे गाँव में निमंत्रण देने आये थे, उन्होंने यही कपड़े पहन रखे थे। उनकी बात सुनकर गायत्री परिवार के परिजनों ने कहा, ''यह कैसे हो सकता है ? वह कोई और होंगे, आपको भ्रम हुआ होगा।'' तब वे लोग एक-दूसरे की ओर इशारा करते हुए कहने लगे, ''साहब, हमसे क्या पूछते हैं, इनसे पूछिये, ये भी तो मिले थे ?'' वे लगभग 15-20 व्यक्ति थे, सभी एक स्वर में कहने लगे, ''हाँ-हाँ! यही व्यक्ति थे, बिल्कुल यही व्यक्ति थे। हम सबके पास आये थे और हमें निमंत्रण के साथ-साथ यज्ञ का पर्चा भी दिया। उन्हीं के बताने पर तो हम आये हैं।'' और श्रद्धावनत हो वहीं से पूज्य गुरुदेव को प्रणाम करके जयकार करते हुए कहने लगे, हम धन्य हो गये, हम धन्य हो गये। आपके गुरुदेव हमारे गाँव पधारे, हमारा तो जीवन ही सफल हो गया। आज उस गाँव की शाखा बहुत सशक्त है।

छठा स्थान ग्वालियर

श्री रामनिवास गुप्ता, ग्वालियर

किसी अखण्ड ज्योति में मैंने पढ़ा था कि दिनांक 15-2-69 को पूज्य गुरुदेव देश के विभिन्न दूर-दूर के पाँच स्थानों पर एक ही समय पर उपस्थित होकर प्रवचन आदि कर रहे थे। जिससे इस बात की पुष्टि हुई कि पूज्य गुरुदेव एक बार में पाँच शरीरों से एक साथ कार्य करते थे। यह बात मुझे भी भली

भाँति मालुम थी, परन्तु उस दिन से मेरी यह धारणा बदल गई और यह बनी कि पूज्य गुरुदेव मात्र पाँच शरीरों से ही नहीं बल्कि अनगिनत शरीरों से एक ही समय एक साथ विभिन्न स्थानों पर कार्य करते थे, क्योंकि उसी दिनांक 15-2-69 को पूज्य गुरुदेव ग्वालियर में भी थे। उक्त अखण्ड ज्योति के उस दिनाँक के पाँच स्थानों के अतिरिक्त छठवाँ स्थान ग्वालियर भी है। घटना इस प्रकार है कि पूज्य गुरुदेव दिनाँक 13-2-69 को ग्वालियर पधारे। सन्ध्या को कार्यकर्त्ताओं से मिलने के पश्चात् आँगरे की गोठ, लाला का बाजार लश्कर आँगरे साहब के निवास पर रात्रि को विश्राम किया। दूसरे दिन 14-2-69 को प्रात: गायत्री यज्ञ के पश्चात् वहीं पर स्थापित एक पँचमुखी गायत्री की प्रतिमा की प्राण प्रतिष्ठा की। दोपहर को गोपाल तेल मिल, बिरला नगर ग्वालियर में भाई, श्री छोटेलाल जी गर्ग के निवास से जलयात्रा के साथ पूज्यवर की एक शोभायात्रा भी निकाली जो गायत्री मंदिर ग्वालियर पर समाप्त हुई। उस दिन रात्रि को तानसेन रोड स्थित भाई श्री डी०डी० भार्गव के निवास पर विश्राम किया। तीसरे दिन 15-2-69 को प्रात: गायत्री यज्ञ के पश्चात् गायत्री मंदिर ग्वालियर में स्थापित गायत्री माता की मूर्ति की प्राण प्रतिष्ठा की। सायं वहीं पर प्रवचन के पश्चात् रात्रि की गाड़ी से मथुरा रवाना हुये थे।

वह बुजुर्ग कौन थे ?

(श्री नारसिंह भाई परमार, बड़ौदा गुजरात। नारसिंह भाई सन् 1988 में पूज्य गुरुदेव से जुड़े।)

श्री नारसिंह भाई परमार जी ने बताया कि उनकी पत्नी और कुछ बहिनें बड़ौदा के पास किसी गाँव में कार्यक्रम करवाने गयी थीं। लौटने में रात हो गयी थी। अंधेरे सुनसान रास्ते में इनकी गाड़ी का अन्य गाड़ी से बड़ा जबर्दस्त एक्सीडेण्ट हो गया। गाड़ी की हालत ऐसी हो गयी थी, कि लगता था, कोई बच नहीं पाया होगा। गाड़ी में सवार सभी लोग गाड़ी में ही फंस गये, किसी भी प्रकार बाहर नहीं निकल पा रहे थे। अंधेरा इतना घना था कि हाथ को हाथ नहीं सूझ पा रहा था। उसी समय अचानक न जाने कहाँ से, उस सुनसान रास्ते में एक बुजुर्ग मददगार बनकर आए, उनके हाथ में टॉर्च थी। उन्होंने एक बहुत छोटे, संकरे से रास्ते से सभी बहिनों को धीरे-धीरे बाहर निकाला। किसी भी बहिन को कोई खास चोट नहीं आयी थी। उस रास्ते पर बहुत कम गाड़ियों का आवागमन होता था, पर थोड़ी ही देर में एक गाड़ी आ गई। उन बुजुर्ग ने

सभी बहनों को उस गाड़ी में बैठाया। जब सभी बहिनें उस गाड़ी में बैठ कर जाने लगीं तो उन बुजुर्ग बाबा जी को धन्यवाद देने के लिये उनकी ओर मुड़ीं, परंतु वह बुजुर्ग तो न जाने कहाँ गायब हो गये थे। किसी को भी वह दिखाई नहीं दिये। सब को आश्चर्य हुआ कि इतनी जल्दी वे कहाँ चले गये?

अगले दिन परिजन, अपनी गाड़ी को देखने आये। सभी देखकर हैरान थे कि इतने संकरे रास्ते से बहिनें बाहर कैसे निकलीं? गाड़ी की हालत देखकर सबको और भी ज्यादा आश्चर्य हुआ कि इसमें सवार लोग बच कैसे गये? और किसी को भी कोई गंभीर चोट नहीं लगी थी। जबकि गाड़ी को देखकर लगता था कि इसमें सवार कोई भी आदमी जीवित नहीं बचा होगा। अब सब को गुरुदेव का आश्वासन याद आ रहा था कि बेटा, मैं सदा तुम्हारे साथ हूँ। सभी को यही आभास हुआ कि गुरुसत्ता ने अपने कार्य के लिये गई अपनी बच्चियों की रक्षा की थी।

चोरों से घर को बचाया

नारसिंह भाई परमार जी बड़े ही भावुक होकर बताते हैं कि एक बार वे 9 दिवसीय सत्र के लिए शान्तिकुञ्ज, आये। पीछे से, कुछ चोरों ने उनके घर में ताला लगा देखा, तो चोरी करने की योजना बनाई। रात को जब वह चोरी करने पहुँचे, तो देखा कि दरवाजा खुला है और एक वृद्ध दम्पती अन्दर बैठे हैं। दिन भर ताला लगा देखकर, रोज रात को वह चोरी करने के लिए आते। लेकिन रात को घर खुला पाकर लौट जाते। वह यह देखकर हैरान थे कि दिन भर तो ताला लगा रहता है और रात को ये वृद्ध कहाँ से आ जाते हैं? लेकिन वे लगातार आते रहे और 9-10 दिन के बाद एक रात जब उन्होंने पड़ोस वाले घर में ताला देखा तो उस घर में चोरी कर ली, और पकड़े भी गये। जब पुलिस, उन्हें पूछताछ के लिए लायी, तो चोरों ने बताया कि असल में, चोरी तो हमें साथ वाले घर में करनी थी, क्योंकि उनकी जानकारी के अनुसार वे लोग 10-12 दिन के लिये बाहर गये थे, पर रोज रात को उनका घर खुला मिलता और कोई बुजुर्ग दम्पती आकर बैठ जाते थे। सो पड़ोस वाले घर में जब ताला मिला तो हमने वहीं चोरी कर ली। उनकी बात सुनकर पड़ोसी ने कहा कि यह कैसे हो सकता है? परमार जी तो 10-12 दिन के लिये हरिद्वार गए हुए थे। इस बीच उनके घर पर भी कोई नहीं था।

पुलिस चोरों को लेकर परमार जी के घर आयी। जैसे ही वे सब घर के भीतर आये, चोर उनके घर में लगे गुरुजी-माताजी के चित्र को देखकर बोले- ''यही तो हैं वे दोनों, जो रोज रात को यहाँ आकर बैठ जाते थे।'' सब लोग उनकी बात सुनकर आश्चर्यचकित थे और हमारा पूरा परिवार गुरुवर के आगे नतमस्तक था। कितना ध्यान था उन्हें अपने बच्चों का, बच्चे उनके पास हैं तो वे पीछे से उनके घर की रखवाली भी कर रहे हैं।

जीवन की दिशा ही मोड़ दी

नाम न छापने का आग्रह करते हुए **पंजाब** की एक बहन ने अपनी आप-बीती कुछ इस प्रकार सुनाई, ''उनके घर में बहुत कलह-क्लेश का वातावरण बना हुआ था। पति को अचानक ही व्यापार में बहुत बड़ा घाटा हुआ था। चारों ओर से असफलता मिल रही थी। इस वजह से उनका स्वभाव और भी अधिक उग्र हो गया था। सासू माँ भी दिन भर क्लेश किये रहती। एक दिन कुछ अधिक ही कहासुनी हो गई। मेरी सहनशक्ति ने जवाब दे दिया। निराशा के भाव मन पर हावी हो गये। मन में आया कि इस जीवन से मौत ही भली है। पास ही रेल पटरी थी। मैं घर से निकल पड़ी। रोती जा रही थी और रेल पटरी के बीचों-बीच चलती जा रही थी। अचानक एक वृद्ध ने मेरा हाथ पकड़ कर मुझे पटरी से नीचे उतार लिया और रेलगाड़ी, धड़धड़ती हुई निकल गई। उसके गुजर जाने के बाद मैंने उन वृद्ध से कहा, ''बाबाजी, यह क्या किया आपने? मुझे मर जाने दिया होता, क्यों बचाया?'' उन्होंने मुझे समझाया, ''बेटी! जीवन बहुत कीमती है।'' फिर मेरी सारी समस्या सुनी और मुझे समझा-बुझा कर एक रिक्शा वाले को बुलाकर रिक्शा में बिठा दिया और कहा, ''जा बेटी! अपने घर जा। सब ठीक हो जायेगा।''

रास्ते में मुझे ख्याल आया कि आज मेरी सहेली के घर में कोई पूजा है। उसने बुलाया था, क्यों न मैं उसके घर चली जाऊँ। मैंने रिक्शा उसके घर की ओर मोड़ लिया। जब मैं उसके घर पहुँची और पूजा में जो तस्वीर रखी थी उसे देखकर मैं हैरान रह गई। पूजा समाप्त हो जाने के बाद मैंने उससे पूछा कि यह जो व्यक्ति हैं, मैं अभी-अभी इनसे मिलकर आ रही हूँ। यह कौन हैं? कहाँ रहते हैं? मुझे कैसे मिलेंगे? उसने मुझे बताया कि यह हमारे गुरु, पंडित श्रीराम शर्मा आचार्य जी हैं। तुम इनसे मिलकर आ रही हो, यह कैसे हो सकता है?

अभी कुछ दिन पहले ही तो इन्होंने अपना शरीर छोड़ा है। तुम जिससे मिलकर आ रही हो वह कोई और होगा। सुनकर मैं आश्चर्य में पड़ गई पर मेरे साथ जो घटित हुआ था, उसे भी मैं झुठला नहीं सकती थी।

उसके बाद मैं शान्तिकुञ्ज भी आई। मैंने दीक्षा ली, हमारी सारी समस्याएँ जल्दी ही सुलझ गईं, घर का वातावरण ही बदल गया। मैं और मेरे पति दोनों ही गुरुजी के ऋणी हैं। हम उनसे बस यही प्रार्थना करते हैं कि हमें अपनी शरण में लिये रहें।

माताजी ने सेवा की

न केवल गुरुजी बल्कि माताजी भी कम शक्ति सम्पन्न नहीं थीं। स्वयं गुरुदेव के शब्दों में, ''माताजी भगवान के वरदान की तरह हमारे जीवन में आईं। उनके बगैर मिशन के उदय और विस्तार की कल्पना करना तक कठिन था।'' लोगों ने अपनी स्थूल आँखों से उन्हें गुरुजी की सहधर्मिणी ही समझा परंतु जिनने उनके अनुदान पाये हैं, वे ही उस भगवत् सत्ता को जान पाये। माताजी के विषय में भी ऐसे अनेकों प्रसंग मिलते हैं जब उन्होंने सूक्ष्म शरीर से परिजनों की सहायता की।

पाथाखेड़ा, बैतूल के एक कार्यकर्त्ता की एक मासीय सत्र हेतु शान्तिकुञ्ज आने की तीव्र उत्कंठा थी। उन्होंने शान्तिकुञ्ज पत्र लिखा। अनुमति पत्र भी आ गया। लेकिन फिर ये असमंजस पैदा हुआ कि पत्नी की प्रसूति का समय इसी बीच आ सकता है, तो जाऊँ कि न जाऊँ? इससे पहले भी वह एक बार किसी कारणवश नहीं आ पाए थे। सो इस अवसर को वह चूकना नहीं चाहते थे। उनकी पत्नी शान्तिकुञ्ज के विषय में कुछ विशेष नहीं जानती थी। फिर भी पत्नी ने पति की तीव्र उत्कंठा देखी तो कहा, ''आप चिन्ता न करें। यहाँ आस-पास के कोई भी परिजन आ जायेंगे, मदद करेंगे। आप भले जा सकते हैं।'' शान्तिकुञ्ज जाने की उनकी उत्कंठा बड़ी प्रबल थी। सो पत्नी को उसी अवस्था में छोड़ वे चले गये। उनके जाने के कुछ समय बाद एक वृद्ध माताजी उनके घर में आयीं। बोलीं, ''बेटी! मुझे तुम्हारे पति ने तुम्हारी देखभाल करने के लिये कहा था। सो मैं आ गई हूँ। तुम बिलकुल चिन्ता न करना, मैं तुम्हारा पूरा ख्याल रखूँगी।''

थोड़े ही दिन में संतान पैदा हुई। उन माताजी ने जच्चा और बच्चा दोनों की पूरी देख-भाल की। रात-दिन उनके पास रहीं।

जब एक माह होने को आया। उनके पति शान्तिकुंज से वापस आने वाले थे, तो वह माताजी उन्हें बोलीं, ''बेटी! अब तो तुम स्वस्थ हो चली हो और दो-तीन दिन में तुम्हारे पति भी आ ही जायेंगे। सो अब मैं अपने घर जाऊँगी। मुझे और भी ढेरों काम हैं।'' उन्होंने माताजी को रोकना चाहा, पर वे रुकी नहीं। पति जब घर पहुँचे, तो पत्नी ने सब हाल बताया। जानकर वह कार्यकर्ता बड़े हैरान हुए कि उन्होंने तो किसी महिला को देखभाल के लिये नहीं कहा था। पत्नी भी हैरान हुईं कि फिर वह महिला कौन थीं?.... और इतनी देखभाल.. .. इतनी देखभाल तो कोई अपने सगे रिश्तेदार भी नहीं करते।

फिर जब उन कार्यकर्ता ने देवस्थापना चित्र निकाला, और उसे पूजा में रखने के लिये कहा तो उस चित्र को देखकर उनकी पत्नी चौंक उठीं, और बड़ी हैरानी से बोलीं, ''अरे! यही तो वह माताजी हैं। जिन्होंने मेरी इतनी सेवा की।''

ऋषिसत्ता का आश्वासन, ''बेटा तू मेरा काम कर, तेरा काम मैं करूँगा।'' उनके जीवन में चरितार्थ हुआ था। दोनों पति-पत्नी कृतज्ञता से आँसू बहा रहे थे।

हृदय की बंद धड़कन पुनः चालू हुई

डॉ. बसंतकुमार पांडेय, रीवा

मई 94 में मुझे गंभीर हृदयघात हुआ। मेडिकल कालेज रीवा के गाँधी स्मारक अस्पताल के इन्टेसिव केरोनरी केयर यूनिट में एक महीने भर्ती रहा। मेडिकल विभागाध्यक्ष ने तुरंत तीसरी हार्ट सर्जरी के लिए अपोलो हास्पिटल मद्रास जाने की सलाह दी। इसके पूर्व बाम्बे हास्पिटल में दो बार ओपेन हार्ट बाई पास सर्जरी एवं इंजियोप्लास्टी हो चुकी थी।

अगस्त 94 में अपोलो हास्पिटल मद्रास में हार्ट सर्जरी हुई। आपरेशन थियेटर से आई.सी.यू. में लाया गया। अचानक तबियत बहुत खराब हो गई। बी.पी. गिरने लगा और हृदय की गति कमजोर पड़ने लगी। नर्स, बड़े डॉक्टरों में भागदौड़ मच गई। एकदम सबकुछ समाप्त। हृदय की धड़कन बंद हो गई।

पत्नी कांता दूर खड़ी हतप्रभ थीं। इतने में एक शुभ्रवस्त्रा छोटेकद की स्थूलकाय तेजस्वी महिला अचानक कमरे में आई। मुस्कराते हुए धीरे-धीरे बिस्तर के पास व्यस्त डाक्टर, नर्सों के बीच आकर खड़ी हो गईं और कहा, ''क्या हो गया?'' सिर पर हाथ फेरा। एक क्षण रुकीं, कहा, ''ठीक हो जाएगा।'' और धीरे-धीरे पंपिंग किया। धड़कन पुनः प्रारंभ हो गई। पत्नी, रोकने के बावजूद जबर्दस्ती कमरे में आकुल-व्याकुल होती हुई आईं और पूछा, ''क्या हो गया इन्हें? कैसे हैं? और वह माताजी, जो अभी-अभी कमरे में आई थीं कहाँ गईं?''

डॉक्टरों ने कहा, ''हाँ एक शुभ्रवस्त्रा तेजस्वी महिला आई तो थी, कहाँ गई पता नहीं? शायद बाहर होंगी। लेकिन, आप भीतर कैसे आ गईं? बाहर जाइये, पांडेजी की तबियत अचानक खराब हो गई थी, अब ठीक है। कृपया आप बाहर जाइये, हमें अपना काम करने दीजिए।''

कमरे के बाहर देखा, आई.सी.यू. के बाहर देखा, सभी जगह देखा, वह ज्योर्तिमय महिला कहीं दिखाई नहीं पड़ी। निश्चय ही वह वंदनीया माताजी ही थीं, जो अपने बेटे की हृदय की धड़कन को अपने पावन स्पर्श से पुनः चालू करने के बाद अन्तर्ध्यान हो गई थीं।

होश आने पर जब पत्नी ने यह सब पूरा विवरण बताया तो बरबस ही आँखों से अविरल अश्रुधारा बह उठी। धन्य हैं ऐसी ममतामयी, वात्सल्यमयी माताजी और परमपूज्य गुरुदेव। उनके बताये रास्ते पर चलना एवं दिये गये निर्देशों को पूरा करना ही अब हमारे जीवन का उद्देश्य है।

5. साक्षात् शिव स्वरूप

गुरुजी-माताजी अलौकिक शक्तियों से संपन्न थे। साधारणत: तो महापुरुष स्वयं को छिपाये रहते हैं परन्तु कभी-कभी संकेतों में वे स्वयं को प्रकट भी करते हैं। कभी-कभी कुछ ऐसी बात कह जाते हैं, कुछ ऐसा कार्य कर जाते हैं कि सुनने वाला, देखने वाला अचंभित हो जाता है। विचार करता रह जाता है। जिसके पास श्रद्धा है, विश्वास है, जो भक्त है वही उस कथन के मर्म को समझ पाता है। अन्यों के दिलो-दिमाग पर तो जैसे वे कोई पर्दा डाल देते हैं और समय बीत जाने पर वे उन घटनाओं को स्मरण कर बस इतना ही कह पाते हैं कि काश! हम उस समय समझ पाते। आज हम सब उन्हें साक्षात शिव, महाकाल, अवतारी चेतना आदि नाना प्रकार के संबोधनों से अपनी श्रद्धा अर्पित करते हैं। कभी-कभी परिजनों के सामने उन्होंने स्वयं को प्रकट भी किया है। ऐसे ही कुछ प्रसंग, कुछ वाक्यांश यहाँ दिये जा रहे हैं।

कुएँ का पानी मीठा हो गया

(श्री हनुमान शरण रावत जी एवं श्रीमती मिथिला रावत, सन् 1969 से पूज्य गुरुदेव के संपर्क में रहे। सन् 1983 में गुरुदेव के कहने पर पूर्णरूपेण शान्तिकुञ्ज आ गये।)

हम एक कार्यक्रम हेतु दिगौड़ा (टीकमगढ़) गये। वहाँ के एक कार्यकर्ता भाई, श्री सोनकिया जी ने कहा, ''बहन जी, आज हम आपको वहाँ ले चलते हैं जहाँ से गुरुजी कभी पैदल गये थे।'' वे हमें उस रास्ते से ले गये और बोले, ''इन गलियों में से गुरुजी कभी अपना सामान भी स्वयं लेकर चले थे।''

''गुरुजी, एक हाथ में लोहे का बक्सा और कंधे पर अपना बिस्तर लेकर चलते थे। उनकी इस सादगी से कोई जान ही नहीं पाया कि वे इतने बड़े महापुरुष हैं।'' मैंने कहा, ''गुरुजी, अपना सामान मुझे दे दीजिये'', तो वे बोले, ''नहीं-नहीं अपना ही सामान है।''

हम लोग वहाँ पहुँचे जहाँ मंदिर बन रहा था। वहाँ पर एक कुआँ खोदा गया था, जिसका पानी खारा था। लोगों ने बताया कि कितनी मेहनत से कुआँ खोदा गया और इसका पानी खारा निकल गया। अब इसका क्या उपयोग? क्या करें?

गुरुजी ने सब बात सुनी और कहा, ''अच्छा! खारा है बेटा! पानी खारा है! लाओ रस्सी, बाल्टी, देखें!'' गुरुजी ने स्वयं कुएँ से पानी निकाला और उसे पिया। फिर बोले, ''बेटा! ये तो मीठा है। कहाँ खारा है? देखो! कहाँ खारा है?'' और, उन्होंने सबको थोड़ा-थोड़ा पानी पीने के लिये दिया। सबने पानी पिया और सब हैरान रह गये कि खारा पानी, मीठा कैसे हो गया?
तब सबने गुरुजी की शक्ति को पहचाना और उनकी जय-जयकार करने लगे।

कोई बीमार है?

(पंडित लीलापत शर्मा जी, पूज्य गुरुदेव के प्रारंभिक शिष्यों में से थे। सन् 1953 में, डबरा म.प्र. में वे पूज्य गुरुदेव से जुड़े व सतत संपर्क में बने रहे। सन् 1967 में पूज्य गुरुदेव ने उन्हें मथुरा बुला लिया। सन् 1971 में पंडित जी को मथुरा का सब कार्यभार सौंपकर, पूज्य गुरुदेव-वंदनीया माताजी शान्तिकुंज, हरिद्वार आ गये। पंडित जी ने मिशन की बहुत बड़ी-बड़ी जिम्मेदारियाँ सँभालीं। गुरुदेव के साथ बहुत सी यात्रायें भी कीं। उन सब संस्मरणों को उन्होंने 'पूज्य गुरुदेव के मार्मिक संस्मरण' नामक पुस्तक के रूप में प्रकाशित किया है। परिजन उनके संस्मरणों को उस पुस्तक में पढ़ सकते हैं।)

जब मिशन अपनी शैशव अवस्था में था, उस समय पूज्य गुरुदेव ने कितना परिश्रम करके और कितना तप लुटाकर शाखाएँ खड़ी कीं उसके विषय में बताते हुए पंडित जी ने असम का एक संस्मरण सुनाया था।

गायत्री परिवार के कार्यकर्त्ता ने एक गाँव में यज्ञ रख दिया और पूज्यवर को बुलाया। कई बार वहाँ गया, यज्ञ के बारे में समझाया किन्तु पता नहीं क्यों? किसी को कुछ समझ में नहीं आ रहा था। यहाँ तक कि पूज्य गुरुदेव भी उस गाँव में पहुँच गये, फिर भी यज्ञ में आने को कोई तैयार नहीं था और न ही वे लोग आये।

पूज्यवर ने सारी स्थिति भाँप ली। वहीं आसपास जो ग्रामीण टहल रहे थे, उन्हें बुलाकर पूछा, ''इस गाँव में कोई वृद्ध बीमार है ?''

''हाँ, ऐसे तो कई लोग हैं।'' ग्रामीणों ने जवाब दिया। पूज्यवर ने कहा, ''उन्हें मेरे पास ले आओ।''

ग्रामीण दौड़े और अपने-अपने घरों से जो भी बीमार था, वृद्ध था, कुछ अन्य समस्या थी, सभी को ले आये। कुछ स्वयं आ गये, कुछ को सहारा देकर ले आये।

गुरुदेव तत्काल उनकी समस्याओं के निवारण हेतु जुट गये। बीमार को, ''तुझे कुछ नहीं हुआ है।'' कह दिया। वृद्ध को ''स्वस्थ रहोगे'' कहा। किसी की कोई समस्या थी उसे कह दिया, ''समस्या ठीक हो जायेगी।''

अब तो सुन-सुन कर पूरा गाँव दौड़ पड़ा। महात्मा जी के आने की खबर पूरे गाँव में आग की तरह फैल गई। सभी अपनी-अपनी समस्या बताने लगे और समाधान पाकर निहाल हो गये।

दूसरे दिन पूरा गाँव यज्ञ में शामिल था। एक भी व्यक्ति ऐसा नहीं था, जिसने यज्ञ में भाग न लिया हो।

इस तरह उन्होंने अपने तप की शक्ति से मिशन का प्रचार-प्रसार किया। पंडित जी कहते थे, ''मैं तो मूक दर्शक की नाईं, अवाक् रहकर उन लीला-पति की लीला देखता रहा।'' असली नाम तो उनका लीलापति होना चाहिए था।

आदिवासियों को भी अपना बना लिया

(श्री भास्कर सिन्हा जी, सन् 1963 में पूज्य गुरुदेव के संपर्क में आये और सन् 1976 में गुरुदेव के कहने पर सपरिवार शान्तिकुञ्ज आ गये।)

हम सन् 1981 में पूज्यवर के साथ शक्तिपीठों की प्राण-प्रतिष्ठा के दौरे पर थे। मार्च का महीना था। होली में दस-पंद्रह दिन बचे थे। सभी ओर होली का माहौल था। हम सब कार्यक्रम हेतु जगदलपुर जा रहे थे। सड़क सुनसान थी। एक स्थान पर पुलिस ने रोका पूछताछ की व कहा, ''आगे मत जाओ। आदिवासी लूट-पाट करते हैं।''

पंडित लीलापत शर्मा जी भी साथ थे। उन्होंने गुरुदेव की ओर देखा। गुरुजी ने कहा-''दूसरा रास्ता हो तो देखो।''

एक दूसरा रास्ता था। कुछ दूर उस पर गये, पता चला वह काफी लम्बा है, अत: गुरुजी ने कहा, ''पहले वाले से ही चलो।'' दोपहर साढ़े बारह-एक बजे के आस-पास काफी दूरी पर भीड़ दिखाई दी। पत्ते लपेटे हुए, लगभग 100-150 आदिवासियों की भीड़ थी। (होली के समय लूट सामान्य बात थी।) सभी गंडासा, भाला, तलवार से लैस थे। गाड़ी आगे बढ़ायें कि पीछे चलें-असमंजस था। गुरुजी ने कहा, ''गाड़ी चलने दो। कुछ दूर पहले गाड़ी खड़ी करना व तुम सब उतरना मत, केवल मैं ही उतरूँगा।'' उस समय लगा कि गुरुजी कुछ सोच रहे हैं। गाड़ी उनके पास पहुँचने ही वाली थी कि गुरुजी हड़बड़ा कर बोले- ''रोक बेटा! जब तक मैं न कहूँ, तुम लोग उतरना मत।''

गुरुदेव उतर कर बोनट के पास खड़े हो गये। राड वगैरह लिये हम बैठे रहे। पूज्यवर थोड़ी देर दीक्षा देने की मुद्रा में खड़े रहे। फिर आशीर्वाद की मुद्रा में हाथ ऊपर उठाया। पता नहीं कहाँ से उनके बीच में से एक बूढ़ा व्यक्ति आगे आया। उसके हाथ में तीन मालाएँ थी। वह बूढ़ा दौड़ कर आया और पूज्यवर से तीन कदम दूरी पर दण्डवत् प्रणाम की मुद्रा में लेट गया। उसे देखकर उसका अनुसरण करते हुए वे सभी दौड़े और सब ने साष्टांग प्रणाम किया। स्थिति एकदम भिन्न हो गई, जैसे जादू हो गया हो। गुरुदेव ने उन्हें कार्यक्रम में आने के लिये निमंत्रित किया।

उस स्थिति से निपटने में हम लोगों को एक-डेढ़ घंटा लगा। पर जब हम कार्यक्रम स्थल पर पहुँचे तो देखकर अचंभित रह गये। वे सभी जिन्होंने रास्ता रोका था, जगदलपुर प्रवचन पण्डाल में जाने किस रास्ते से व कैसे हमसे भी पहले पहुँच गये थे।

गुरुदेव ने अपनी ब्रज भाषा में कहा, ''देखो! हम लोग सात बजे पहुँचे हैं और, वे भी इस समय तक आ गये।'' फिर बोले, ''उन सभी को मंच तक आने दिया जाये।'' गुरुदेव ने अपने सामने मंच के पास, उन बूढ़े भील महाशय को बैठाया। सभी ने पूरा प्रवचन सुना। अन्त में पूज्यवर ने उन सभी का तिलक किया, तब वे सब प्रणाम करके घर वापस हुए।

गंगाजल पीकर गंगा को रोका

श्री केसरी कपिल जी, शान्तिकुञ्ज

बात अगस्त 1987 के आस-पास की है, पूज्य गुरुदेव ने मुझे बुलाकर कहा, ''बेटे, मुझे गंगाजल पीने का मन है। माताजी से पात्र लेकर गंगा जल ले आ।'' मेरे द्वारा लाया जल गुरुदेव लेंगे यह सोचकर खुशी से दौड़ा हुआ गया और केन में जल भरकर ले आया। गिलास में जल भरकर पूज्य गुरुदेव को देकर लौटने लगा। गुरुदेव ने जल पीते हुए कहा, 'रुक जा।' मैं कमरे के दरवाज़े पर रुक गया। मुझे खड़ा देखकर गुरुदेव बोले, ''तुम्हें नहीं रोक रहा हूँ, तुम जाओ।'' मैं जल भरा केन वहीं छोड़ कर आ गया।

उसी वर्ष दिसम्बर में पूर्णिया जिले के तेल्दिया गाँव में प्राण प्रतिष्ठा के लिए मुझे भेजा गया। उन्हीं दिनों समाचार पत्रों में उत्तरी बिहार में भयावह बाढ़ के समाचार आ रहे थे। जिनके अनुसार आज़ादी के बाद बने उत्तरी बिहार की नदियों के अनेक तटबन्ध टूट गये थे। जानमाल की भारी क्षति हुई थी। गाँव के गाँव बह गए थे। प्लास्टिक की छत बनाकर लोग राजपथ पर, तटबन्धों के पास रह कर बचने का प्रयास कर रहे थे। पर इधर हर किसी की ज़ुबान पर एक ही बात थी, ''हमें तो गंगा मैया ने बचाया।'' पूछने पर पता चला, जिन दिनों उत्तरी बिहार की सभी नदियों में बाढ़ थी, गंगा का जल स्तर नीचा था और सभी नदियों का जल उसमें समाकर समुद्र में जा रहा था। गंगा मर्यादा में ही बहती रही। लोगों की बात सुनकर मुझे उस दिन का प्रसंग याद आया जब गुरुदेव ने गंगा जी से जल मँगा कर पिया था और घूँट भर कर कहा था ''रुक जा।'' मैं बरबस ही यह सोचने के लिये मजबूर था कि क्या, गुरुदेव ने उस दिन माँ गंगा को रुकने का आदेश दिया था और बिहार को दोहरी त्रासदी से बचाया था?

मेरे गुरु मेरे घर आये, मैं भी तेरे घर आया

(श्री रघुवीर सिंह चौहान जी, सन् 1977 में पूज्य गुरुदेव से जुड़े और सतत संपर्क में बने रहे। उनका पैतृक घर ज्वालापुर, हरिद्वार में है, किन्तु गुरुदेव से जुड़ने के कुछ समय बाद ही चौहान जी, परिवार को ज्वालापुर में ही रखकर स्वयं स्थाई रूप से शान्तिकुञ्ज आ गये थे।)

हम लोग ज्वालापुर में रहते हैं। एक परिजन शान्तिकुञ्ज जाने के लिये लगभग छः माह से कह रहे थे, सो हम पत्नी सहित शान्तिकुञ्ज आये।

कक्षा सात में मैंने एक कथा सुनी थी कि कलियुग में जब भगवान् आयेंगे तो कोई पहचान नहीं पायेगा। वे स्वयं चिन्ह प्रकट करेंगे, ताकि भक्त पहचान ले। तब भक्त भगवान् को अपने घर लायेगा।

पहली बार जब गुरुजी से मिले तो उन्होंने कहा-''तुम पृथ्वीराज चौहान की जाति के हो।'' सुनकर हमें गर्व हुआ।

मैंने उनका मस्तक देखा तो चकित रह गया। आज्ञा चक्र में बहुत देर तक गहरा गड्ढा जैसा दिखाई देता रहा। वहाँ से प्रकाश निकल रहा था। घर आने पर तीन दिनों तक नींद नहीं आई। गुरुजी के विषय में ही विचार करता रहा। पहले तो सोचा कोई तांत्रिक होंगे। फिर अचानक वह कथा याद आई। सो हम शीघ्र ही शान्तिकुञ्ज आये कि देखें यदि वे भगवान् हैं तो हमारे बुलने पर घर आते हैं कि नहीं।

जैसे ही हम पूज्यवर के पास पहुँचे, हमारे कुछ बोलने से पहले ही वे खुद बोल पड़े, ''बेटा, हम तुम्हारे यहाँ आने के लिये कई दिन से इन्तजार कर रहे हैं।''

मैं सुन कर दंग रह गया। सोचा कि यह अवश्य ही अंतर्यामी हैं जो तुरंत मेरे मन की बात जान ली।

15 जनवरी सन् 77 को ठीक 12:00 बजे दोपहर में परम वंदनीया माताजी एवं परम पूज्य गुरुदेव मेरे घर पधारे। उन्होंने कहा- ''बेटा किसी को बुलाना मत।'' क्योंकि वे केवल भक्तों का ही सम्मान करने हेतु वचनबद्ध थे, सबकी मनोकामना हेतु नहीं।

अपने भगवान को अपने घर पाकर हम लोग निहाल हो गये। उस समय हमें वे स्पष्ट रूप से राम-सीता के स्वरूप में आभासित हुए।

एक साल बाद फिर उसी दिन 15 जनवरी सन् 1978 को वे दिन के 12:00 बजे ही आये। उस दिन भगवान श्रीकृण और शिव शंकर के रूप में दिखे। माथे पर पूर्ण चन्द्रमा था। दोनों बार वे एक-सवा घंटे तक बैठे, बातचीत की, मेरे मन की सम्पूर्ण गाँठे खोलते रहे।

अनेक चर्चाओं के बीच उन्होंने दो महत्वपूर्ण बातें कहीं-

(1) बेटा, मेरे गुरु मेरे घर आये थे, देख! मैं भी तेरे घर आ गया।

(2) बेटा, मैंने तुझे तेरे और अपने दो जन्मों का बोध करा दिया है।

अन्त में उन्होंने हम दोनों से पूछा, ''बेटे! तुम्हारी कोई इच्छा है?'' हमने कहा ''नहीं गुरुजी, कोई इच्छा नहीं है।''

अब हम पूरी तरह गुरुजी को समर्पित हो गये। जिससे हमारी परीक्षा भी शुरु हुई। अब मुझे गुरुजी के काम के अलावा कुछ सुहाता ही नहीं था। मैंने खेती करना छोड़ दिया। खेत खाली पड़े रहे। बैल-गाड़ी बाँट दी व शान्तिकुञ्ज आ गया। पत्नी घर पर ही रही। बहुत गरीबी में एक साल काटा। घर-बाहर सभी मुझे पागल कहने लगे।

मेरे भाईयों में बटवारा हुआ। सबने अच्छे-अच्छे खेत छाँटकर रख लिये। मुझे सबसे रद्दी, खराब, उबड़-खाबड़ ज़मीन दी। मैं कुछ नहीं बोला। 15-20 साल यूँ ही गुज़र गये। चकबन्दी हुई। मेरी ज़मीन के तीन तरफ रोड बना। मेरी कुछ जमीन रोड में चली गई। जो जमीन कुछ समय पहले तक कौड़ियों के भाव भी नहीं थी, वह अचानक ही लाखों की हो गई। रिश्तेदार-दलाल सब आश्चर्य चकित थे यह क्या हुआ? मुझे उस जमीन के काफी पैसे मिले। मैंने गुरुजी की शक्ति मान कर सब स्वीकार किया।

साक्षात अन्नपूर्णा का भण्डार

एक दिन मैंने गुरुदेव से प्रश्न किया-''गुरुदेव, मैं तो पढ़ा लिखा नहीं हूँ, फिर मुझे यहाँ क्यों बुलाया? यहाँ तो पढ़े-लिखों का काम अधिक है।''

गुरुदेव बोले, ''बेटे, पढ़े-लिखे को अपने ज्ञान को भुला कर हमारे ज्ञान को आत्मसात् करना पड़ता है, जो कि कठिन है। किन्तु तुझे भुलाने का श्रम नहीं करना पड़ेगा, केवल हमारे ज्ञान को ही आत्मसात् करना होगा।''

वे सर्वज्ञ शिव थे। प्रारंभ में मैं घर से रोज गुरुकुल कांगड़ी होते हुए पैदल आता था। माताजी बातों-बातों में जान लेती थीं व कहतीं- ''लल्लू इतने लम्बे रास्ते से क्यों आता है? छोटे रास्ते से आया कर।''

एक दिन मैंने गुरुकुल कांगड़ी के पास दो रुपये का लाटरी टिकट खरीदा पर यह बात किसी से कही नहीं। किन्तु गुरुदेव ने दो-चार दिन बाद

मुझसे कहा, ''कहीं मुफ्त के पैसे से कोई रईस बना है क्या?'' मैं आवाक् रह गया। बिना कहे ही गुरुदेव ने जान लिया। मैं उनकी सर्वज्ञता पर नत मस्तक था। फिर मैंने वह टिकट फाड़कर फेंक दिया। ❀

माताजी का चौका तो साक्षात् अन्नपूर्णा का भण्डार है। एक बार अवस्थी जी खाना खाने गये थे कि एक महिला आई और पूछा-''पन्द्रह-सोलह व्यक्ति हैं, खाना खिलायेंगे क्या?'' मैं ऊपर गया, देखा-दाल चावल तो पर्याप्त था। रोटी 15-20 ही थी। मैंने हाँ कर दी। जब सब आये, तब पता चला कि वे तो 50-60 व्यक्ति हैं। अब मैंने उसी महिला को रोटी का बर्तन दे दिया और कहा, ''जहाँ तक रोटी जाय, सबको एक-एक रोटी परोस दो।''

उसने रोटी परोसी। किसी अपने को उसने दो रोटी दे दी, अत: अन्त में एक रोटी कम पड़ी, अन्यथा सबको उतनी ही रोटी पूरी हो गई। ऐसी थी माताजी के चौके की शक्ति। मैं स्वयं देखकर आश्चर्यचकित था। मात्र 15-20 लोगों के लायक भोजन था, जिसमें 50-60 लोगों ने भरपेट भोजन कर लिया?

जो माँगोगे वही मिलेगा

सुश्री शक्ति श्रीवास्तव

दिनाँक, 14 जनवरी 1982 को पूज्य गुरुदेव हमारे यहाँ गायत्री शक्तिपीठ की प्राण-प्रतिष्ठा हेतु पधारे। माँ गायत्री जी का पूजन करते समय उन्होंने कहा, ''बेटा! प्राण-प्रतिष्ठा करने हेतु इस समय मैं सारे देश में घूम रहा हूँ, किन्तु जो मुहूर्त तेरे इस शक्तिपीठ को मिला, वह किसी को नहीं मिला।'' फिर पुन: बोले, ''बेटा! ये प्राणवान प्रतिमा है। जो माँगोगे, वही मिलेगा।''

पूज्यवर के द्वारा प्रतिष्ठित अनेक शक्तिपीठों से अनेकों बार ऐसे संस्मरण प्रकाशित हुए हैं, जिनमें परिजनों ने अपनी मनोकामनाएँ पूर्ण होने की बात कही है। पूज्यवर द्वारा की गई स्थापनाएँ इतनी प्रणवान हैं कि वहाँ पर जिन्होंने भी शुद्ध मन से श्रद्धा पूर्वक, जो भी याचना की है, पूर्ण होकर ही रही है।

गंगा को हमारा आशीर्वाद कहना

श्रीमती विमला अग्रवाल, ब्रह्मवर्चस

सन् 1977 में मैं शान्तिकुञ्ज में तीन माह के समय दान के लिये आई हुई थी। प्रातः यज्ञ, प्रणाम, संगीत शिक्षण के बाद रोटी सेंकना दिनचर्या में शामिल था। उस दिन कार्तिक पूर्णिमा थी। गुरुजी प्रणाम के समापन व लेखन के पश्चात् चौके में आकर टहलने लगे। इसी समय भक्तिन अम्मा ने पूछा- ''गुरुजी, आज कार्तिक पुन्नी ए, गंगा नहाये जातेन, सब लइकामन घलो जाबोन कहत हैं।'' (आज कार्तिक पूर्णिमा है, गंगा स्नान करने का मन है। सभी लड़कियाँ भी जाने के लिये कह रही हैं।)

गुरुजी ने कहा, ''अच्छा-अच्छा! आज कार्तिक पूर्णिमा है? ठीक है, ठीक है। चले जाना। कार्तिकेय को हमारा आशीर्वाद कहना। गंगा को हमारा आशीर्वाद कहना।''

मैं उनके शब्दों को सुन कर कुछ क्षणों तक सोचती रह गई, गुरुजी यह क्या कह रहे हैं? ''कार्तिकेय को हमारा आशीर्वाद कहना। गंगा को हमारा आशीर्वाद कहना।'' माँ गंगा व कार्तिकेय को आशीर्वाद कौन दे सकता है? फिर अंतरमन ने कहा, माँ गंगा व कार्तिकेय को आशीर्वाद देने की सामर्थ्य रखने वाले साक्षात् शिव के अतिरिक्त और कौन हो सकते हैं?

अंतर्यामी गुरुदेव,

(श्री विश्वप्रकाश त्रिपाठी जी ने सन् 1981 में दीक्षा ली और वसंत पंचमी सन् 1988 में स्थाई तौर पर सपरिवार शान्तिकुञ्ज आ गये।)

घटना उन दिनों की है जब पूज्यवर शक्तिपीठों की प्राण प्रतिष्ठा के क्रम में देशव्यापी दौरे पर थे। 8 जनवरी 1981 को डॉ. होता के बंगले में लखनऊ में गुरुदेव के प्रथम दर्शन हुए। मैं प्रणाम कर एक कोने में खड़ा हो गया। मन ने कहा, ''ये विश्व के सबसे विद्वान व्यक्ति हैं। दीक्षा ले लो, तो सब मालूम हो जायेगा।''

गुरु दीक्षा से गुरुशक्ति प्राप्ति का संदेश मन में पूर्व से ही समाया था। थोड़ी देर बाद मैं बाहर आ गया। चूंकि गुरुदेव प्रातः ही मिलते थे। अतः हम सब बड़े सबेरे बिना चाय-नाश्ते के ही निकल पड़े थे। मेरे बड़े भाई डॉ. ओ.पी. शर्मा जी भी साथ थे, उन्हें भूख लग रही थी। अन्दर गुरुजी ने श्री कपिल

जी से कहा, ''जाओ, डॉ. ओ.पी. को भूख लग रही है, उसे फल निकाल कर दे दो।'' श्री कपिल जी ने हमें फल लाकर दिये और बताया कि डॉक्टर साहब को भूख लग रही थी, अत: गुरुजी ने फल भेजे हैं। हम दोनों भाई आश्चर्य में पड़ गये। हमने तो किसी को कुछ कहा नहीं। उन्हें कैसे पता लगा कि हम भूखे हैं?

थोड़ी देर बाद गुरुदेव बाहर आए व बोले, ''हम डॉ. ओमप्रकाश की गाड़ी में जायेंगे। ओपन गाड़ी में नहीं जायेंगे।'' उन्हें अयोध्या जाना था। डॉ. ओमप्रकाश जी, मन ही मन सोच रहे थे कि पूज्यवर हमारी गाड़ी में चलते तो कितना अच्छा होता? किन्तु संकोचवश कह नहीं पा रहे थे। साथ ही, व्यवस्था में हस्तक्षेप भी नहीं करना चाहते थे। इतना सुनते ही उनका मन बाग-बाग हो गया और वे गुरुजी को आयोध्या तक पहुँचाकर आये।

एक दिन गुरुदेव ने कहा, ''बेटा, श्रद्धा ही वह शक्ति है जिसके माध्यम से व्यक्ति भगवान् से जुड़ता है। अत: जो लोगों में श्रद्धा जगाता है, वह सबसे अच्छा है किन्तु जो इसे तोड़ता है, वह हमारा शत्रु है।'' तभी हमने श्रद्धा का महत्त्व समझा।

गायत्री शक्तिपीठ अयोध्या की प्राण प्रतिष्ठा के समय पूज्यवर ने स्पष्ट किया, ''बेटे, ऋषि विश्वामित्र जब अयोध्या आये थे, तब इसी जगह पर ठहरे थे। चूँकि विश्वामित्र ऋषि गायत्री मंत्र के प्रणेता हैं, अत: तभी रामजी ने संकल्प लिया था कि यहाँ गायत्री मंदिर बनेगा। आज वह संकल्प पूर्ण हुआ।'' हम सब सुनकर हैरान थे। त्रेता की बातें गुरुदेव को कैसे मालूम?

8 जनवरी सन् 1981 के प्रथम मिलन के बाद मैं लगातार पूज्यवर के सम्पर्क में रहा। अखण्ड ज्योति पढ़ता व प्रचार-प्रसार करता रहा। शान्तिकुञ्ज कई बार आया व गुरुदेव से मिलता रहा। मन में प्रश्न उठते रहे कि जिस प्रकार मानव दिनों दिन संवेदना विहीन होता जा रहा है, मानवता की रक्षा कैसे होगी? गुरुदेव तो अन्तर्यामी थे। एक मुलाकात में उन्होंने कहा-''युग को मैं बदल दूँगा। प्रज्ञावतार की विराट लीला सम्पूर्ण विश्व मानवता की रक्षा करेगी।'' मेरा समाधान हो चुका था। वसंत पर्व सन् 84 को मैंने जीवन दान दिया किन्तु तब मुझे अनुमति नहीं मिली। मैं समयदान करता रहा और टोलियों में भी जाता रहा। फिर कुछ वर्ष बाद मैं पूर्ण रूप से शान्तिकुञ्ज आ गया।

तेरे शिव-पार्वती हम ही हैं

श्री महेंन्द्र शर्मा जी, शान्तिकुञ्ज

उन दिनों मैं शान्तिकुञ्ज में निर्माण विभाग में था, मजदूरों के साथ चौबीस बार गायत्री मंत्र बोलता था तथा उन्हें बताता था कि पूज्यवर साक्षात् शिव के अवतार हैं।

एक दिन कुछ मजदूरों ने कहा, ''भाई साहब! हम लोग नीलकण्ठ जा रहे हैं, आप भी चलिए न। पिकनिक भी होगी। आप भी होंगे तो बहुत अच्छा लगेगा?'' मैंने उनसे कहा, ''मुझे गुरुदेव ने मना किया है। कहा है, उत्तर दिशा में नहीं जाना।'' वे सभी मन मार कर चले गये। कुछ वर्ष बाद मेरे मन में भी इच्छा हुई। माताजी के पास गया, वहाँ दस-बारह बहनें बैठी हुई थीं। मैं वापस जाने लगा। माताजी ने कहा, ''लल्लू जाना नहीं। एक मिनट रुको, क्यों आये हो?''

मैंने कहा, ''माताजी, नीलकण्ठ जा रहा हूँ।'' ''क्या है वहाँ?'' माताजी ने पूछ लिया। मैंने जवाब में कहा, ''माताजी शंकर जी का सिद्धपीठ है।'' माताजी गंभीर हो गईं व कहा, ''ना बेटे! तू मत जा। तेरा अगर श्रद्धा-विश्वास है, तो तेरे शिव-पार्वती हम ही हैं।''

मैं अचंभित होकर माताजी को एकटक निहारने लगा और मन में सोच लिया ''अब कहीं नहीं जाना।''

बाद में भी मन कहता रहा, यद्यपि हम जानते हैं कि वे शिव-पार्वती स्वरूप हैं। फिर भी क्यों बार-बार भूल जाते हैं? और वह करुणामयि माँ, हमें हमारी भूलों को सुधार कर पुनः-पुनः स्मरण करा देती हैं।

बस दो ही पुस्तकें पढ़ लो

यह सन् 74-75 की बात है, उन दिनों हम भिलाई में ही रहते थे। श्री गजाधार सोनी व मैं शान्तिकुञ्ज आए हुए थे। चर्चा के दौरान श्री सोनी जी ने कहा- ''गुरुजी का इतना साहित्य है। हम लोग कैसे पढ़ पायेंगे? गुरुजी केवल ऐसी बीस पुस्तकें बता दें जो हम पढ़ सकें।''

तब गुरुजी से कभी भी, कोई भी मिल सकता था। मैंने कहा- ''चलो गुरुजी से ही पूछेंगे।'' दोनों गुरुजी के पास पहुँचे। उन्होंने स्वयं ही कहा- ''कैसे आये बच्चो? कुछ पूछना है तो पूछो।''

हम लोगों ने कहा, ''गुरुजी, हम लोग प्लान्ट में काम करते हैं। आपका इतना सारा साहित्य तो हम पढ़ नहीं पायेंगे। अत: आप चुनी हुई बीस पुस्तकें बता दें। हम वही पढ़ लें।'' हमारी बात सुनते ही ऐसा लगा जैसे वे भाव समाधि में खो गये। फिर कुछ क्षण बाद कहा, ''बेटे, तुम लोग केवल दो ही पुस्तकें पढ़ लो। एक है- श्रीमद् भागवत और एक रामचरितमानस'' और उठकर वहीं कमरे में चक्कर लगाने लगे। लगा कि वे भाव समाधि से जागृत होकर कुछ बताना चाह रहे हों और दो चक्कर लगाने के बाद कहा, ''इसमें हमारा सारा जीवन, हमारी सारी योजना लगी है।'' हम लोग हतप्रभ से रह गए। तर्क कब ईश्वर को पहचान सकता है। कुछ समझ नहीं पाए। दो किताब पढ़ने की बात मानकर घर आ गये।

मैंने पत्नी को उनकी बात बताई। श्रद्धा से सृष्टा कैसे छुपते? पत्नी ने कहा, ''आपने इस पर सोचा नहीं। वे स्वयं ईश्वर हैं। राम व कृष्ण स्वरूप। इसलिये ही तो भागवत व मानस पढ़ने को कहा व यही हमारी योजना भी है।'' मुझे लगा, यह ठीक तो कह रही है पर मैं कैसे नहीं समझ सका?

मैं धन्य हो गया

श्री रमेश मारू, बिलासपुर, छत्तीसगढ़

यह प्रसंग मुझे श्री रामाधार विश्वकर्मा जी ने सुनाया था। उनके पास संस्मरणों का भण्डार है। शान्तिकुञ्ज, गेट नं. 1, पोस्ट आफिस के पास में पहले एक कुआँ था और गुलाब के फूलों का बगीचा था। जिसके बीच घास हुआ करती थी। वहाँ पूज्य गुरुदेव एवं वन्दनीया माताजी प्राय: शाम के समय बैठा करते थे।

श्री रामाधार विश्वकर्मा जी शान्तिकुञ्ज आए हुए थे। एक दिन शाम को गुरुजी व माताजी उस बगीचे में बैठे हुए थे। संध्या हो गई थी, अत: श्री विश्वकर्मा जी कुँए से थोड़ी दूरी पर ध्यान में बैठ गये। वे उच्च कोटि के साधक थे। वहाँ बैठकर वे ध्यान करने लगे और ध्यान में खो गये। ध्यान में उन्होंने देखा कि उनके गुरु ही श्री रामकृष्ण-माँ शारदामणि, राधा-कृष्ण एवं सीता-राम हैं। यह दृश्य उन्हें कुछ देर तक पलट-पलट कर दिखाई देता रहा। मन में विचार आया -''अरे! यह क्या हो रहा है? ऐसा क्यों दिख रहा है?'' पुन: उन्हीं दृश्यों की फिर पुनरावृत्ति हुई। फिर तीसरी बार भी हुई। आँखें खोलीं

तो देखा सामने गुरुजी व वन्दनीया माताजी बैठे हुए हैं। जाकर पूछा, ''गुरुदेव! मैंने इस प्रकार ध्यान में देखा है, इसका रहस्य बतायें, कहीं कुछ भ्रम तो नहीं।''

पूज्य गुरुदेव मुस्कुराते हुए बोले-''बेटा, तूने जो देखा है, ठीक देखा है।'' वे कहते हैं मैं तो धन्य हो गया। पूर्व में कागभुसुण्डी, कौशल्या व अर्जुन आदि को भी इन्हीं दृश्यों से युग स्रष्टा ने निहाल किया था। आज वे भी इसके पात्र बने थे।

गिरा-अरथ जल-बीचि सम..

डॉ. अमल कुमार दत्ता, शान्तिकुञ्ज

उन दिनों मैं सिविल सर्जन था। पूज्यवर कार्यक्रम हेतु दौरे पर थे, इस बीच में शान्तिकुञ्ज आया। माताजी अकेले ही बैठी थीं। मैंने श्रद्धा पूर्वक उन्हें प्रणाम करते हुए कहा-''माताजी! मेरा मन गुरुजी को प्रणाम करना चाहता है। मैं उन्हें प्रणाम करने को व्याकुल हो रहा हूँ।'' सुनते ही माताजी बोलीं, ''बेटा, तू गुरुजी को ही प्रणाम कर रहा है। वे तुम्हारा प्रणाम स्वीकार भी कर रहे हैं।''

इसके साथ ही मुझे वहाँ गुरुवर की स्पष्ट अनुभूति हुई। मैंने तुरंत दायें-बायें देखा पर स्थूल में तो केवल माताजी ही बैठी थीं। उस समय मैंने तुलसी के इस दोहे की सार्थकता को स्वयं अनुभव किया और दोनों की छवि हृदय में लिये नीचे उतर आया।

''गिरा-अरथ, जल-बीचि सम, कहियत भिन्न न भिन्न।
बन्दौ सीता-राम पद, जिन्हहि परम प्रिय खिन्न॥''

जब मैंने ऋषि सत्ता के दर्शन किये

श्रीमती श्रीपर्णा दत्ता, शान्तिकुञ्ज

जैसे रामावतार के समय भगवान राम ने माता कौशल्या एवं कागभुसुण्डी जी को अपना विश्वरूप दिखाया, कृष्णावतार में माता यशोदा व प्रिय सखा अर्जुन को दिखाया, उसी प्रकार इस युग में भी अपने भक्तों को उन्होंने इस सौभाग्य से वंचित नहीं रखा।

घटना सन् 1963 की है। घीयामण्डी मथुरा के मकान में गुरुदेव खटिया पर बैठे थे। सामने माताजी हम लोगों को खाना खिला रही थीं।

मैंने कहा, ''गुरुजी! हमारे घर माँ शारदामणि और रामकृष्ण की दो बड़ी फोटो है। एक दिन मैंने दोनों चित्रों में आपका और माताजी का रूप बदलते देखा।''

गुरुजी ने कहा, ''बेटी, तुमने ठीक देखा है। यह शरीर जो आज श्रीराम शर्मा आचार्य और माताजी का है, यही माँ शारदामणि और रामकृष्ण थे।'' मैं उनके दर्शन कर श्रद्धावनत थी।

मुझसे काम नहीं चलेगा ?

श्री राम सिंह राठौर, शान्तिकुञ्ज

मैंने शान्तिकुञ्ज में गुरुवर से भेंट के समय सामयिक सभी चर्चा की समाप्ति के पश्चात् कहा, ''गुरुदेव! मुझे भगवान को देखने का मन है। क्या आप दिखा देंगे ?''

गुरुजी ने बड़े सहज भाव से कहा-''क्यों बेटा! मुझसे काम नहीं चलेगा ?'' मैं उन्हें बस देखता रह गया। मन ने कहा, बार-बार अनुभव कराते हैं फिर भी जाने क्यों पूछ लिया।

पूज्यवर ने बात को आगे बढ़ाते हुए कहा, ''बेटा! तू चिन्ता मत कर। मैं हूँ न। तू मेरा काम कर, मैं तेरा काम करूँगा। बेटा! जब तू यहाँ से जायेगा न, तब मैं तुझे अपने इन कन्धों पर बिठा कर ले जाऊँगा।'' और उन्होंने अपने कंधों पर अपने दोनों हाथ रख कर इशारा कर दिया। उनकी बात सुनकर मैं भाव विह्वल हो गया। मेरी आँखों से अश्रु झरने लगे। उन पलों की याद में आज भी मेरे नयन भीग जाते हैं। गौड़ जी भाई साहब ने भी एक बार उन्हें भगवान के दर्शन कराने की बात कही थी तब भी उन्होंने यही शब्द कहे थे।

इसी जन्म में परम पद दिला देंगे

(श्री शिव पूजन सिंह जी ने सन् 1969 में दीक्षा ली और 20 जून, सन् 1978 को स्थाई तौर पर सपरिवार शान्तिकुञ्ज आ गये।)

सन् 1975-1976 से पूज्यवर कार्यकर्ताओं के आह्वाहन हेतु, शान्तिकुञ्ज में निवास के अनेक लाभ अखण्ड ज्योति के स्तंभ 'अपनों से अपनी बात' में प्रकाशित कर रहे थे। जिनमें से एक यह भी था कि गंगा के किनारे निवास व

तपस्या का लाभ मिलेगा। मेरे मन में भी इच्छा जागी व इसी परिप्रेक्ष्य में मैं पूज्यवर से मिलने आया। गुरुजी के पास पहुँच कर चर्चा की।

पूज्यवर ने कहा, ''बेटे, तुझे तो, बस, आ भर जाना है।''

मैंने कहा, ''गुरुजी! मैं तो गंगा किनारे तपस्या करना चाहता हूँ।'' उन्होंने कहा, ''ना बेटे ना! तब तो तुझे सात जन्म लगेंगे। बेटे! हम तुझे इसी जन्म में परम पद दिला देंगे।'' मैं उन्हें एकटक देखता रह गया। सोचा, परम पद देने वाला परमेश्वर के अलावा कौन हो सकता है? तपस्या ईश्वर प्राप्ति के लिये की जाती है, जब वे स्वयं मिल गये व कह रहे हैं, अर्थात् तपस्या से पहले ही वरदान मिल गया। तब वे जो कहते हैं उसे करने में क्या नुकसान है? यह सोचकर मन ही मन उनका ही कार्य निरन्तर करने का संकल्प ले लिया।

प्रज्ञावतार का अंश बनने की छूट देता हूँ

(श्री कालीचरण शर्मा जी ने सन् 1975 में दीक्षा ली और सन् 1985 में स्थाई तौर पर सपरिवार शान्तिकुञ्ज आ गये।)

ईश्वर जब मानव का रूप धारण करते हैं, तब उसका धर्म भी बखूबी पालन करते हैं। यद्यपि भगवान् सब कुछ तत्काल करने में समर्थ हैं फिर भी नर तन की मर्यादा के अनुरूप कष्ट, कठिनाइयों, विरोधों से गुजरते हुए क्रमिक विकास ही स्वीकार कर शिष्यों को शिक्षण देते हैं।

पूज्यवर ने कहा–''ये लाल मशाल का चित्र देख रहे हो, इसके नीचे लाखों लोग खड़े हैं, इसमें मैं तुम्हारा भी फोटो देखना चाहता हूँ। ये जन श्रद्धा का हाथ है, पीछे भगवान का कार्य तेज गति से चल रहा है। ज्ञान का आलोक, प्रज्ञावतार नित्य क्षण पुष्ट हो रहा है। ''

''मैं तुम सब लोगों को प्रज्ञावतार का एक अंश बनने की छूट देता हूँ।'' इस प्रकार उन्होंने ज्ञान रूप स्वयं के प्रज्ञावतार होने का परिचय दिया। साथ ही कर्मठ कार्यकर्त्ताओं को व सामान्य को यह संदेश दिया कि आप भी चाहें तो युगानुरूप प्रज्ञा अभियान में भाग लेकर, अपने सौभाग्य को जगाकर प्रभु के अभिन्न अंग ''अंश'' बन सकते हैं।

अन्त में किस चतुराई से अपने सभी क्रियाशील कार्यकर्त्ताओं को, देवों को भी दुर्लभ अपना अंश बनने का प्रसाद प्रदान कर दिया, जिसे उन्हीं की अनुकम्पा से ही उनके कार्यकर्त्ता समझ पायेंगे, अन्य नहीं।

प्रभु की ओर से ''अंश'' बनने की छूट सबको है, किन्तु बनेगा वही, जो उनकी योजना में भाग लेगा।

श्री कालीचरण शर्मा जी कहते हैं कि तब मैं भिलाई में इंजीनियर था। नौकरी से त्याग पत्र देकर आने के लिये विचार-विमर्श हेतु पूज्यवर के पास गया था। चर्चा हो रही थी उसी दौरान उन्होंने कहा, ''बेटे, यह सवाल तो गुम्बज की तरह है। तू कहेगा कि न करूँ या करूँ तो जवाब आयेगा करूँ..., करूँ..., करूँ...। तू कहेगा करूँ, न करूँ तो जवाब आयेगा न करूँ..., न करूँ..., न करूँ...। बेटा, तू कर ही डाल। यहाँ आ जा।''

चूँकि भविष्य में आय का स्रोत नहीं था। अत: मैं त्याग पत्र देने हेतु बार-बार सोच रहा था। किन्तु उनके इतने शीघ्र निर्णय की बात से मैं भौचक हो गया व अन्त में शान्तिकुञ्ज आने का निर्णय ले लिया। आज उनका कथन सत्य है अन्यथा पश्चाताप की ज्वाला में अवश्य जलना पड़ता।

क्या कुम्भ में हिमालय की बड़ी हस्तियाँ भी आती हैं ?

श्री शान्तिलाल आनंद, भोपाल

घटना सन् 86 की है, परम पूज्य गुरुदेव तब सूक्ष्मीकरण साधना से निकले ही थे। श्री शान्तिलाल जी बताते है कि कुम्भ का समय था। मैं अपने एक मित्र कार्यकर्त्ता के साथ 3-4 दिन के लिये शांतिकुञ्ज आया था। गुरुदेव हम दोनों को प्राय: सुबह-शाम बुलवा लेते।

तब चौका ऊपर ही था। वहीं खाना बनता, छत पर ही बैठकर सब खाना खाते। गुरुजी का बुलावा न आ जाय इस भय से हम लोग पहले ही खाना खाकर निपट लेते थे।

एक दिन पूज्यवर के पास बैठे हुए मुझे एक प्रश्न सूझा, मैंने कहा- ''गुरुजी एक प्रश्न पूछूँ?'' उन्होंने कहा-''हाँ बेटा! जो भी पूछना है पूछो। बिल्कुल पूछो।''

मैंने कहा''हमने सुना है गुरुजी, कुम्भ के मेले में हिमालय से ऋषि-मुनी व अन्य बड़ी-बड़ी हस्तियाँ भी कुम्भ में स्नान करने आती हैं? क्या यह सच है?''

''हाँ बेटा! जरुर आयेंगी। ये सभी हस्तियाँ स्नान के लिये आयेंगी पर किसी को नजर नहीं आयेंगी। ये सूक्ष्म रूप से हवा में उड़ते हुए आती हैं और

स्नान करके वापस चली जाती हैं।'' मैंने पूछा, ''ऐसे ही दादा गुरुजी भी आयेंगे।'' गुरुदेव ने कहा, ''हाँ,... यह जो तखत देख रहे हो न, स्नान के बाद इसमें, आकर हमारे पास दादा गुरुजी बैठेंगे। हमारा वार्तालाप होगा और वे वापस सूक्ष्म रूप से चले जायेंगे। किसी को नजर नहीं आयेंगे।''

मेरी शंका का समाधान स्वयं गुरुदेव के श्रीमुख से हो चुका था। कुम्भ की महत्ता, पौराणिक सत्यता सुनकर मन में किसी प्रकार की कोई शंका नहीं रह गई थी।

युग देवता के शिष्य हो तुम

श्री शिव प्रसाद मिश्रा जी, शान्तिकुञ्ज

देवराहा बाबा भारत के मान्य संत रहे हैं। बड़े-बड़े उद्योगपति एवं राजनेता उनका आशीर्वाद पाने के लिए लालायित रहते थे। जब कभी कोई गायत्री परिवार के परिजन उनके दर्शन करने पहुँचते थे, तो वे बड़ी प्रसन्नता व्यक्त करते हुए उन्हें खूब प्रसाद और आशीर्वाद देते थे। पू. गुरुदेव के बारे में पूछने पर वे बड़े भावभरे सम्मानयुक्त शब्द कहा करते थे। जैसे-

एक बार मैं और मेरा एक मित्र के. पी. श्रीवास्तव देवराहा बाबा जी से मिलने गये। हम लोग बाबाजी के मचान तक पहुँच कर उनके एक शिष्य से बोले कि स्वामी जी को कहें कि पंडित श्रीराम शर्मा जी के शिष्य आये हैं। आपको प्रणाम करना चाहते हैं।

संदेश मिलने पर स्वामी जी ने दर्शन दिये और बोले- ''अरे! पंडित श्रीराम शर्मा आचार्य के बच्चों को हमारा प्रणाम...। प्रणाम...। प्रणाम...। हमने मन ही मन सोचा स्वामी जी हमें प्रणाम क्यों कह रहे हैं?''

तब तक स्वामी जी स्वयं ही बोले, ''आचार्य जी के शिष्य हो तुम। महाकाल के शिष्य हो तुम। युग देवता के शिष्य हो तुम। सामान्य नहीं हो। हम प्रणाम कर रहे हैं, तो सोच कर ही कर रहे हैं। तुम्हारे गुरु श्रीराम नहीं स्वयं राम हैं।''

हम लोगों को वहाँ तक जाते-जाते भूख लग आई थी। सो मन में ठान कर गये थे कि संतों के पास खूब फल आदि रहते हैं। कुछ तो खाने को मिलेगा ही। बाबा जी की बात सुनने के पश्चात् हमारा ध्यान भूख की ओर गया। तब तक बाबा जी बोले-''इनको भूख लगी होगी। इनको खाने को दो।'' आदेश

पाकर उनका शिष्य संतरे ले आया और दो-दो संतरे हम लोगों को दिये। इस पर बाबा ने कहा, ''दो-दो क्या देते हो ? हाथ भर-भर कर दो।'' हम लोग झोली भर-भर कर प्रसाद लेकर आये और पेट भर कर संतरे खाये।

कुछ दिन बाद हम पुनः उनसे मिलने गये, तब हमने उनसे कहा, ''कुछ पूज्य गुरुदेव के बारे में बताइये।'' तो वे बोले-''तुम उनके पास से आये हो! तुम बताओ। मैं क्या बताऊँ ?'' हमने कहा-''हमारी दृष्टि बहुत स्थूल है। आपकी दृष्टि सूक्ष्म है। आप उनके बारे में हमें समझाएँ।'' तो वे बोले, ''जिनका मैं अपने हृदय में निरंतर ध्यान करता हूँ, वे हैं तुम्हारे गुरु, आचार्य श्रीराम।''

बाबा के उक्त कथन में कितनी गहराई है। यह कौन समझ पाता ? संत सहज ही दूसरों को सम्मान देते रहने के अभ्यस्त होते हैं। इसी संत सुलभ-शिष्टाचार के अन्तर्गत लोग उनकी उक्त अभिव्यक्तियों को लेते रहे।

एक और तथ्य है, पूज्य गुरुदेव के शरीर छोड़ने के कुछ दिन बाद ही बाबा ने भी शरीर छोड़ दिया। इसे भी एक संयोग कहा जा सकता है, लेकिन निम्न संस्मरण से उनके कथन और परस्पर संबंधों की गहराई प्रकट हो जाती है।

श्रीराम चले गए अब मैं शरीर रखकर क्या करूँगा- बाबा के शरीर छोड़ने के बाद उनके एक अनन्य शिष्य आई. ए. एस. अधिकारी जब पहली बार शान्तिकुञ्ज पहुँचे तो चर्चा के दौरान उन्होंने पूज्य गुरुदेव द्वारा शरीर त्याग की तिथि पूछी। हमने बताया, पूज्य गुरुदेव ने 2 जून 90 को शरीर छोड़ा। सुनते ही उनके मुख से सहज ही निकल पड़ा, ''देखो यही बात थी।'' पूछने पर उन्होंने अपना संस्मरण सुनाया-

बाबा के देह त्यागने से कुछ दिन पहले वे बाबा से मिले थे, तो बातचीत के दौरान बाबा बोले, ''अब शरीर रखने का मन नहीं है।'' हमने पूछा, ''क्यों महाराज ?'' तो अपने हाथ की खाल पकड़कर खींचते हुए कहा-''अब ये चाम रखकर क्या करेंगे ? आत्मा तो चली गई।'' मैंने कहा, ''महाराज, बात समझ में नहीं आई ? आत्मा कैसे और कहाँ चली गई ?'' तो बाबा बोले- ''अरे! वे श्रीराम चले गए न... अब ये शरीर रखकर क्या करूँगा ?'' और कुछ ही दिनों बाद 19 जून 1990 को बाबा ने शरीर छोड़ दिया। वन्दनीय है यह दिव्य प्रेम और वन्दनीय हैं उसे धारण करने वाले महापुरुष।

फिर मुझे प्रायश्चित करना पड़ेगा

श्री शिव प्रसाद मिश्रा जी अपनी आँखों देखे प्रसंग बताते हुए कहते हैं कि एक बार महात्मा आनंद स्वामी सरस्वती जी (आर्य समाज के सुप्रसिद्ध संत) हरिद्वार आये हुए थे और व्यास आश्रम में ठहरे थे। गुरुजी ने मुझसे कहा, ''जा शिवप्रसाद, देखकर आ तो महात्मा जी आश्रम में हैं कि नहीं।'' मैं व्यास आश्रम गया। स्वामी जी मुझे देखते ही बोले, ''आचार्य जी को बोल देना, आनंद स्वामी नहीं है.., यहाँ नहीं है। तू नहीं बोलेगा तो वो यहाँ आ जायेंगे.., मेरे पास। (वे उनके समय को बहुत महत्त्व देते थे और अक्सर स्वयं ही गुरुदेव से मिलने शान्तिकुञ्ज आ जाया करते थे।) फिर मुझे प्रायश्चित स्वरूप अनुष्ठान करना पड़ेगा।'' इतने में हाथ में फलों का टोकरा लिये हुये गुरुजी स्वयं ही पहुँच गये। महात्मा आनंद स्वामी उनके चरण छूने के लिये आगे बढ़े। गुरुजी ने तुरंत अपने पाँव पीछे समेट लिये और उनके चरण स्पर्श करने के लिये आगे बढ़े। इस पर महात्मा जी सिद्धासन लगा कर बैठ गये और बोले, ''देखो आचार्य जी, आप पाँव नहीं पड़ने दोगे तो लो, हम सिद्धासन लगा कर बैठ गये।''

गुरुदेव बोले, ''बाबा, आप ऐसी ज़िद क्यों करते हो? आपने तो हठ योग की साधना यहीं पर शुरु कर दी।'' महात्मा जी बोले, ''मैं तो हूँ ही हठ योगी।'' हार कर गुरुजी ने पाँव सामने किये। उन्होंने तुरंत प्रणाम किया। गुरुदेव ने भी तुरंत बिना एक पल गँवाये महात्मा जी को प्रणाम किया। इस पर महात्मा जी बोले, ''अब क्या? अब क्या? अब तो हम जीत ही गये।''

इस प्रकार दोनों संतों में परस्पर प्रणाम के लिये अक्सर होड़ रहती थी। महात्मा जी शान्तिकुञ्ज आते, तब भी कौन पहले चरण स्पर्श कर ले। दोनों संत इसी प्रयास में रहते। कभी-कभी गुरुजी उनसे परिहास भी करते, ''स्वामी जी, आप तो सन्यासी हैं। हम आपके शिष्यों को बता देंगे कि आप एक गृहस्थ को चरण स्पर्श करते हैं।'' तब स्वामी जी मुस्कुराते हुए कहते, ''आचार्य जी, आप कितना भी छिपायें पर हमने आपको पहचान लिया है।''

ऐसे ही एक बार महात्मा आनन्द स्वामी सरस्वती जी हरिद्वार प्रवास के दौरान शान्तिकुञ्ज पधारे। शिविरार्थियों के बीच पूज्य गुरुदेव उन्हें स्वयं लेकर पहुँचे। दोनों साथ-साथ मंच पर विराजमान थे। स्वामी जी ने उद्‌बोधन के

क्रम में अपनी उत्तराखण्ड यात्रा का प्रसंग सुनाया। ''हम हिमालय यात्रा पर गये थे। प्रात: स्नान, ध्यान के बाद पर्वतों का हिमाच्छादित मनोहारी दृश्य देख रहे थे। गंगोत्री से ऊपर जाते समय देखा कि एक जगह हिमाच्छादित क्षेत्र के बीच एक चट्टान ऐसी है, जिस पर बर्फ नहीं जमी थी। मैंने गाइड से पूछा कि इसका क्या कारण है? गाइड ने पदार्थ विज्ञान के अनुसार कुछ तर्क देने का प्रयास किया, जो मेरे गले नहीं उतरा। मैंने कहा यह बचकानी बातें छोड़ो, कोई ठोस बात पता हो तो बताओ।

तब गाइड ने बताया कि ठोस बात क्या है, यह तो नहीं जानता; लेकिन इस क्षेत्र की मान्यता यह है कि इस स्थान पर कभी शिव जी ने तप किया था, इसलिए यहाँ कभी बर्फ नहीं जमती, चाहे जितना हिमपात होता रहे। सुनकर मैंने उस स्थान को ध्यान से देखकर कहा, ''वहाँ चल सकते हो?'' गाइड दुर्गम क्षेत्र कहकर कतराया। कुछ हमारे प्रभाव के कारण एवं कुछ धन के लालच से आग्रह करने पर वह तैयार हो गया। दो घंटे के कठिन परिश्रम के बाद किसी तरह हम वहाँ पहुँच गये। वहाँ पहुँचकर मैं ॐ का ध्यान करने बैठा तो मुझे आचार्य श्री व माताजी दिखाई दिये। मुझे आश्चर्य हुआ, मैंने फिर ध्यान करने का प्रयास किया, तो मुझे फिर वहाँ आचार्य जी और माताजी की उपस्थिति का आभास हुआ।'' फिर बोले, ''मेरे बच्चो! मेरी कुड़ियो! तुम लोग समझ सकते हो कि आचार्य जी कौन हैं?''

आमी जानी, के बाबा के माँ

एक बार गुरुजी-माताजी रिक्शा में बैठ कर कहीं जा रहे थे। मेरे मन में आया कि मैं भी देखूँ गुरुजी कहाँ जा रहे हैं? मैं साईकिल पर उनके पीछे-पीछे हो लिया। थोड़ा डर भी लग रहा था कि कहीं देख लिया तो, पर मैं चलता गया। देखा तो वे कनखल में माँ आनंदमयी के आश्रम में पहुँचे हैं। मैं थोड़ा दूर में रहकर देखता रहा। मैंने देखा माँ आनंदमयी उन्हें देखते ही प्रसन्नता से भर गईं और बोलीं, ''आईये, आईये। माताजी-पिताजी, आईये।'' गुरुजी बोले, ''माँ तो आप हैं।'' इस पर वे बंगाली भाषा में बोलीं, ''आमी जानी, के बाबा के माँ।'' मैंने केवल इतना ही देखा कि उन्होंने गुरुजी-माताजी के चरण पखारे और फिर गुरुजी-माताजी को भीतर ले गईं। अब भीतर तक तो मैं जा नहीं सकता था, इसलिये बाहर से ही लौट आया।

6. वे तंत्र के भी मर्मज्ञ थे

परम पूज्य गुरुदेव ने यूँ तो स्वयंको सबसे छिपाये रखा। किंतु आवश्यकता पड़ने पर अपने भक्तों के समक्ष उन्होंने स्वयं को प्रकट भी किया है। जब कभी किसी भक्त ने उन्हें कातर भाव से पुकारा तो वे उनके कृपा पात्र भी बने हैं। कहते हैं कि गायत्री साधना से ऊँची कोई साधना नहीं है। जिसने गायत्री को सिद्ध कर लिया है उसने सभी देवी-देवताओं को सिद्ध कर लिया। गायत्री के साधक के आगे भूत-प्रेत, तंत्र-मंत्र कुछ भी टिक नहीं सकते। पढ़ें ऐसे ही कुछ संस्मरण जब गुरुदेव ने तंत्र प्रयोगों से अपने बच्चों की रक्षा की और उन्हें आश्वस्त किया।

मारण प्रयोग निष्फल हुआ

किंगल, कुमारसेन (शिमला) के एक कार्यकर्त्ता **श्री ओमप्रकाश शर्मा जी** बताते हैं, ''उन दिनों मैं बी.एस.एफ. में नौकरी करता था अत: अधिकतर घर से बाहर ही रहता था। एक बार रविवार को जब मैं अपने घर आया हुआ था, तो अपनी पत्नी को लेकर घूमने निकल गया। जब हम लौटे, तो अचानक पत्नी की तबियत बिगड़ गई। उनका शरीर अकड़ गया। वह सीढ़ियाँ ही चढ़ नहीं पा रही थीं। मैं सहारा देकर ऊपर चढ़ाने लगा, तब तक वह बेहोश हो गई। मैंने पत्नी को दोनों हाथों में लेकर ऊपर चढ़ाया और लिटा दिया। पास ही बैठकर सोचने लगा कि अचानक ये क्या हो गया? अब मैं क्या करूँ? मैं गायत्री मंत्र जपने लगा और गुरुजी को याद करने लगा। तभी मन में प्रेरणा हुई कि पीले चावल पूजा कक्ष से उठाकर गायत्री मंत्र पढ़कर पत्नी के ऊपर छिड़क दो। मैं तुरंत पूजा कक्ष से पीले चावल लाया और गायत्री मंत्र बोलते हुए पत्नी के ऊपर छिड़क दिया। ऐसा करते ही मुझे वहीं एक थाली तैरती हुई दिखाई दी। जो उड़ती हुई दरवाजे से बाहर निकली और सामने वाली पहाड़ी

के पीछे चली गई। मुझे एहसास हुआ कि किसी ने पत्नी के ऊपर मारण प्रयोग किया था। मेरे मन में भय हुआ। गुरुजी से प्रार्थना की, 'गुरुजी आज तो मैं यहाँ था, यही मेरे पीछे घटता, तो पत्नी को कौन बचाता?' अचानक गुरुजी सूक्ष्म रूप में तैरते हुए कमरे में आये और कहा, ''बेटा! मैं यहाँ बैठा तो हूँ। तू क्यों घबराता है?'' कहते हुए अपने चित्र में समा गये। उस दिन से गुरुवर के प्रति मेरी श्रद्धा और भी प्रगाढ़ हो गई।''

तांत्रिक से बचाया

सीतापुर उ. प्र. की एक कार्यकर्त्ता बहिन ने नाम न छापने का आग्रह करते हुए बताया कि विवाहोपरांत वह अपने ससुराल में बहुत पीड़ित रहने लगी। कोई तांत्रिक उनके जीवन में बाधाएँ उत्पन्न कर रहा था। मुझे विचित्र प्रकार की परेशानियाँ होने लगीं। जैसे मेरी साड़ी चीर-चीर हो जाना। सिर से बालों के गुच्छे निकल जाना और भी नये-नये ढंग से चित्र-विचित्र परेशानियाँ नित्य ही आती रहतीं। मुझे कोई रास्ता सूझ नहीं पड़ रहा था। मैं उपासना में गुरुजी के पास बैठकर रोती, प्रार्थना करती कि गुरुदेव मुझे बचा लो। मुझे मार्ग दिखाओ। हर पल मन ही मन उनसे प्रार्थना करती रहती। कुछ दिन बाद गुरुजी ने मेरी प्रार्थना सुन ली। एक दिन मुझे ऐसा लगा जैसे गुरुजी कह रहे हैं, 'उठ! कापी-पेन पकड़ और लिख।' मैं लिखने लगी और देखा कुछ मंत्र हैं। फिर गुरुजी ने उनका प्रयोग व आहुति आदि देने के लिये बताया। मुझे जैसी-जैसी प्रेरणा हुई थी, मैंने वैसा ही किया। मेरी परेशानियाँ घटने लगीं। अब अक्सर ऐसा होता कि वह तांत्रिक जब भी कोई प्रयोग करता, उपासना के समय मुझे लगता जैसे गुरुजी कह रहे हैं, ''कापी-पेन पकड़ और लिख, आज उस तांत्रिक ने अमुक प्रयोग किया है। तुम इस प्रकार की आहुतियाँ देकर उसकी काट करो।'' मैं वैसा ही करती और संकटों का निवारण होता जाता।

एक दिन मैंने गुरुजी से प्रार्थना की, ''गुरुजी! मुझे छाती में बड़ा चुभने वाला शूल होता है। उसका क्या उपाय करूँ?'' तब गुरुजी ने बताया कि घर की पीछे वाली दीवाल में अमुक जगह पर तांत्रिक ने एक कील ठोंकी है। उसे निकाल दो। मैंने जब वह कील निकाली, तो मेरी छाती का दर्द भी ठीक हो गया। इस प्रकार तांत्रिक अपने मंसूबों में सफल नहीं हो पाता था, उल्टे वही चोटें खाता रहता।

एक दिन तांत्रिक ने छल विद्या का प्रयोग किया। वह मेरे पति के वेश में साइकिल लेकर आया और कहीं चलने के लिए कहा। मैं उसे अपना पति समझकर साइकिल पर उसके पीछे बैठकर जाने लगी। रास्ते में गायत्री शक्ति पीठ पड़ा। मुझे गायत्री माता को प्रणाम कर लेने की इच्छा हुई। मैंने उसे साइकिल की रफ्तार धीरे करने के लिये कहा। जैसे ही मैंने साइकिल से उतरकर झुककर गायत्री माता को सड़क से ही प्रणाम किया और पीछे मुड़कर देखा तो मुझे तांत्रिक का असली रूप दिखायी दिया। वह जिसके साथ मैं साइकिल पर बैठकर आयी हूँ, वह मेरा पति नहीं, तांत्रिक है! देखकर, मैं घबरा गई और झट से गायत्री शक्तिपीठ की ओर दौड़ गई। तांत्रिक को इस बात का अहसास हो गया कि मुझे सब पता चल गया है तो वह, ''तेरे गुरु बड़े सबल हैं।'' चिल्लाते हुए भाग गया और फिर कभी मुझे परेशान नहीं किया।

जब सिद्ध तांत्रिक तड़प उठा

एक परिजन ने बताया कि वे हरिद्वार में 'हरि की पौड़ी' क्षेत्र में रोज बुक स्टॉल लगाने जाते थे। जहाँ वे बुक स्टॉल लगाते थे, वहीं एक साधू स्नान करने आता था। वह उन्हें कहता, ''यहाँ से दूर चले जाओ, यहाँ ये सब मत लगाओ।'' पर वे माने नहीं। वहीं बुक स्टॉल लगाते रहे। एक दिन उस साधू ने अंजलि में जल लेकर मंत्र पढ़कर उनके ऊपर दो बार छोड़ा। तीसरी बार मंत्र पढ़कर जब वह छोड़ने जा रहा था, तभी उसका पूरा शरीर गर्मी से जलने लगा। वह तड़प उठा, और वहाँ से भाग ही खड़ा हुआ।

अगले दिन जब वह परिजन गुरुजी को अपनी बात सुनाने जा रहे थे, तो उनके कुछ कहने से पहले ही गुरुजी ने कहा, ''बेटा उनकी बात मान लेनी चाहिये थी, नहीं तो वह इतना सिद्ध तांत्रिक था कि वह तुम्हें जला सकता था।'' तब उन्हें ज्ञात हुआ कि पूज्य गुरुजी ने ही उन्हें बचाया था।

उसे तुरंत लेकर आ

श्रीमती मुक्ति शर्मा, शान्तिकुञ्ज

मेरी ननद की शादी थी। उन दिनों हम शान्तिकुञ्ज में ही रहते थे। हम लोग शादी में आगरा गये। खूब धूमधाम से शादी सम्पन्न हो गई। जिस दिन ननद की विदाई हुई, उस दिन मैंने बस थोड़ी सी मिठाई ही खाई थी और कुछ मुझसे खाया ही नहीं गया। उसके बाद अचानक मेरी तबियत बहुत खराब हो गई। मेरे

पेट में भयंकर दर्द होने लगा। मुझे तुरंत अस्पताल ले जाया गया। दर्द का कारण कुछ समझ में नहीं आ रहा था। मैं बेहोश जैसी हालत में पड़ी थी, और दर्द से छटपटा रही थी कि मुझे ऐसा आभास हुआ, जैसे माताजी मेरे सिर पर हाथ फिरा रही हैं। उन्होंने मुझसे पूछा, ''किसी से तेरा कोई झगड़ा हुआ है क्या?'' मैंने कहा, ''नहीं माताजी, ऐसी तो कोई बात नहीं हैं।'' तब माताजी बोली, ''ठीक है बेटी, मैं देख लूँगी। तुझे कुछ नहीं होगा। तू अच्छी हो जायेगी।'' उसके बाद मेरी तबियत में थोड़ा सुधार होने लगा। मुझे अस्पताल से वापिस घर ले आये।

हमें उसी दिन शान्तिकुञ्ज लौटना था। मेरी तबियत खराब होने के कारण शर्मा जी मुझे घर पर ही छोड़कर स्वयं रात की बस से शान्तिकुञ्ज चले गये। सुबह 6:00 बजे के लगभग वे शान्तिकुञ्ज पहुँचे। पहुँचते ही गुरुजी के पास गये। जैसे ही उन्होंने गुरुजी को प्रणाम किया, गुरुजी ने पूछा, ''मुक्ति कहाँ है?'' उन्होंने बताया कि उसकी तबियत थोड़ी बिगड़ गई थी, इसलिए घर पर ही छोड़ आया हूँ। सुनते ही गुरुजी बहुत नाराजगी भरे स्वर में बोले, ''वहाँ किसके पास छोड़ आया? वहाँ कौन है? तुरंत जा और उसे लेकर आ। मर भी गई होगी तो भी तू उठा लाना, यहाँ हम उसे जिंदा कर लेंगे। भास्कर को गाड़ी निकालने को कह और तुरंत जा।''

इनकी समझ में कुछ नहीं आया, इन्होंने कहा, ''गुरुजी, अभी तो आया ही हूँ चाय तो पी लूँ।'' गुरुजी बोले, ''चाय भी तू रास्ते में ही पी लेना। तू मेरी लड़की को छोड़कर आया कैसे? उसे तुरंत लेकर आ।''

उन्होंने नीचे माताजी को प्रणाम किया और सब बात बताई। माताजी ने कहा, ''गुरुजी ने अगर ऐसा कहा है, तो बेटा तुरंत जा और मुक्ति को लेकर आ।'' और माताजी ने भास्कर जी को गाड़ी लेकर जाने के लिए कहा। ये उसी समय मुझे लेने के लिये निकल पड़े। शाम को आगरा पहुँचे, मुझे गाड़ी में बिठाया और उन्हीं पैरों लौट आये।

शान्तिकुञ्ज आ जाने के कुछ दिनों बाद मेरी तबियत अचानक फिर बहुत ज्यादा खराब हो गई। मुझे पेट में भयंकर दर्द होने लगा। मेरा पेट जैसे फूल गया था। मुझे किसी तरह भी चैन नहीं पड़ रहा था। गुरुजी के पास सूचना पहुँचाई गई। उस समय गुरुजी गोष्ठी ले रहे थे। उपाध्याय जी, मेरे पतिदेव आदि सभी लोग गुरुजी के पास ही बैठे थे कि शिव प्रसाद मिश्रा जी भाई साहब ने

जाकर सूचना दी कि मुक्ति दीदी की तबियत बहुत खराब है। गुरुजी ने तुरंत गोष्ठी समाप्त की और मेरे पतिदेव से कहा, ''महेन्द्र, तू जल्दी जा, मुक्ति को देख, मैं भी आता हूँ।''

मुझे देखने के लिए डॉ. प्रणव, डॉ. दत्ता, डॉ. राजेन्द्र आदि सब लोग मेरे चारों ओर इकट्ठा हो गये। मुझे दवा दी गई, लेकिन किसी दवा से आराम नहीं हो रहा था। डॉक्टरों का कहना था कि इनकी किडनी फूल गई है। बर्स्ट होने की स्थिति में पहुँच गई है। किसी भी पल कुछ भी हो सकता है। इतने में गुरुजी आ गये। आते ही बोले, ''मुक्ति, क्या हो गया? बता कहाँ दर्द हो रहा है?'' मैंने गुरुजी को बताया। गुरुजी ने कहा, ''ले, मेरा हाथ पकड़ और बता कहाँ-कहाँ दर्द हो रहा है?'' उन्होंने मेरा हाथ पकड़ा, मैंने जहाँ-जहाँ बताया वे वहाँ-वहाँ हाथ फिराते रहे। लगभग बीस-पच्चीस मिनट उन्होंने मेरे पेट पर हाथ फिराया। उसके बाद खड़े हो गये और बोले, ''लड़को! आज तुम लोगों में से कोई भी सोयेगा नहीं। सब लोग बारी-बारी से यहीं ड्यूटी देना।''

मुझे देखने के लिये बहनें भी सब पहुँच गई थीं। उन्हें देखकर गुरुजी बोले, ''महिलाओं का यहाँ कोई काम नहीं है। यह नहीं संभाल पायेंगी। इनको सबको अपने-अपने घर भेज दो।'' वह रात इतनी भारी थी कि आज भी मैं उसे भूली नहीं हूँ। मैं न सो पा रही थी, न बैठ पा रही थी। मुझे ऐसा लग रहा था, जैसे मेरे प्राण खिंच रहे हों। सब लोग मुझे पकड़कर रातभर टहलाते रहे। उपाध्याय भाई साहब ग्लूकोज़ का घोल बनाकर गिलास हाथ में पकड़े-पकड़े घूम रहे थे। थोड़ी-थोड़ी देर बाद कहते, ''ले बहना! एक चम्मच पी ले।'' ऐसा करते-करते पूरी रात गुजर गई। लगभग 4 बजे के करीब डॉ. प्रणव भाई साहब आये और बोले कि रात तो गुजर गई। अब इन्हें नींद का इंजेक्शन दे देते हैं, तो इन्हें थोड़ी नींद आ जायेगी। मुझे नींद का इंजेक्शन देने से थोड़ी देर नींद आ गई। लगभग 8 बजे के करीब गुरुजी मुझे देखने आये। आते ही उन्होंने पूछा, ''मुक्ति! अब कैसी है?'' मुझे उस समय बस कमजोरी लग रही थी, बाकी सब ठीक था। मैंने मुस्कुराकर कहा कि ठीक हूँ गुरुजी। गुरुजी ने मज़ाक करते हुए कहा, ''रात को तो तू मर रही थी। अच्छा! अब आराम कर, उठना नहीं। माताजी भी तुझे याद कर रही थीं। अभी थोड़ी देर में आयेंगी।'' मैंने कहा, ''गुरुजी माताजी को मत भेजिये। बस, आप आ गये हैं न, आप ही उन्हें मेरी कुशल-क्षेम बता दीजियेगा।''

जब महेन्द्र शर्माजी माताजी को प्रणाम करने गये तो माताजी ने उनसे मेरी तबियत पूछी और बताया, ''बेटा, आज रातभर हम लोग भी नहीं सोये। मैं जब सब काम निबटाकर गुरुजी के पास गई, तो देखा कि गुरुजी चिंता मग्न हैं। मैंने कारण पूछा तो उन्होंने बताया कि मुक्ति के प्राण संकट में हैं। आज रात तुमको और मुझे दोनों को साधना करनी पड़ेगी। हमें उसकी रक्षा करनी है। बेटा! रातभर हम दोनों ने भी साधना की। अब संकट टल गया है।''

गुरुजी ने प्रणव भाई साहब को बुलाया और कहा कि बी.एच.ई.एल. से डॉ. तनेजा को बुलाकर दिखा दो, और हाँ! काली मंदिर वाले स्वामी जी के पास भी चले जाना। डॉ. तनेजा को बुलाया गया।

उस समय शान्तिकुञ्ज में आठ डॉक्टर थे। रात को सबने मुझे देखा था और सबकी एक ही राय थी कि इनकी किडनी बर्स्ट होने वाली है। सुबह तक सब नार्मल हो गया था। जिसे देखकर सभी डॉक्टर हैरान थे। गुरुजी ने डॉ. तनेजा जी से पूछा, ''कैसी है हमारी बेटी, सब ठीक है न?''

डॉ. तनेजा ने कहा कि सब कुछ ठीक है और डॉ. प्रणव जी की ओर मुखातिब होकर बोले, ''आप कैसे कह रहे हैं कि इनकी किडनी बर्स्ट होने वाली थी। किडनी तो नार्मल है।'' प्रणव भाई साहब ने बताया, ''केवल मैं ही नहीं, साहब! हम आठ डाक्टर थे, सबने देखा था। हाँ, गुरुजी जरूर आये थे। उन्होंने कुछ चमत्कार किया होगा।''

उस दिन के बाद मेरी तबियत ठीक होने लगी। बाद में गुरुजी ने मुझे आगरा जाने के लिए बिल्कुल मना कर दिया। कहा कि तू आगरा नहीं जायेगी। तू यहीं रहेगी।

हमें तो कुछ समझ नहीं आया, क्या हुआ था? पर लम्बे अर्से बाद पता चला कि मुझे खाने में कुछ दिया गया था और मेरे ऊपर मारण प्रयोग किया गया था। बताने वाले ने यह भी बताया कि आप के गुरु बहुत समर्थ हैं अन्यथा प्रयोग इतना जबरदस्त था कि आपको कोई बचा नहीं सकता था।

7. भविष्य द्रष्टा हमारे गुरुदेव

कहते हैं- महापुरुषों के पास दिव्य दृष्टि होती है। वह क्या होती है, कैसी होती है ? यह तो हम लोग नहीं जानते, किंतु यह जरूर जानते हैं कि पूज्य गुरुदेव सबके मन की बात जान लेते थे। वे अंतर्यामी थे। उनके पास जाकर कुछ कहना नहीं पड़ता था, वे स्वत: ही सब कह देते थे। इतना ही नहीं उन्होंने अपने प्रवचनों में, गोष्ठियों में व साहित्य में भविष्य के विषय में भी जो कुछ कहा वह क्रमश: सत्य होता चला गया।

केशव टीला जरूर जाना

श्री सुदर्शन मित्तल, देहरादून

श्री जमना प्रसाद बड़ेरिया जी (चैतन्य जी के बड़े भाई) मथुरा में ही एकान्त वास करते हैं। सन् 1957 के आसपास जब वे लड़के ही थे, मथुरा आये व तपोभूमि पहुँचे। गुरुदेव उस समय गेट पर ही टहल रहे थे। उन्होंने पूछा- ''कहाँ से आये हैं ?'' चूँकि वे हकला कर बोले थे अत: उनको भी मजाक सूझी। उन्होंने भी उसी भाषा में हकला कर जवाब दिया, ''आ---आचार्य जी---से ---मिलना है।''

जब गुरुदेव ने कहा-''मैं ही आचार्य जी हूँ।'' तो वे बहुत शर्मिंदा हुए व एक दो दिन पूज्यवर से सामना नहीं कर सके। पुन: गुरुदेव से चर्चा हुई। उन्होंने पूछा-''कैसे आये हो ?'' बताया-''घूमने आया हूँ।'' गुरुजी ने कहा-''केशव टीला जरूर जाना।'' वे घूमते-घूमते थक गये थे पर गुरुजी ने कहा है सो जाना था, गये। देखा, काफी दूरी व ऊँचाई पर एक कोठरीनुमा झोंपड़ी थी व पास में ही एक मस्जिद थी। देखने लायक कुछ भी नहीं दिखाई दिया। थके हारे आये और गुरुजी से पूछ ही लिया-'' वहाँ तो देखने के लिये कुछ भी नहीं था पर आपने वहाँ क्यों भेजा ?'' गुरुजी ने उत्तर दिया-''25 साल बाद वहाँ भव्य मंदिर बनेगा।'' आज उसी स्थान पर भव्य 'श्रीकृष्ण जन्म भूमि स्मारक' बना हुआ है। जो मथुरा का एक आकर्षण है।

बल प्रयोग भी करना पड़ेगा

श्री श्याम प्रताप सिंह, ब्रह्मवर्चस

उन दिनों पंजाब में आतंकवाद अपनी चरम सीमा पर था। सभी अपने-अपने ढंग से शान्ति-प्रयासों में लगे थे। जैनमुनि सुशील कुमार भी पंजाब में शान्ति के प्रयास के लिए प्रस्थान से पूर्व पूज्य गुरुदेव से परामर्श एवं मार्गदर्शन लेने आये। वन्दनीया माताजी से मिले फिर पूज्य गुरुदेव से मिले। गुरुदेव बोले, ''शान्तिप्रयास अवश्य करना चाहिए, आप भी करें। हम भी भगवान से प्रार्थना करेंगे। किन्तु एक बात समझ लें- पंजाब में अशान्ति पाकिस्तान के उकसावे पर है। इसमें मात्र बातों से काम नहीं बनेगा, बल प्रयोग भी करना पड़ेगा।'' और वैसा ही हुआ, शान्तिवार्ताएँ धरी की धरी रह गईं। समस्या बल प्रयोग से ही सुलझी।

मँहगाई बढ़ जायेगी

श्रीमती सीता अग्रवाल, शान्तिकुञ्ज

सन् 82 की बात है एक दिन गुरुदेव ऊपर गोष्ठी ले रहे थे। उन्होंने कहा, ''बेटे! मँहगाई इतनी बढ़ जायेगी कि तुम लोग सब्जी नहीं खा सकोगे। अत: अभी से चटनी-रोटी खाने की आदत डालो।'' ''अग्रवाल बेटा! ऐसा करना सहारनपुर से करौंदे का पौधा लाना। सबके घरों में लगा दो। सबको छोटा-छोटा बगीचा दे दो। तुलसी के पौधे में अदरक दबा दो। नमक मिर्च, अदरक, करौंदे की चटनी खाओ। कोई अस्वस्थ होगा, तो मेरी जिम्मेदारी है। सुबह चटनी रोटी खाना। शाम को दलिया-खिचड़ी खाना।''

संस्कृति को जिन्दा रखो

''यदि भारतीय संस्कृति जिन्दा नहीं रहेगी तो बेटे, कोई किसी की सेवा नहीं करेगा। जिस प्रकार बैल बूढ़ा होने पर कसाई के घर जाता है उसी प्रकार तुम लोग भी जाओगे। लोग कहेंगे बूढ़ा दिन भर घर में रहकर खाँसता है, खाता है और गोबर करता है। इसे कसाई घर भेजो। बुजुर्गों की सेवा की भावना समाप्त हो जायेगी। अत: संस्कृति को जिन्दा रखो, अन्यथा कसाई घर जाने के लिये तैयार रहो।''

''प्रकृति नाराज है, अत: देखना आने वाले समय में कहीं पानी-पानी होगा तो कहीं सूखा-सूखा। घास नहीं उपजेगी। दुनियाँ भूख के मारे तड़पेगी। प्रलय होगा। केवल 40 प्रतिशत लोग बचेंगे। अत: सदैव तन्दरुस्त रहकर कार्य करने की कला सीखो।''

ईंधन मँहगा होगा

''बेटे! एक समय ऐसा आयेगा कि ईंधन काफी मँहगा होगा। कुकर में पकाने से कम ईंधन लगेगा व विटामिन्स भी बने रहेंगे। अत: सब कार्यकर्त्ताओं के पास कुकर होने चाहिए। उसी में पकाओ और खाओ।'' सभी कार्यकर्त्ताओं ने कुकर खरीदा व उसमें खाना बनाना प्रारंभ किया।

पचास वर्ष के बाद किसी के पास पैसा नहीं रहेगा

श्री शिव प्रसाद मिश्र, शान्तिकुञ्ज

घटना सन् 1965 की है। तब 108 कुण्डीय व 51 कुण्डीय बाजपेय यज्ञों की शृंखला चल रही थी। गुरुदेव तर्कों के माध्यम से समाज में फैले अंधविश्वासों, मूढ़मान्यताओं व परम्पराओं का खंडन करते हुए उसके स्थान पर सद्विचारों, सत्कर्मों, सद्भावनाओं की महत्ता स्थापित कर रहे थे। भरी सभा में कुछ ऐसी घोषणा कर देते, जिससे विज्ञ-जन सोचने को मजबूर हो जाते।

ऐसा ही एक यज्ञीय कार्यक्रम ग्वालियर में था। वहाँ उस समय महारानी श्रीमती विजय राजे सिंधिया भी उपस्थित थीं। गुरुदेव ने सायंकालीन प्रवचन के दौरान जोरदार शब्दों में कहा-''मैं, पंडित श्रीराम शर्मा आचार्य, कह रहा हूँ कि आज से पच्चास वर्ष बाद किसी के पास पैसा नहीं रहेगा।''

इस प्रकार उनने आने वाले समय की जानकारी खुलकर दे दी। आज उस बात को लगभग 44 वर्ष बीत चुके हैं। हम सभी स्पष्ट देख रहे हैं कि किस प्रकार पैसे का निरन्तर समाजीकरण होता चला जा रहा है।

अब की बेटा होगा

सावित्री जीजी, आ० वीरेश्वर उपाध्याय जी की बहन

सन् 64 में गुरुदेव भिलाई आये। मैं अपनी दोनों बेटियों को मिलाने ले गई। बड़ी 6 वर्ष की थी छोटी दो वर्ष की। परिचय के दौरान पूछा-''दो बेटियाँ

हैं ?'' थोड़ी देर चुप रहे फिर कहा, ''अब की बेटा होगा।'' इसके तीन वर्ष बाद पुत्र हुआ। वह जब छह माह का था तब रायपुर में वे पुन: आये। हम लोग बच्चे को अशीर्वाद दिलाने ले गये। उन्होंने बहुत आशीर्वाद दिया व कहा, ''जाकर नामकरण संस्कार सम्पन्न करा लें।''

चूंकि बच्चा उस समय अस्वस्थ था अत: देर तक बैठ नहीं पायेंगे कहने पर उन्होंने स्वयं नामकरण संस्कार कर दिया और कहा, ''इसका नाम ज्योति प्रकाश रखना यह चारों तरफ प्रकाश फैलायेगा। बहुत भाग्यवान है तुम सबका बहुत ध्यान रखेगा।'' सचमुच आज वह पूरे परिवार का बराबर ध्यान रखता है।

स्टीकर छाप

श्री बसंत भाई जरीवाला, (जो गायत्री ज्ञान मंदिर कांदीवली के नाम से स्टीकर निर्माता हैं) ने बताया कि किस प्रकार गुरुदेव ने स्वयं इसे प्रारंभ कराया।

मुम्बई में मेरा 6 गजी 16 साड़ी वाला छपाई का प्रेस था। गुरुजी ने कहा, ''इसे बंद कर, स्टीकर छाप। नफे में रहेगा।''

''मैंने पहले लगे बोर्ड को उतरवाकर गुरुदेव के कहे अनुसार-गायत्री ज्ञान मंदिर कांदीवली का बोर्ड लगाया। तब से स्टीकर छाप रहा हूँ। गुरुदेव दो बार, सन् 1966 व 1972 में स्वयं हमारे घर पधारे थे। दूसरी बार जब आए, तब उन्होंने स्वयं अपने हाथ से लिखा-''25 वर्ष की सेवा के उपलक्ष्य में उज्ज्वल भविष्य हेतु आशीर्वाद।''

इसे मैंने बड़े साइज में फ्रेम करा कर आज भी अपने कमरे में रखा है।

तेरा घाटा मैं पूरा करूँगा

श्री उमा शंकर चतुर्वेदी, बिलासपुर

बिलासपुर के एक कार्यकर्त्ता के घर बँटवारे की बात उठी। छोटा भाई बहुत कुछ लेने पर अड़ा हुआ था। बड़े ने गुरुजी से कहा, ''गुरुजी क्या करूँ ? छोटा भाई मान ही नहीं रहा। कहता है, सब लूँगा।''

पूज्यवर ने एक क्षण सोचा फिर कहा, ''बेटा घर व जर्म्सकिलर की दुकान छोड़कर, वह जो लेता है दे दे। तेरा घाटा मैं पूरा करूँगा।'' गुरुजी की बात मानकर शिष्य ने पूज्यवर के कथनानुसार छोटे भाई को, जो उसने माँगा, दे दिया। कुछ दिनों बाद घर में निर्माण हेतु खुदाई हुई। जमीन में एक अलमारी निकली। उसमें उस समय साठ तोला सोना व कुछ किलो चाँदी निकली। इस प्रकार उन्होंने अपने प्रिय शिष्य का सारा घाटा पूर्ण कर दिया।

जलाराम बापा का भण्डारा बना दो

(श्री प्रेम जी भाई सन् 1983 में पहली बार शान्तिकुञ्ज आये। वंदनीया माताजी के बुलाने पर सन् 1985 में वे पूर्ण रूप से शान्तिकुञ्ज आ गये।)

अप्रैल सन् 1985 में जब मैं शान्तिकुञ्ज आया, तो मुझे व श्री तोमर जी को भोजनालय में ड्यूटी दी गई। तब एक मासीय शिविर के भाई-बहिनों से प्रति व्यक्ति पचहत्तर रुपये मासिक लिया जाता था।

बाद में यह शुल्क मँहगाई बढ़ने के कारण सौ रुपये मासिक किया गया। ईश्वर की लीला बड़ी विचित्र होती है। उसे जब कोई भी काम करना होता है, तब वह किसी न किसी को माध्यम बनाता है। स्वयं अपने मन से नहीं करते। उस समय एक घटना ऐसी हुई कि लगा जैसे उनकी ही प्रेरणा है।

एक दिन एक शिविरार्थी खूब नाराज हो गया। कहने लगा-''केवल दो समय भोजन का सौ रुपये लेते हैं। यह बहुत ज्यादा है। चाय भी देनी चाहिए।''

उसे हम लोगों ने समझाया, पर वह अपनी बात पर अड़ा रहा। बात माताजी-गुरुजी तक पहुँची। वे तो लीलाधारी थे। खूब जोर से हँसे, मानो मन चाहा मिल गया हो और कहा- ''आश्रम में जलाराम बापा का भण्डारा बना दो। किसी से खाने का कोई पैसा मत लो।'' और उस दिन से वह जलाराम बापा का भण्डारा, आज तक चल रहा है।

कभी-कभी वे कहते थे, ''आने वाले दिनों में इतनी भीड़ आयेगी कि तुम लोग सँभाल नहीं सकोगे।'' उन्हें भविष्य दिखाई देता था। शायद इसीलिये उन्होंने कहा था कि आश्रम में जलाराम बापा का भण्डारा बना दो।

फिर हमें कैन्टीन में ड्यूटी दे दी गई। बड़े उत्साह से कैन्टीन में काम किया। उसी समय मेरे मन में सवालक्ष्य का अनुष्ठान करने की प्रेरणा हुई।

दाढ़ी रखा व केवल एक लीटर दूध पर चालीस दिन रहा। पूर्णाहुति के दिन माताजी के पास गया। बताया, तो परम वन्दनीया माताजी ने गुरुजी के पास ऊपर भेज दिया।

पूज्यवर उस समय लेटे हुए थे। लेटे-लेटे ही बात की-''क्या तकलीफ है बेटा!'' ''कुछ नहीं गुरुदेव'' मैंने कहा। ''बस, मेरा काम करते रहो। कोई दिक्कत नहीं आयेगी। कुछ चाहिए?'' गुरुजी ने पूछा। ''ज्ञान, भक्ति, वैराग्य।'' मैंने शीघ्रता से कह दिया। उन्होंने मुझे ऊपर से नीचे तक देखा। फिर ''तथास्तु'' कहा। हाथ उठाकर आशीर्वाद दिया। मैंने प्रणाम किया। पास गया। उन्होंने पुनः मेरे सिर पर प्यार भरा हाथ रख दिया। मैं धन्य हो गया। आज भी उन पलों की याद से हृदय गद्‌गद् हो जाता है।

लोग इसे ही अधिक पसंद करेंगे

(श्री चन्द्र भूषण मिश्रजी सन् 1971 में अखण्ड ज्योति के पाठक बने। सन् 1978 मार्च में वे शान्तिकुञ्ज आये और फिर यहीं के हो गये।)

सन् 88 में पूज्यवर यज्ञीय कर्मकांड का संशोधन कर रहे थे। उनका कथन था कि हमें बड़ी संख्या तक जन-जन में पहुँचना है, अतः कम समय में आकर्षक कर्मकाण्ड द्वारा यज्ञीय कृत्य सम्पन्न किए जायें। इस हेतु उन्होंने दीप यज्ञ का विधि-विधान बनाया व अपने बच्चों को समझाया। अधिकांश व्यक्तियों ने शंका की कि इतनी जल्दी में दीपक द्वारा यज्ञ सम्पन्न करने से जनता की श्रद्धा को ठेस पहुँचेगी। वह चलेगा नहीं। उसकी अवहेलना या उपहास न हो, यह शंका उन सबको खाये जा रही थी।

पूज्यवर ने उनकी समस्याएँ सुनीं व कहा- ''किसी भी कार्य का नयापन कुछ दिन अटपटा तो लगता है, किन्तु देखना, लोग इसे ही अधिक पसंद करेंगे क्योंकि आज अधिक समय किसी के पास नहीं है। दुनियाँ में मैं ही एक मात्र पंडित रहूँगा, जो भी चलाऊँगा, अवश्य चलेगा। मैं कह रहा हूँ और कोई पसंद न करे, ऐसा नहीं होगा। मैं जो कह रहा हूँ, वही दुनियाँ में चलेगा। जितना बड़ा पंडाल बिछा दोगे, उतनी जनता लाने की जिम्मेदारी मेरी होगी।''

इसी प्रकार उसी समय संस्कारों की सूत्र पद्धति तैयार की गई, जिसे कोई भी व्यक्ति आसानी से बहुत कम समय में कहीं भी सम्पन्न करा ले। इसी के बाद सन् 89 में दीपयज्ञों की ऐसी शृंखला चली कि सारा राष्ट्र एकता के सूत्र

में बँध गया। उनका कोई भी कार्य एक आन्दोलन के रूप में चलता है तथा दीपयज्ञ व संस्कार सूत्रों के आन्दोलन की भी आँधी सी चल पड़ी। उनका कथन पूर्णतया सत्य हुआ।

जो लिखेगा, वही संदर्भ बनेगा

श्री चन्द्रभूषण जी कहते थे कि जब प्रज्ञा पुराण व अन्य पुस्तकों के विषय में चर्चा हो रही थी, तब गुरुवर ने कहा- ''जो इसमें लिख दिया जायगा वही संदर्भ बन जायगा। अत: आपस में 3-4 लोग मिलकर निर्धारित कर लें।'' वे मुझे चन्द्रशेखर कहते थे। उन्होंने कहा, ''चन्द्रशेखर, मुझे तो पढ़े हुए बहुत समय हो गया, पर तू अभी-अभी पढ़कर आया है, तू लिख।'' मैंने कभी कलम चलाई नहीं थी। कहा, ''गुरुदेव कैसे होगा? मैंने तो कभी कलम नहीं चलाई।'' वे बोले, ''हो जाएगा और उस दिन से शक्ति प्रवाह ऐसा बरसा कि खूब कलम चलने लगी।''

वे हँसते और प्रशंसा भी करते। मिशन के विस्तार की, ब्रह्म दीप यज्ञों की, अश्वमेध यज्ञों की योजना बनी। वे कहते, ''पैसा आयेगा देखना, आसमान तोड़कर, जमीन फोड़कर आयेगा। आवश्यकता के समय कभी भी पैसे की कमी नहीं पड़ेगी।''

(ज्ञातव्य है कि श्री चंद्रभूषण मिश्रा जी के विषय में गुरुदेव ने उनके शान्तिकुञ्ज आने के पूर्व ही कार्यकर्ताओं से कहा था कि मेरा एक बेटा आने वाला है जो संस्कृत का बड़ा विद्वान् है। उसका बायाँ हाथ कमजोर है, वो तुम लोगों को संस्कृत सिखायेगा। उन्हीं के द्वारा गुरुदेव ने अश्वमेध यज्ञों का कर्मकाण्ड तैयार करवाया। सबको विधिवत् मंत्रोच्चारण सिखलाया। यहाँ तक कि देवकन्याओं की कक्षायें भी वे ही लेते थे।)

मैं स्वयं सूर्य रूप हूँ

यह प्रसंग सन् 1982 का है। दिल्ली के एक प्रोफेसर को कैंसर हुआ। वे गुरुजी से जुड़े तो थे पर बुद्धिवादी होने के नाते गुरुजी की परीक्षा लेना चाहते थे। अत: पूज्यवर से मिलने के लिये वे शान्तिकुञ्ज तो आये किंतु नीचे ही प्रतीक्षालय में बैठे रहे जबकि उस समय उनसे मिलने हेतु कोई भी कभी भी जा सकता था।

थोड़ी देर में गुरुदेव ने स्वयं ही उन्हें बुलवा लिया व शिकायत भरे लहजे में कहा, ''बेटा! तुझे कैंसर है और तूने बताया तक नहीं।''

वे गुरुजी के चरणों में गिर पड़े और सुबकते हुए बोले, ''गुरुजी, चाहता था कुछ दिन ठीक से जी लूँ।'' गुरुजी ने कहा, '' अरे बेटा! कुछ नहीं है, तू बिल्कुल ठीक है। जा! तुझे कुछ नहीं होगा। बेटा! मैं स्वयं सूर्य स्वरूप हूँ, ब्राह्मण हूँ जो निरंतर सभी को देना ही जानता है।''

श्रद्धेय डॉ. प्रणव भाई साहब बताते हैं कि मैं उस समय ऊपर ही था। डॉक्टर बुद्धि, मैंने भी उनका पता नोट किया कि देखें आखिर होता क्या है ? सन् 1982 से 1991 तक वे बिल्कुल स्वस्थ रहे। कैंसर का कहीं अता-पता भी नहीं था।

सूर्य की ओर देखकर समाधान किया

राजनांदगाँव के **श्री बुधराम साकुरे** जी के ससुर तीर्थ यात्रा के लिए निकले थे। उनके घर एक समाचार मिला कि जिस नाव में बैठकर वे नदी पार कर रहे थे, वह नाव डूब गयी है। उनका कुछ अता-पता नहीं है। वे जीवित भी हैं कि नहीं, कुछ ज्ञात नहीं है। अब घर वाले बहुत परेशान थे कि उनका पता कैसे लगाया जाय ? संयोग से उन दिनों पूज्यवर राजनांदगाँव व दुर्ग (छ.ग.) गये हुए थे। साकुरे जी ने घर वालों से कहा- ''आप सब परेशान न हों, हम अपने गुरुजी से उनके बारे में पूछेंगे। वे सब समाधान कर देंगे।''

उन्होंने दुर्ग आकर गुरुजी का पता किया कि वे कहाँ हैं। किसी ने बताया कि वे स्टेशन पहुँच चुके हैं। वे रेलवे स्टेशन आकर पूज्यवर से मिले। आते ही चरण स्पर्श कर गुरुजी से कहने लगे- ''गुरुजी! घर में एक समस्या है। हमारे ससुर जी तीर्थ यात्रा को गये थे। ऐसा सुनते हैं कि उनकी नाव डूब गयी। घर वाले बहुत परेशान हैं।'' पूज्यवर ने एक क्षण के लिए सूर्य की ओर निहारा। फिर बोले, ''बेटा! बिल्कुल चिन्ता न करो। वे कल सुबह तक यहाँ आ जायेंगे।'' उन्हें स्वयं को तो पूर्ण विश्वास था कि पूज्यवर का कोई कथन असत्य नहीं हो सकता पर अपने ससुराल पक्ष को कैसे समझाएँ जो अभी परिवार से जुड़े नहीं थे। उन्होंने कहा, ''आप लोग सुबह तक धैर्य रखो।''

सुबह होते ही स्टेशन से ससुर जी का फोन आ गया कि मैं यहाँ पहुँच गया हूँ। मैं रिक्शा से घर आ रहा हूँ। घर पहुँच कर उन्होंने बताया कि नाव तो डूबी थी, पर बचाने वाले परमात्मा ने बचा लिया। जैसा कि कहा गया है, 'जाको राखे साइयाँ, मार सके न कोय।' साकुरे जी का विश्वास है कि पूज्य गुरुदेव ने ही हमारे ससुर जी को बचा लिया।

साकुरे जी बताते हैं कि वे स्वयं नशे में डूबे रहते थे। उनकी शराब किसी भी भाँति उनसे छूट नहीं रही थी। पूज्य गुरुजी ने ही उनका जीवन बदला। गुरुजी ने उन्हें जीवन की कीमत समझायी, और जीवन को यूँ ही आग लगाते रहने से बचा लिया। जीवन में कुछ विशिष्ट कार्य करवाकर जीवन को सफल एवं सार्थक बना दिया। शान्तिकुंज से पूज्यवर ने उन्हें देश में विभिन्न कार्यक्रम सम्पन्न करवाने के लिए टोलियों में भी भेजा।

चिंता मत करना

अन्नपूर्णा साहू के पिताजी पोरथा, जिला- सक्ती के सक्रिय कार्यकर्त्ता थे, अक्सर शान्तिकुञ्ज आते-जाते रहते। एक दिन पूज्य गुरुदेव ने उनसे पूछा ''बेटे, तुम्हारे कितने बच्चे हैं ?'' बोले, ''गुरुजी, दो बच्चे हैं। एक लड़का, एक लड़की।'' पूज्यवर वहीं से अपनी सूक्ष्म दृष्टि से देख रहे थे कि उनकी पत्नी के गर्भ में भी एक बच्ची है। बोले, ''बेटा! तुम तीन-तीन बच्चों को कैसे पालोगे, इसकी चिंता मत करना।'' फिर पूज्य गुरुदेव ने कहा कि बेटा कुछ गड़बड़ नहीं करना। (गर्भ से छेड़छाड़ नहीं करना) ''बेटा, तू नहीं, उसे हम पालेंगे। वो हमारी बच्ची है।'' जबकि उन्होंने सोचा हुआ था कि अब दो बच्चे ही पर्याप्त हैं। इस गर्भस्थ शिशु का एबार्शन करा देंगे। ऐसे अंतर्यामी थे गुरुदेव। सबके मनों को पढ़ लेते थे, और सब समाधान कर देते थे।

एक साल बाद उसी से शादी होगी

पं. लीलापत शर्मा जी सुनाया करते थे कि सन् 65 के पूर्व की बात है। मैं एक बार पूज्यवर से मिलने ग्वालियर से मथुरा आया था। चूँकि तब तक मैं गुरुवर के बहुत निकट आ चुका था, अतः गुरुदेव ने कहा, ''एक शादी का निमंत्रण है, तुम चले जाओ।''

मैंने सोचा, ''गुरुदेव के प्रतिनिधि रूप में जाना है, तब तो पाँचों उँगली घी में हैं।'' सहर्ष तैयार होकर आगरा चला गया। वहाँ पता चला लड़की गुरुजी की एकनिष्ठ साधिका है। किन्तु विवाह के समय अचानक अनहोनी घट गई। बारात आई। अचानक लड़के की तबीयत बहुत खराब हो गई, वह बेहोश हो गया। दरवाजे पर दोनों परिवारों में न जाने क्या कहा सुनी हुई। बारात दरवाजे से वापस चली गई।

मैं स्तब्ध था। गुरुजी का प्रतिनिधि जो ठहरा। मेरी बोलती बंद थी। कहाँ तो मैं घी में ऊँगली डालने की सोच रहा था, कहाँ मेरी फजीहत हो रही थी। लड़की ने मुझसे प्रश्न किया-''बताइये, अब मैं क्या करूँ?''

वहाँ तो इज्जत का सवाल था। अत: जैसे-तैसे उसे ढाँढस दिया। कहा, ''बेटी, भगवान की इच्छा स्वीकार करो। उन्होंने कुछ अच्छा ही सोचा होगा।''

मथुरा आकर गुरुजी पर सारा गुस्सा उतारा। ''क्या मुझे फजीहत कराने भेजा था?'' बहुत झल्लाया।

गुरुजी शांत रहे। जब मेरा गुस्सा ठंडा हुआ। मैं अपनी पूरी बात कह चुका तो उन्होंने शांत स्वर में कहा। ''एक साल के बाद उसकी वैधव्य दशा थी। अत: शादी रोक दी। उस लकड़ी से कहो, अपनी शादी का सामान उठा कर रख दे। एक साल बाद उसी से शादी होगी।''

मैंने यह बात लड़की से कह दी। सचमुच लड़का कुछ महीनों बाद बहुत बीमार हुआ। मुशिकल से बचा। बाद में माता-पिता दूसरी जगह शादी तय कर रहे थे। किन्तु लड़के ने ज़िद की व कहा कि उस लड़की की तप-निष्ठा से ही मैंने नव जीवन पाया है, अत: उसी लड़की से शादी करूँगा। ठीक एक साल बाद उस लड़की का उसी लड़के के साथ विवाह हुआ। मैं गुरुदेव के भविष्य दर्शन पर नत मस्तक था।

प्रतिदिन डायरी लिखना

श्रीमती प्रमिला बैगड़, शान्तिकुञ्ज

कृष्ण के ग्वाल-बाल एवं राम के रीछ-बन्दरों को यह मालूम नहीं था कि हम जो कार्य कर रहे हैं, वह कभी इतिहास के पन्नों पर अमर होगा। इसी प्रकार हम सब भी नहीं जानते थे कि हम कितने सौभाग्यशाली हैं, जो उनके

साथ जुड़ कर कार्य कर रहे हैं। किन्तु वे तो सर्वज्ञ थे। भूलना मनुष्य का स्वभाव है, आदत है। अत: समय को याद रखने के लिये उन्होंने गोष्ठी बुलाई और कहा, ''सभी कार्यकर्ता अपनी दैनिक दिनचर्या लिखें।'' सुबह से शाम तक कहाँ, क्या काम किया, वह लिखें व हमारे पास जमा करें।

हम सब अपनी दिनचर्या एवं गुरुवर के साथ किये सभी कार्य लिखते व प्रणाम करने जाते तो अपनी डायरी गुरुजी को दे आते।

दूसरे दिन प्रणाम करने जाते तो उसे ले आते व दूसरी डायरी दे आते। गुरुदेव कहते- ''बच्चो! अपनी-अपनी डायरी लेते जाओ।''

हम लोग डायरी लेकर बच्चों की तरह बहुत खुश होते, क्योंकि डायरी में 'सही' का निशान जो मिलता। हमें यह देख कर अतीव प्रसन्नता होती कि गुरुजी ने हमारी डायरी पढ़ी है।

इस प्रकार उन्होंने अनेकों घटनाओं को डायरी में अंकित करवा कर इतिहास रचने की पूर्व भूमिका बना दी।

मेरे मना करने के बाद भी चली गई

(श्री जे. पी. कौशिल जी सन् 1956 में पूज्य गुरुदेव से जुड़े थे और सन् 1991 में वे शान्तिकुञ्ज आ गये थे।)

शान्तिकुञ्ज में जब एक वर्षीय कन्या प्रशिक्षण सत्र आरंभ हुआ। तब मेरी बड़ी लड़की कल्पना भी सन् 78-79 के सत्र में शामिल हुई थी।

माघ पूर्णिमा के पहले दिन कल्पना जब किसी कार्यवश परम वंदनीया माताजी के कमरे में गई तो गुरुजी ने उसे देखते ही कहा, ''बेटा, कल तू गंगा नहाने मत जाना।'' कल्पना ने पूछा, ''क्यों गुरुजी ?''

गुरुजी ने जोर देते हुए कहा, ''मैं कह रहा हूँ, तू कल गंगाजी नहीं जायेगी।'' ''ठीक है गुरुजी, आप कहते हैं तो नहीं जाऊँगी।'' कल्पना ने कहा। गुरुदेव ने पुन: कहा, ''हाँ, मैंने कह दिया, कल तू गंगाजी नहीं जायेगी।'' इस प्रकार उन्होंने तीन बार उसे गंगा नहाने से मना किया।

दूसरे दिन उसकी सहेलियाँ जो एक साथ कमरे में रहती थीं, उसे गंगाजी चलने के लिये जिद करने लगीं। कल्पना ने कहा कि मुझे गुरुदेव ने गंगा नहाने से मना किया है, इसलिये मैं नहीं जाऊँगी।

सहेलियों ने पुन:जिद की कि अच्छा, नहाने के लिए ही तो मना किया है। साथ चलो बाहर बैठे रहना। नहाना मत।

कल्पना को बात जँच गई। होनी को कौन टाल सकता था। अत: वह गंगा जी चली गई।

गंगा जी पहुँच कर वह किनारे बैठ गई। उसकी सहेलियाँ नहा रही थीं। उनमें से कुछ को लगा ''बेचारी अकेली बैठी है।''

और 3-4 सहेलियाँ आकर उसे जबर्दस्ती खींच कर ले गईं। कुछ देर तो उसने भी स्नान किया। फिर अचानक ही वह बहने लगी।

उसे बहते देख, लड़कियों के होश उड़ गये और वह चिल्लाने लगीं। वहीं 4-5 आदमी बैठे थे। उन्होंने तुरंत कल्पना को डूबने से बचाया और पानी में से बाहर निकाला। अब सभी सहेलियाँ स्वयं में अपराध बोध महसूस करने लगीं। बोलीं, ''गुरुदेव अन्तर्यामी हैं। उन्होंने पहले ही कह दिया था पर हम लोगों ने ही जबर्दस्ती की।''

शान्तिकुञ्ज आकर जब सबने गुरुजी से बताया तो पूज्यवर ने कहा, ''मेरे इतना मना करने के बाद भी नहीं मानी, चली गई।''

कल्पना ने कहा-''गुरुजी, मैं नहीं जा रही थी। मेरी सहेलियाँ जबरदस्ती मुझे ले गईं।'' तब गुरुदेव ने बड़ी गंभीरता से कहा, ''बेटी, मैं तेरे बाप को क्या जवाब देता?''

लाल बाबा के बताने पर आये हो!

डॉ. लक्ष्मण सिंह मनराल चौखुटिया, अल्मोड़ा

श्री पी.वी. बालास्वामी शिप कार्पोरेशन ऑफ इण्डिया के ऑडिटर हैं। जो एक संत स्वभाव के घुमक्कड़ प्रवृत्ति के व्यक्ति हैं। वे 1985 में कैलाश मानसरोवर की यात्रा में हमारे एक साथी थे। तिब्बत में एक दिन मानसरोवर परिक्रमा में अपने बैग से दो सूखे पुष्प निकाले और भाव विभोर होकर कहने लगे, ''एक संत की कृपा से मुझे कैलाश मानसरोवर यात्रा का सौभाग्य मिला है, और उनकी आज्ञानुसार इनको देवाधिदेव कैलाशपति के सामने इस पावन सरोवर में समर्पित कर रहा हूँ।''

हमारे जिज्ञासा प्रकट करने पर उन्होंने पूरा वृतांत इस प्रकार सुनाया। ''मैं गत वर्ष गोमुख यात्रा से लौट रहा था। मार्ग में भोजवासा में महंत श्री लाल बाबा के आश्रम में रात्रि विश्राम हुआ। लाल बाबा स्वयं में एक ऊर्जावान व्यक्ति हैं। इस बेहद ठण्डे, सुनसान प्रदेश में गोमुख आने जाने वाले यात्रियों को नि:शुल्क आवास एवं भोजन व्यवस्था वर्षों से करते आ रहे हैं। मैंने उनसे पूछा आप इस इलाके से बीसियों वर्षों से परिचित हैं। मुझे किसी सच्चे संत का पता बताइये। मुझे उनके दर्शन करने हैं। लाल बाबा ने बताया आप सीधे हरिद्वार जायें, वहाँ शान्तिकुञ्ज में श्रीराम शर्मा आचार्य जी के दर्शन कर लें। बस आपकी सारी जिज्ञासाएँ शांत हो जायेंगी।

चौथे दिन मैं शांतिकुँज पहुँचा। वहाँ आचार्य जी के कक्ष में गया तो देखा एक सीधे-सादे साधारण भेष में विराजमान तेजस्वी व्यक्तित्व कुछ लिख रहे हैं। कुछ क्षण बाद उन्होंने मुझे देखा, बोले, ''बैठो बेटा। हाँ! लाल बाबा के बताने पर आये हो'' और वे सारी बातें उन्होंने दुहरा दीं जो मेरे और लाल बाबा के बीच हुई थीं। मैं ठगा सा उन्हें देखता रह गया। आया था परीक्षा लेने, लेकिन खुद फेल हो गया। मैं उन त्रिकालज्ञ के सामने नतमस्तक था। न कोई फोन, न अन्य संचार व्यवस्था थी। मेरे दोनों हाथ जुड़े थे। अन्दर दो फूल जो मैं उन्हीं की बगिया से तोड़ लाया था उनको चढ़ाने के लिये पर चढ़ा न पाया था। वे बोले, ''फूल तोड़ने को तो लाल बाबा ने कहा नहीं होगा। अच्छा! सकुचाओ मत। अब इन पुष्पों को सँभाल कर रख लो। अगले वर्ष मानसरोवर में भगवान शंकर को समर्पित करना।'' मैं फिर हैरान था। उन्होंने कैसे जाना कि मैं कैलाश मानसरोवर के लिए प्रयत्न करते-करते हार गया था। इस प्रकार उन त्रिकालदर्शी संत, ऋषि, गुरु जो आप कहें उनके दर्शन मात्र से मेरी यह कैलाश मानसरोवर की यात्रा सम्भव हो गई। उन्हें स्मरण कर, मैं यह पुष्प देवाधिदेव कैलाशपति को समर्पित कर रहा हूँ।'' अपने गुरुदेव के बारे में विदेश में इतना सब जानकर आश्चर्य हुआ। मैं किस कदर भाव विभोर था, वर्णन नहीं किया जा सकता।०००

यह उन दिनों की बात है जब गुरुदेव मथुरा में ही थे। गायत्री तपाभूमि में भीड़-भाड़ कम रहती थी, इसलिए साधना सत्रों में पहुँचे परिजन गुरुदेव से एकान्त में अपनी समस्या, उनका समाधान आदि विषयों पर बातें करते थे। जब मेरी बारी आयी गुरुदेव से अपनी बातें रखीं। वे बातों-बातों में कई भावी

घटनाचक्रों को बताते चले गये जो आगे चलकर ज्यों के त्यों घटित हुए। अंत में गुरुदेव ने कहा, ''मेरी कुमाऊँ के किसी एकान्त स्थान में कुछ दिन रहकर निवास करने की इच्छा है। उपयुक्त स्थान की तलाश कर मुझको बताना।'' वापसी में मैंने बहुत स्थानों को खोजा। किसी स्थान के बारे में निवेदन करता कि गुरुदेव का संदेश मिल गया, ''मुझे हिमालय जाना है। इसलिए इस समय कुमाऊँ आना संभव न हो सकेगा।'' जीवन भर यह मलाल रहा कि गुरुदेव का पदार्पण यहाँ नहीं करा पाये।

पूज्यवर के हिमालय से लौटने के बहुत वर्षों बाद एक बार शान्तिकुञ्ज में मैंने गुरुजी से मथुरा में हुई कुमाऊँ चलने वाली बात प्रारम्भ की तो वे बोले, ''बेटा, अब इस जीवन में स्थूल शरीर से वहाँ आना सम्भव नहीं है। लेकिन मेरे मूर्धन्य बेटे मेरा संदेश कुमाऊँ के चप्पे-चप्पे तक पहुँचाने में सक्षम होंगे। अब सूक्ष्म रूप से ही आऊँगा।''

मैंने निवेदन किया कि गुरुदेव अपने कर कमलों से कोई निशानी दे दीजिये, जिसको उत्तराखण्ड ले जा सकूँ। गुरुदेव ने तुरन्त शान्तिकुञ्ज के उद्यान अधिकारी को बुलवाया, उनसे एक बेल जिसको उन्होंने ऋषिलता नाम दिया। उसमें एक पत्ते पर सात पत्तियाँ आती हैं। सदाबहार यह बेल कहीं पर भी बढ़कर लता-कुंज, झाड़ी, गेट या बाग, मंदिर, घर-आँगन में हो जायेगी, इसमें नीले-सफेद रंग का फूल सालभर आता है। इस बेल को साथ लाकर मैंने पूरे उत्तराखण्ड में फैलाने की कोशिश की। आज चन्द वर्षों में यह गुरुबेल आधे से अधिक स्थानों में फैल चुकी है। इसको देखते ही गुरुजी का महान व्यक्तित्व, फूलों की सी मुस्कान, सागर सी गम्भीरता और हिमालय सी दृढ़ता मन में परिलक्षित हो जाती है।

8. बेटा हमारा जन्म-जन्मांतरों का साथ है

अवतारी चेतना जब धरा पर आती है, तब अपने साथ श्रेष्ठ आत्माओं को भी सहयोगी-सहचरों के रूप में श्रेय-सौभाग्य का भागीदार बनाती है। जन्म-जन्मान्तरों से उनके साथ जुड़ी हुई वे आत्माएँ जो उनकी सहयोगी-सहचरी रही हैं, उन्हें वह फिर से संगठित करती हैं, और अपने प्रयोजन को पूरा करती हैं। भगवान् राम आये, तो उनके साथ वे रीछ-वानरों के रूप में आयीं। भगवान् कृष्ण आये, तब उनका साथ ग्वाल-बालों ने दिया। युग निर्माण का कार्य भी बहुत बड़ा कार्य है, इसके लिए भी महान् आत्माओं को अवतरित होना पड़ेगा।

वे कहते थे, जैसे गोताखोर गहरे समुद्र में से बहुत मेहनत करके कुछ मोती खोज पाते हैं, वैसे ही हमने अपनी सबसे ज्यादा तप शक्ति ऊँचे स्तर की, संस्कारवान्, दिव्य आत्माओं को अपने आँचल में समेटने में लगाई है। बेटा हमारा-तुम्हारा जन्म-जन्मान्तरों का साथ है। मैंने आप सबके रूप में हीरे-मोती खोजे हैं व उन्हें एक सूत्र में पिरोया है।

अपने इस परिवार को उन्होंने प्रज्ञा परिवार का नाम दिया। जुलाई 1984 की अखण्ड ज्योति में पृ. 62 पर उन्होंने लिखा है- ''हमें अनेक जन्मों का स्मरण है, लोगों को नहीं। जिनके साथ पूर्व जन्मों के सघन संबंध रहे हैं, उन्हें संयोगवश या प्रयत्न पूर्वक हमने परिजनों के रूप में एकत्रित कर लिया है और वे जिस-तिस कारण हमारे इर्द-गिर्द जमा हो गये हैं। इस जन्म-जन्मांतरों से संग्रहित आत्मीयता के पीछे जुड़ी हुई अनेकानेक गुदगुदी उत्पन्न करने वाली घटनाऐं हमें स्मरण हैं।''

बेटा! इस हाथ के ऊपर भरोसा करना

श्री जयंती भाई पटेल, राजनाँदगाँव

संत रविदास जी के विषय में कहते हैं कि जब सब पंडितों ने उनका विरोध किया और उनके साथ भोजन करने के लिये मना कर दिया था। तब

भगवान ने अपने भक्त की लाज रखी थी। जब वे सब पंडित खाना खाने बैठे तो हर किसी को अपने साथ संत रविदास बैठे दिखाई दिये। पर इसके लिये भक्त को भी कड़ी परीक्षाओं से गुजरना पड़ता है।

ऐसा ही कुछ प्रसंग मेरे साथ भी घटा। घटना का प्रारंभ सन 1968 से होता है, जब गुरुदेव को मैं जानता भी नहीं था। उन दिनों मैं गुजरात में रहता था और एक को-ऑपरेटिव सोसायटी में नौकरी करता था। उस समय मैं बहुत बड़ी विपत्ति में फँसा था। जो दलाल हमें सरकार से अनाज, चावल, शक्कर आदि सप्लाई करता था, उसने सरकार के साथ धोखाधड़ी की। हमें माल सप्लाई करता रहा और फर्जी बिल देता रहा। इस प्रकार उसने 1 लाख 48 हजार रुपये की ठगी की। इसका पता हम लोगों को तब चला जब सरकार के पास पैसा नहीं पहुँचा और सरकार की ओर से चैकिंग की गई। दलाल को जेल तो हो गई पर सरकार हम लोगों से पैसे की भरपाई की माँग करने लगी।

हम लोग 14 व्यापारी थे जिनके साथ दलाल ने धोखा किया था। फर्जी बिल देकर पैसा वसूलता रहा था। पैसा तो हम बराबर चुकाते रहे थे सो सरकार को इतना पैसा कहाँ से चुकाते ? मेरे हिस्से में 26000 रुपये बैठते थे। उस समय में वह बहुत बड़ी रकम थी। हमने मिलकर वकील जुगत राम रावल जी को नियुक्त किया था। साल भर केस चलता रहा पर कोई निष्कर्ष नहीं निकला था। हम लोग काफी परेशानी में थे।

भादों महीने की अमावस्या के दिन गुरुजी के शिष्य, भाई श्री भोगीलाल पटेल जी हमारे घर आये। जब उन्होंने हमारी समस्या जानी तो बोले कि हमारे गुरु इतने शक्तिशाली हैं कि वे आपको इस संकट से उबार लेंगे। मैं अभी उन्हें पत्र लिखता हूँ। उन्होंने मेरे सामने ही पत्र लिख दिया और दो गायत्री मंत्र लेखन पुस्तिका हाथ में थमाया। अगले दिन से नवरात्रि प्रारंभ थी, नवरात्रि में उसे पूरा करने के लिये कहा। अंतिम दिन पूर्णाहुति के लिये आमंत्रित भी किया।

ठीक आठवें दिन गुरुजी का जवाब आया। लिखा था, बेटा चिंता न करें, आपकी परेशानी हमने जानी है। आपको बचाने के लिये हमारी शक्ति लगी हुई है। नौवें दिन पूर्णाहुति थी, मैं पत्र भी साथ में ले गया। श्री भोगीलाल जी बड़े प्रसन्न हुए व बोले कि आपका काम हो गया समझें, आप निश्चिंत हो

जाइए। दशहरे के दिन पेपर में समाचार आ गया कि, दलाल ही पूरे प्रकरण का दोषी है। सभी 14 व्यापारी निर्दोष हैं।

इस घटना से गायत्री मंत्र व पूज्य गुरुदेव में मेरा विश्वास बढ़ गया। मैंने 250 मंत्र लेखन पुस्तक लिखने का संकल्प ले लिया। जिसे मैंने 5 साल में पूरा किया। पर इसके बाद मेरी कड़ी परीक्षा शुरू हुई। जिस ब्राह्मण ने मुझे पढ़ाया था उसे जब पता चला कि मैं गायत्री मंत्र लेखन कर रहा हूँ तो उसने मुझे मना किया और कहा कि बड़ी गलती कर रहे हो। इसे आज से अभी से छोड़ दो। यह ब्राह्मणों का मंत्र है। तुम आग से खेल रहे हो। तुम्हारी 71 पीढ़ी का सर्वनाश हो जायेगा और भी बहुत कुछ समझाया पर मैं माना नहीं। इस पर वह बहुत नाराज हुआ और मेरे घर वालों को भड़काया। घर वाले भी मुझे मना करने लगे। प्राय: इस बात को लेकर झगड़ा होने लगा कि मैं ब्राह्मण के मना करने पर भी गायत्री मंत्र लेखन क्यों कर रहा हूँ? जब मैं किसी प्रकार नहीं माना तो उन्होंने मुझे घर से निकाल दिया। मैं पत्नी बच्चे को लेकर घर से निकल गया पर मंत्र लेखन नहीं छोड़ा। इस पर भी ब्राह्मण को संतोष नहीं हुआ। अब उसने गाँव वालों को भड़काया। गाँव वाले भी मेरे पीछे पड़ गये। समझाने लगे। पर मैं नहीं माना तो उन्होंने मुझसे बात करना बंद कर दिया। मैं बिल्कुल अकेला पड़ गया।

संघर्ष करते हुए लगभग छ: महीने बीत गये। इस बीच मैं बार-बार गुरुजी को पत्र लिखता रहा। उनका आश्वासन पत्र मिलता रहा। एक दिन मन में विचार आया कि गुरुजी को मैं जानता नहीं फिर भी इतना विश्वास क्यों कर रहा हूँ? पत्नी से कहा पता नहीं कब माहौल अनुकूल बनेगा? मेरा विचलन देखकर पत्नी बहुत आक्रोशित हुई और बोली, ''खबरदार, जो फिर ऐसी बात कही। जो होगा देखा जायेगा।'' संघर्ष करते करते साल भर बीतने को आया। भादों का महीना था, मेरे पास गुजराती में युगनिर्माण योजना आती थी, उसमें छपा था कि अहमदाबाद में गुरुजी का कार्यक्रम है। हम दोनों उस कार्यक्रम में गये। जब हम पहुँचे गुरुजी प्रवचन कर रहे थे। प्रवचन के बाद उन्होंने कहा, ''जो गायत्री परिवार के परिजन हैं वे सब रुकें बाकी सब घर जायें। हमें उनसे बातचीत करनी है।'' हम बहुत पीछे बैठे थे। गुरुजी से प्रथम बार मिल रहे थे। जैसे ही हमने गुरुजी को प्रणाम किया। वे हमें देखते ही मानो डाँटते हुए से

बोले, ''बेटा जयंतिलाल, गाँव वाले तेरा क्या बिगाड़ लेंगे, जो मैं तेरे साथ हूँ? गाँव वालों से तुम इतना डरते क्यों हो? मेरे रहते तुम्हारा बाल भी बाँका नहीं हो सकता। चिंता मत करना।'' फिर पत्नी से बोले, ''बेटा तेरे को कुछ कहना है?'' पत्नी ने कहा, ''बापजी, ये दु:ख हमारा दूर हो जाय, बस।'' गुरुजी बोले, ''सब ठीक हो जाएगा।'' हम तीन दिन बाद प्रोग्रम पूरा करके गाँव वापस गये। नवरात्रि पर्व प्रारंभ हो गया था। गुजरात में नवरात्रि में गर्बा किया जाता है। 5वें दिन हम गर्बा कर रहे थे, 10:30 बजे पूर्णाहुति थी। इतने में गाँव की ही लगभग 10 साल की लड़की रुक्मिणी, दूर से नाचती हुई आई और गरबी का जलता हुआ खप्पर (मटके के ढक्कन जैसा बड़ा सा दिया) उठा लिया। लगभग 5-7 मिनट तक उसे हाथ में उठा कर वह नाचती रही और फिर धीरे से रख दिया। वह खप्पर इतना गरम हो जाता है कि उससे हाथ जल जाते हैं पर वह कन्या उसे हाथ में उठाकर नाची और फिर धीरे से रख भी दिया और उसे कुछ भी नहीं हुआ। यह सब देखकर ब्राह्मण दौड़ कर उसके सामने गया और प्रणाम कर कहा, ''भले पधारे माताजी, हमारे लिये क्या आदेश है?'' ब्राह्मण को देखते ही लड़की एकदम आक्रोशित होकर बोली, ''तुमने मेरे भक्त को बहुत दुखी किया है, मैं तुमको नहीं छोड़ूँगी।'' इतना सुनते ही ब्राह्मण थर-थर काँपने लगा और तुरंत मुझे बुलाया। एक लड़का मुझे पकड़ कर ले आया। मैंने बच्ची को प्रणाम किया, तब वह बोली, ''बेटा, मुझे माफ करना, तेरा दु:ख दूर करने में मुझे देरी हो गई। आज से तेरा दु:ख खतम।''

उसी समय वहाँ उपस्थित गाँव के एक पटवारी बब्बू पाणी ब्राह्मण ने कहा, ''आप माताजी हैं। इसका प्रमाण दो।'' कन्या बोली, ''तुझे क्या प्रमाण चाहिये, बता?'' पटवारी ने अपना हाथ बढ़ाया और कहा, ''मेरे हाथ में अपना हाथ दो तो मेरे हाथ में कुमकुम आ जाये, तो मैं आपको माताजी मानूँगा।'' लड़की ने तुरंत उसके हाथ में हाथ दिया तो उसका हाथ लाल हो गया। यह देखकर उस कन्या के पिताजी उसके पाँव पड़े। कन्या ने उनकी पीठ पर थपकी दी, तो पीठ पर भी कुमकुम लग गया।

इतने में वह पटवारी फिर बोला, ''हम गायत्री मंत्र को नहीं मानते। मेरे चाचाजी ने पुत्र प्राप्ति के लिये अनुष्ठान किया था, उसे पुत्र नहीं हुआ। अत:

विश्वास नहीं है।'' बच्ची ने बताया, ''उसने उच्चारण करने में गलती की थी, इसलिये फलित नहीं हुआ।'' पटवारी ने कहा, ''सही उच्चारण कैसे होता है, बताइये ?'' तब लड़की ने सबके सामने ऊँचे स्वर में उच्चारण करके बताया। फिर मुझसे बोली, ''बेटा! तुम्हारी मंत्र लेखन पुस्तिका ले आओ तो।'' मैं दौड़ कर अपनी मंत्र लेखन पुस्तिका ले आया और माताजी को दी। उन्होंने उसे अपने माथे से लगाया और जलते हुए खप्पर पर रखदी। उसे कुछ नहीं हुआ। माताजी बोली, ''ये शुद्ध भावना से लिखा हुआ शुद्ध गायत्री मंत्र है। ले बेटा, अपनी पुस्तिका।''

इस घटना के एक माह बाद गुरुदेव स्वयं नखत्राणा पधारे। वहाँ हमने दीक्षा ली। फिर हम अंजार गये, वहाँ तीन दिन का कार्यक्रम था। वहाँ गुरुदेव ने प्रेम से अपने पास बिठाया। मैंने कहा, ''गुरुदेव मैं बहुत भाग्यशाली हूँ, कल मैंने आपसे दीक्षा ली है।'' तब गुरुजी बोले, ''हाँ बेटा, मैं तेरे लिये ही इतने दूर से आया हूँ। तेरे साथ तो मेरा जनम-जनम का साथ है। तुम्हारे जैसे बच्चे को खोजते-खोजते ही, मैं यहाँ तक आया हूँ। तुम्हारे जैसे अनेकों को मैं मेरी माला के मनकों के रूप में पिरोते जा रहा हूँ। अब तुम मेरा काम करने में लग जाओ।''

अपना हाथ दिखाते हुए गुरुदेव ने कहा, ''बेटा, ये हाथ हाड़-चाम का है, मगर लोहे से भी ज़्यादा मजबूत है। इस हाथ के ऊपर भरोसा करना। तू मेरा काम करना। तेरा काम मैं करूँगा।''

पत्र द्वारा परिचय हुआ

बाबू भाई कापड़िया, न्यू जरसी, अमेरिका

1980 से मैं अमेरिका में रह रहा हूँ। इससे पहले 1962 से 1968 तक मैं फिजी में रहा। उन दिनों मैं मुम्बई में रह रहा था, जब मुझे गुरुदेव का हरिद्वार से एक पत्र मिला। उसके साथ बायोडाटा फार्म भी था। मैंने उसे गुजराती में भर कर भेज दिया। उसके जवाब में एक माह बाद मुझे गायत्री उपासक की उपाधि का एक सर्टिफिकेट मिला। कुछ दिनों बाद मुझे फिर एक पत्र मिला जिसमें लिखा था कि आपको 24 शक्तिपीठों में से एक चुना जाता है। मैंने गुरुजी को जवाब लिखा कि अभी तो मैं नहीं आ सकता क्योंकि अभी मुझे मेरे वृद्ध पिता जी की देखभाल करनी है। भविष्य में जो भी मुझसे करते बन पड़ेगा वह मैं करूँगा। उसके बाद पत्र व्यवहार बंद हो गया। पर इस समय तक न तो मैं

गुरुजी का नाम ही जानता था और न ही गायत्री परिवार के बारे में कुछ जानता था। मुझे आज भी इस बात का आश्चर्य है कि उन्हें मेरा मुम्बई का एड्रेस कैसे मिला?

इसके बाद 1976 में मैं हरिद्वार आया। मैं होटल में ठहरा था। गुरुदेव से मिलने शान्तिकुञ्ज आया। उस समय उनका प्रवचन चल रहा था। प्रवचन के बाद मैं गुरुजी से मिला। उन्होंने मुझे होटल से कपड़े लाने और एक रात शान्तिकुञ्ज में रुकने के लिये कहा। मैं कपड़े लेकर शान्तिकुञ्ज आ गया। गुरुजी ने सुबह यज्ञ के बाद मिलने के लिये कहा।

जब मैं उनसे मिला तो बातचीत में मैंने बताया कि मैं अमेरिका जाने की योजना बना रहा हूँ। इस पर गुरुजी ने कहा कि बेटा मैं सब जानता हूँ। मैं तुम्हारा ध्यान रखूँगा। अमेरिका जाने से पहले मुझे एक पत्र जरूर लिख देना। मैंने अमेरिका जाने से पूर्व पत्र लिख दिया। 1980 में मैं अमेरिका गया। पहुँचते ही, अगले ही दिन मुझे नौकरी भी मिल गई। मैं हैरान हुआ। ऐसा लगा, जैसे वे मेरा ही इंतजार कर रहे हों। 2002 में रिटायर भी हो गया। 1980 से ही मैं गायत्री परिवार के कार्यों में संलग्न हूँ। यहाँ शाखा बनाई व गुरुजी की कृपा से जो भी बन पड़ता है, उनका काम करता रहता हूँ। गुरुवर के विषय में सोचता हूँ, तो यही लगता है जैसे उनका हमारा जन्म-जन्मांतरों का संबन्ध है। ऐसा आभास होता है, जैसे वे हर पल हमारे साथ हैं।

वो पूर्व जन्म की बहुत बड़ी भक्त थीं

भक्तिन अम्मा, शान्तिकुञ्ज

भक्तिन अम्मा बताती हैं कि रायपुर की श्रीमती शारदा मुझसे पहले शान्तिकुञ्ज आई थीं। वे नित्य प्रति परम वन्दनीया माताजी के प्रत्येक कमरे का सामान साफकर यथावत रखतीं, झाड़ूपोंछा करतीं, चादर बदलतीं। उन्होंने मिशन की बहुत सेवा की। उनके अंतिम क्षणों में गुरुजी-माताजी ने भी उनकी पुकार सुनी। सन् 86 में, मकर संक्रान्ति के ठीक सात दिन पहले उनकी तबियत खराब हुई। वे वशिष्ठ भवन में रहती थीं। परम वन्दनीया माताजी को जैसे ही खबर मिली उन्होंने उन्हें तुरन्त ऊपर बुलवा लिया। उन्हें दिल का दौरा पड़ा था। ऊपर भी वे तीसरे दिन भी बेहोश ही रहीं। नली (नाक में) द्वारा उनको आहार दिया जा रहा था। मैंने देखा, माताजी स्वयं उनके सिर को सहला रही हैं। उनके कपड़े, आवश्यक सामान को सहेजकर रख रही हैं।

मृत्यु से तीन चार दिन पहले माताजी ने यह अनुभव किया कि वे गुरुजी से मिलना चाहती हैं। उस समय जबकि गुरुदेव किसी से नहीं मिलते थे। उतर कर नीचे (बीच वाली मंजिल पर) आये और उनसे मिले। गुरुजी ने उन्हें फूल की एक पँखुड़ी दी और कहा, जिस दिन ये सूखेगी उस दिन ये जाएँगी। शारदा अम्मा ने उनके दर्शन कर स्वयं को कृतार्थ अनुभव किया। सन्तोष की साँस ली और उसके तीसरे दिन प्राण त्याग दिये। उनके हाथ की मुटठी खोल कर देखा वह फूल की पँखुड़ी सूख चुकी थी। ऐसे थे परम कृपालु गुरुदेव, जो सच्चे मन से आराधना करने वाले की हर इच्छा पूर्ण करते थे।

उनके शरीर छोड़ने पर माताजी ने कहा, ''बेटा, वो पूर्व जन्म की बहुत बड़ी भक्त थीं।''

पूर्व जन्म में तू ऋषि कन्या थी

डॉ. लक्ष्मण सिंह मनराल, अल्मोड़ा

बात 1959 के उत्तरार्द्ध की है। एक गोष्ठी में गुरुदेव बरेली में आत्मदानी श्री चमनलाल गौतम जी के निवास पर आयोजित गोष्ठी को संबोधित कर रहे थे। हजारों परिजन ध्यानमग्न गुरुवाणी सुन रहे थे। गुरुदेव का बोलना प्राणों को झंकृत कर देता था। जो एक बार उनकी बात सुनता सदा के लिए उनका अनुयायी हो जाता था। पास ही महिलाओं की कतार में एक युवती महिला ने ज्यों ही अपनी अंजलि फैलाई त्यों ही गुरुजी के चरणों के आस-पास बिखरे फूल स्वयं उड़कर (वहाँ न पँखा था न तेज हवा का झोंका) उस उस महिला की अंजलि में आकर समाने लगे। यह क्रम तब तक चलता रहा जब तक उसकी दोनों हाथों की अंजलि फूलों से भर नहीं गई। सारा पंडाल साँस रोके एक टक देख रहा था। मैं भी पास ही बैठा देखता रहा। शांत वातावरण में कुछ खलबली बढ़ी। गुरुदेव ने प्रवचन रोक दिया। वह महिला सकुचाती हुई अंजलि बाँधे ही अपने स्थान पर खड़ी हुई। संकोच के साथ बोली, ''गुरुदेव, जब से मैंने आपकी स्त्रियों की गायत्री उपासना पुस्तक पढ़ी, तभी से मैंने गायत्री जप प्रारम्भ कर दिया। पूजा के मध्य एक दिन मैं अपनी अंजलि इसी प्रकार फैला बैठी वहाँ गायत्री माँ के चरणों में चढ़ाये पुष्प इसी प्रकार मेरी अंजलि में भरने लगे, मैं डर गई। परिवार वालों ने भला-बुरा कहा। स्वयं मैं भी घबरा गई,

लेकिन मैंने उपासना नहीं छोड़ी। उपासनाकाल में जब भी मेरे दोनों हाथ अंजलि बाँधते हैं, फूल स्वयं भर आते हैं। मैं क्या करूँ, गुरुवर ? मेरा मार्गदर्शन करने की कृपा करिये।''

गुरुदेव को हमने इतनी ध्यानमग्न मुद्रा में पहली बार देखा। फिर वे बोले, ''बेटी, तू साधारण नारी नहीं है। पूर्व जन्म में तू ऋषि कन्या थी। यहाँ देवशक्तियों ने तेरे माध्यम से नारियों की गायत्री उपासना की पुष्टि कर दी है। इसमें घबराना कैसा ? यह अत्यंत शुभप्रद लक्षण है। तुम अपनी उपासना जारी रखो।'' गुरुदेव की बात सुनकर सभी परिजन श्रद्धावनत थे। बाद में गुरुजी ने स्वयं वे पुष्प स्वीकार किये और एक-एक पंखुड़ी वहाँ पर उपस्थित परिजनों को प्रसाद रूप में अपने हाथों से बाँटी। मेरे पास यह पुष्प खण्ड वर्षों तक सुरक्षित थे। आज भी जब हम उन साथियों से मिलते हैं जो उस दिन वहाँ उपस्थित थे, तो उस दृश्य की चर्चा अवश्य करते हैं।

बेटा यह पारस पत्थर है।

ओरीजोत, बस्ती, उ०प्र० के **श्री मिठाई लाल चौधरी** जी बताते हैं कि परम पूज्य गुरुदेव की उनके जीवन में इतनी कृपा है कि उन्हें लगता है जैसे उनके सभी कार्य गुरुसत्ता ही पूरा करती है। वे कहते हैं कि सन् 1977 की बात है। एक दिन रात्रि के समय गुरुदेव मेरे पैत्रिक निवास- ग्राम मनियारा, जनपद संत कबीर नगर में स्वप्न में सफेद धोती कुरता एवं जाकिट पहिने हुए आए। मुझे जगाया और बोले, ''कहाँ भटक गये थे ?'' बस! उसी दिन से मैं गुरुदेव का हो गया।

वर्ष 1978 में गुरुदेव ने मुझे एक कागज पर अपने हाथ से गायत्री मंत्र लिखकर दिया और कहा, ''बेटा, यह पारस पत्थर है। इसे किसी अच्छे कार्य में प्रयुक्त करोगे तो उसका भला हो जाएगा।'' मैंने उसके माध्यम से बहुत से लोगों की सहायता की। गुरुजी के कहे अनुसार उसके माध्यम से बहुत से लोगों की समस्याएँ दूर हुईं। बहुतों को स्वास्थ्य लाभ मिला। यह पारस पत्थर उन्होंने 14 लोगों को दिया था। जिसमें से 12 लोगों का तो गायब हो गया। केवल मेरे पास और प्रतापगढ़ की कार्यकर्ता, बहन पुष्पा मौर्या के पास अभी तक सुरक्षित है।

मार्च 1994 में मैं बीमार पड़ा। माताजी को पत्र लिखा। 17 मार्च 1994 को माताजी का पत्र मिला जिसमें लिखा था, ''बेटा! आप्रेशन न कराना।'' पर डाक्टरों ने आप्रेशन जरूरी बताया और मैंने आप्रेशन करा भी लिया। मेरे शरीर के तीन आप्रेशन हुए और दो बार सीरिंज से खींच कर मवाद निकाला गया। 23 मार्च से 12 मई 1994 तक लगभग 100 लीटर तक मवाद निकल गया होगा। बार-बार यही अहसास होता रहा कि माताजी की इच्छा के विरुद्ध आप्रेशन कराने के चलते ही इतना कष्ट झेलना पड़ा। 20 टाँके आज भी टूटे हुए हैं, पर फिर भी मैं स्वस्थ एवं प्रसन्नचित्त हूँ।

कितने संस्मरण गिनाऊँ, बस गुरुचरणों में समर्पित हूँ और उनके कार्यों में लगा रहता हूँ।

तेरा प्राण प्रत्यावर्तन तो हो गया।

(श्री श्रीकृष्ण अग्रवाल एवं श्रीमती सीता अग्रवाल, सन् 1970 में बागबहारा, रायपुर में मिशन से जुड़े। सन् 1972 में प्रथम बार शान्तिकुञ्ज आये और सन् 1977 में स्थाई रूप से शान्तिकुञ्ज आ गये।)

घटना सन् 73 की है। शान्तिकुञ्ज में पूज्य गुरुदेव प्राण प्रत्यावर्तन सत्र चला रहे थे। विदित हो कि उस समय तक उस सत्र के लिये परिजनों द्वारा स्वीकृति हेतु आवेदन नहीं भेजा गया था। पूज्य गुरुदेव ने स्वयं ही कुछ कार्यकर्ताओं को प्राण प्रत्यावर्तन सत्र की स्वीकृति भेजी थी।

मुझे इसी पत्र ने अधिक घनिष्ठता से जोड़ा, क्योंकि पत्र पाकर मुझे लगा कि मुझे गुरुजी याद करते हैं। बिना आवेदन के ही स्वीकृति आ गई।

मैंने जवाब दिया कि जून में मेरी बहन कौशिल्या की शादी है, उसे निपटाकर मैं तुरन्त हरिद्वार आऊँगा। विवाह से आठ दिन पूर्व मैं शादी का सामान लाने हेतु तेन्दुकोना बागबाहरा (छत्तीसगढ़) से गोंदिया जा रहा था। रायपुर में ट्रेन बदलनी थी। जैसे ही ट्रेन आई,धीरे हुई, हड़बड़ी में मैंने ट्रेन में चढ़ने की कोशिश में एक बोगी के दरवाजे का डंडा पकड़ लिया। किन्तु भीड़ के कारण मेरा पैर, पायदान तक ही पहुँच सका। मैं एक प्रकार से लटक गया। लटके-लटके तीन बोगी जितनी दूरी तक घिसट गया। हाथ में डंडा, सामने प्लेटफार्म, आधा शरीर गाड़ी में, आधा प्लेटफार्म के नीचे। उस हादसे को स्मरण कर आज भी रोंगटे खड़े हो जाते हैं। ईश्वर किसी को ऐसा दिन न दिखाये।

किन्तु होनी तो होनी है, गाड़ी धीरे हुई। हाथ में डंडा पकड़े हुए सारे शरीर का वजन संभाले मैं थक गया था। गाड़ी अभी धीमी ही थी, पर अकल काम नहीं की। मुझे लगा गाड़ी रुक गई और डंडा हाथ से छोड़ दिया। मैं सीधा नीचे पाँत के पास गिर पड़ा। गाड़ी धीरे-धीरे सरक रही थी। अब क्या करें? भगवान ने सद्बुद्धि दी, प्लेटफार्म थोड़ा सामने की तरफ आगे निकला हुआ था। उसी बीच दुबक कर बैठ गया। पुन: तीन डब्बे के लगभग गाड़ी सरकी, फिर रुकी। जैसे-तैसे पटरी के बीच में से जाकर धीरे-धीरे दो डब्बों के बीच के गैप तक आया। यहीं से धीरे से प्लेटफार्म पर चढ़ा और जाकर एक डिब्बे में बैठ गया। मेरे हाथ-पैर बुरी तरह कांप रहे थे। कई खरोंचें आई थीं, खून बह रहा था। उस समय रात्रि के आठ बज रहे थे। मेरी स्थिति देखकर एक व्यक्ति ने पूछा, ''भाई साहब काँप क्यों रहे हैं? क्या बात है?'' मैंने पूरी राम कथा सुनाई। उन्होंने कहा, ''भाई साहब, पूरी धोती लाल हो गई है। ट्रेन तो गोंदिया सुबह पहुँचेगी, तब तक आपकी हालत और खराब हो जायेगी। अच्छा हो, आपका कोई परिचय हो तो ब्रेक जर्नी ले लीजिये व डॉक्टर से तुरन्त इलाज करा लें अन्यथा परेशानी में पड़ सकते हैं।''

मुझे उनकी सलाह अच्छी लगी। मैंने ब्रेकजर्नी लिखवाई और ढूँढते-खोजते परिचय के एक व्यापारी के घर पहुँच गया। वहाँ बैठा तो गद्दी खून से लाल हो गई। उन्हें अपनी स्थिति बताई व डॉक्टर हेतु पूछा। उन्होंने कहा, ''अब तो देर हो गई है। सभी दवाखाने बंद हो चुके हैं। सुबह ही कुछ व्यवस्था हो सकेगी।'' निराश हो मैं घर से बाहर पान की दुकान तक गया कि कुछ पूछताछ करूँ। बाहर पान वाले से चर्चा की तो वह भी सुबह की बात कहने लगा। इतने में एक बारह-चौदह साल का लड़का वहाँ आया, उसने सारी बातें सुनीं। वह बोला, ''दवाई तो मैं बता सकता हूँ पर जलन होगी, सहना पड़ेगा।'' मरता क्या न करता? नहीं से तो अच्छा है जलन ही सह लिया जाय। सोचकर कहा, ''आप बताइये तो सही, जितना सह पायेंगे-सहेगें।'' उसने पान वाले से कहा, ''दवाई तो तुम्हारे पास है। कत्था और चूना मिला कर दे दो, लगाते हैं।''

पान वाले ने कत्था चूना मिलाकर दिया तो मैंने बालक से कहा, ''आप ही लगा दीजिए।'' वह तैयार हो गया और सभी जगहों में लगाने लगा, हाथ, पीठ, छाती, पेट सभी जगह लगाया। वह दवाई लगा रहा था तो मुझे ठंडक

अनुभव हो रही थी। मैं मन ही मन सोचने लगा कि इसने तो कहा था जलन होगी पर मुझे तो ठंडक लग रही है। जब वह पैर में लगाने लगा तो मेरा नियम था मैं, पैर किसी से छुआता नहीं था। अत: मैंने कहा, ''आप पैर मत छुइये, दीजिए मैं लगा लेता हूँ।'' उसने दवाई मुझे दे दी। मैं पैर में लगाने को झुका और जैसे ही दवा लगाया वहाँ मुझे तीव्र जलन हुई। कराहते हुए मैंने सोचा कि आने वाले बालक को धन्यवाद तो दे दूँ। किन्तु पैर में दवा लगाते तक जाने वह कहाँ रफूचक्कर हो गया। पान वाले से पूछा, ''वह लड़का कहाँ गया?'' वह बोला, ''बाबूजी, मैंने भी नहीं देखा। मैं तो आपके पैर की तरफ देख रहा था।'' अंर्तयामी अपना काम कर अंतर्ध्यान हो चुके थे, पर मैं समझ न सका।

ध्यान में ही नहीं आया कि यह किसी की कृपा है, दूसरे दिन गोंदिया गया। सामान लेकर आया। विवाह सम्पन्न हो गया।

इसके बाद जब शान्तिकुञ्ज पहुँचा, गुरुजी से मिलने गया तो उन्होंने कहा, ''आ बेटा आ! तेरा ही इंतजार कर रहा था। अब तुझे प्राण प्रत्यावर्तन की कोई जरूरत नहीं। तेरा तो प्राण प्रत्यावर्तन मैंने पहले ही कर दिया है। बेटे! चलती ट्रेन में चढ़ने का दुस्साहस कर तूने तो पागलपन ही कर दिया। पर पता है! तेरे इस काम के लिये, तेरे पास जाने में, मुझे कितनी तकलीफ उठानी पड़ी।'' तब मुझे समझ में आया कि उस रात्रि में, जो बालक आकर दवाई बताया और लगाया वह और कोई नहीं, स्वयं पूज्यवर ही थे। इसीलिये उनके हाथ से लगी दवाई ठंडक पहुँचा रही थी और जब मैंने लगाई तब जलन हुई।

मैं कृतज्ञता से भर गया। आँखों के सामने वह सारा दृश्य घूम गया। सोचने लगा, उस रात वे न आते तो क्या होता? उसी कृतज्ञता ने मुझे पूर्ण समर्पित कार्यकर्ता के रूप में बदल दिया।

ऐसे ली दीक्षा

शंकरलाल शर्मा, कनाड़िया इंदौर

खरगोन जिले के एक छोटे से गाँव छेगाँव में 108 कुण्डीय गायत्री महायज्ञ का आयोजन था। मुझे श्री सत्यनारायण तिवारी जी ने निमंत्रण दिया कि आप आकर थोड़ी व्यवस्था देखें, क्योंकि उन्होंने मुझे केसूर में पढ़ाया था सो मैं गया। न मेरा गुरुजी से कोई सम्पर्क था, न उनकी महत्ता के बारे में कुछ पता था। रात्रि में प्रवचन शुरु हुआ। गाँव के लोगों की बड़ी भीड़ थी। लोग प्रवचन में

बीड़ी भी पी रहे थे। गुरुजी बार-बार प्रवचन में कहते थे कि जिसको बीड़ी पीना हो बाहर जाकर पीये। मैंने उन लोगों को समझाया, नहीं माने तो हमने 2-4 को उठा कर दूर पटक दिया। यह दृश्य गुरुजी देख रहे थे। प्रवचन के बाद गुरुजी ने लीलापत शर्मा जी से कहा, ''इनको हमारे पास लाओ। ये बड़े काम के लोग हैं।'' श्री सत्यनारायण जी तिवारी ने कहा, ''आप लोग बड़े भाग्यशाली हो, आपको स्वयं गुरुदेव ने बुलवाया है।'' मैंने उनको इन्कार कर दिया कि हमको क्या लेना देना। उन्होंने बड़ा आग्रह किया तो हम उनसे मिलने गये।

अन्दर जाकर बैठ गये। न तो प्रणाम किया न सिर झुकाया। गुरुदेव से लगभग बीस मिनिट बात हुई। बस रात्रि में सोते समय गुरुदेव की बड़ी विचित्र आकृति दिखाई दी। हमारा रोम-रोम प्रफुल्लित हो गया। हमारे सब कुसंस्कार जैसे चले गये हों। सुबह जल्दी उठकर स्नान करके यज्ञ में सम्मिलित हुआ और गुरुदेव ने स्वयं दीक्षा दी। इस प्रकार असीम प्रेम से उन्होंने हमें अपना बना लिया।

अमरकंटक शक्तिपीठ तुझे ही बनाना है

(श्री लक्ष्मण अग्रवाल जी बिलासपुर, छत्तीसगढ़ के सक्रिय कार्यकर्ता हैं। वे1959 में पूज्य गुरुदेव से जुड़े।)

बात सन् 1979 की है। पूज्य गुरुदेव ने चौबीस तीर्थों में चौबीस गायत्री शक्ति पीठ बनाने का संकल्प ले लिया था। जिम्मेदारी देने हेतु परिजनों के मजबूत कन्धे ढूँढ़े जा रहे थे। इन्हीं दिनों की याद करते हुए श्री अग्रवाल जी कहते हैं-''मुझे एक दिन दोपहर बारह बजे एक टेलिग्राम मिला। टेलिग्राम हरिद्वार से था। जिसमें लिखा था कि फौरन हरिद्वार चले आओ। उसी दिन डेढ़-दो बजे के लगभग श्री शिवप्रसाद मिश्रा जी भी हरिद्वार से पहुँचे और कहा- ''गुरुजी ने आपको तत्काल बुलाया है।'' मैं आश्चर्य में पड़ गया। सोचने लगा, ''ऐसी क्या बात हो गई? टेलीग्राम भी आया व मिश्रा जी भी कह रहे हैं।'' चर्चा के दौरान मिश्रा जी ने बताया कि शायद गुरुजी आपसे अमरकंटक में शक्तिपीठ बनाने हेतु चर्चा करें। उन्होंने कहा है, ''अमरकंटक हेतु अग्रवाल जी को बुला लो, बात समझ में आई।''

अपना सौभाग्य मान कर हम दम्पत्ति, मिश्रा जी के साथ ही रवाना हो गये। गुरुदेव तो जैसे इंतजार में ही थे। पहुँचते ही कहा-''बेटा! तुझे ही देख रहा था। देख, मैंने देश के चौबीस तीर्थों में चौबीस गायत्री शक्तिपीठ बनाने का निर्णय लिया है। अमरकंटक की शक्तिपीठ तू बना ले।'' अग्रवाल जी कुछ

क्षण मौन रहे। फिर बोले-''गुरुजी, अमरकंटक बिलासपुर से दो ढाई सौ किलोमीटर दूर पड़ता है। मुझसे अकेले बनाना तो संभव नहीं है।'' पूज्यवर ने पुनः कहा-''देख बेटा! अमरकंटक शक्तिपीठ बनाना तो तुझे ही है। तेरी सहायता हम करेंगे।'' अग्रवाल जी ने फिर कहा- ''गुरुजी! अमरकंटक में भवन निर्माण की सभी सामग्री नीचे पेन्ड्रा से ले जानी पड़ेगी। यहाँ तक कि वहाँ रेत भी नीचे से ही जाती है। हाँ, मैं अपनी ओर से पचास हजार रुपये लगा सकता हूँ।'' इतना सुनना था कि गुरुदेव बहुत खुश हुए। उन्होंने कहा-''बेटा! पचास हजार में तो तुझे कहीं और जगह जाने की जरूरत ही नहीं है। शक्तिपीठ तू ही बनायेगा। आ, मैं तेरा तिलक करता हूँ।'' और गुरुजी ने श्री अग्रवाल जी का तिलक कर सौ-सौ के दस नोट प्रतीक स्वरूप प्रदान किए। भारी जिम्मेदारी के साथ गुरुदेव के प्रति दृढ़ विश्वास लिये नीचे उतरे। सोचा जिम्मेदारी दी है तो निभायेंगे भी वही, यह अटल विश्वास था। गुरुदेव द्वारा दिया गया वह नोट श्री अग्रवाल जी कहते हैं-''मैं अभी तक सँभालकर रखा हूँ।'' और अमरकंटक का भव्य शक्तिपीठ उन्हीं के द्वारा बनाया गया। ❁

श्री अग्रवालजी बताते हैं, ''सन् 82 में शक्तिपीठ उद्घाटन दौरे पर मैं भी जब गुरुवर के साथ चला, तब मन में जो भी प्रश्न उभरते, समाधान उनसे प्राप्त कर लेता। मेरी जिज्ञासा उन्हें भी अच्छी लगती, वे न केवल उत्तर देते, बल्कि विस्तार से समझाते भी।

मैंने पूछा- ''गुरुदेव, कहा जाता है कि जूठन छोड़ना पाप है, फिर भी बहुत लोग जूठन छोड़ते हैं? ऐसा क्यों?''

गुरुजी ने कहा, ''बेटा! आजकल, अन्न हम पैसे से खरीदते हैं। इसलिये लोग उसकी तुलना पैसे से करते हैं। जूठन छोड़ देते हैं और उसे फेंक देते हैं। किन्तु यह वास्तविकता नहीं है। पैसे से अन्न, खरीदा नहीं जा सकता। अन्न धरती माता अपनी छाती चीर कर देती है। कोई उसका अपमान करता है, तो धरती माँ दुःखी होती है और दूसरे जन्म में उसे अन्न के लिये तरसाती है।''

फिर मैंने दूसरा प्रश्न पूछा, ''गुरुदेव वकालत करने वाले वकील झूठ-सच बोलकर सही को गलत और गलत को सही ठहरा देते हैं। यह उनका पेशा है। क्या उन्हें पाप नहीं पड़ता?''

इतने में एक कुत्ता लंगड़ाता हुआ बीच सड़क में कहीं से आ गया। गुरुदेव बोले, ''देख बेटा, यह कुत्ता पूर्व जन्म में वकील था। अब अपने झूठ सच का हिसाब चुकता कर रहा है। जिसका गलत किया वह पीट रहा है। अपना भोग तो हर व्यक्ति को भोगना ही पड़ता है। अन्यथा कोई सत्कर्म ही क्यों करता?''

मैं मिशन का काम तो करता था पर आशानुकूल सफलता नहीं मिलती थी, सो मैंने गुरुजी से पूछा, ''गुरुदेव, मैंने बहुत प्रयत्न किया किन्तु फिर भी अपने किसी परिजन को गायत्री परिवार का न बना सका।''

गुरुजी बोले, ''बेटा, इससे तू क्यों दुखी होता है? इस सब की प्राप्ति के लिये भी प्रारब्ध चाहिए। यह भी हर किसी के भाग्य में नहीं होता। राम-रावण युद्ध के बाद दोनों सेनाओं के बीच अमृत वर्षा हुई थी। वानर-भालू जी उठे, राक्षस नहीं, क्योंकि वे चित्त पड़े थे। अर्थात् वानर, भालू विवेक पूर्ण बातें सुनते थे। उन्होंने विवेक का साथ दिया। दूसरा पक्ष अंध वादी था अत: केवल अपने स्वामी की आज्ञा का पालन किया। भले ही वह गलत था। तुलसी ने तभी तो कहा है-

अमृत वृष्टि भई दुहुँ दल ऊपर।
जिये भालु-कपि नहि रजनीचर॥

इसलिये तू अपना काम करके अपना कर्तव्य पूर्ण कर। तू दूसरों को अच्छाई ग्रहण करने कहेगा तो तुझे स्वयं तो अच्छाई अपनानी ही पड़ेगी। इस प्रकार कम से कम तू तो सुधरा रहेगा। अन्यथा तू भी दूसरों के समान बन जायेगा। इसलिये दुखी मत हो। अपना काम, साहित्य प्रचार कर। बेटे, आज सब लोग जन-शक्ति, धन-शक्ति तो अर्जित करते हैं, किन्तु आध्यात्मिक शक्ति अर्जित नहीं करते, न ही उसका महत्त्व जानते हैं। यदि महत्त्व जानते तो उसे अर्जित करने का प्रयत्न करते।''

9. लाखों का जीवन बदला

भगवान् बुद्ध के समय में एक प्रसंग आता है कि अंगुलीमाल से जब उनकी भेंट हुई तो अंगुलीमाल के जीवन में परिवर्तन आ गया, वह डाकू से भिक्षुक बन गया। आम्रपाली जब उनके सम्पर्क में आई तो वह भी अपना सर्वस्व समर्पित कर साधिका बन गयी। ऐसे ही प्रसंग पूज्य गुरुदेव के सम्पर्क में आने पर अनेकों लोगों के साथ घटित हुए हैं।

पूज्य गुरुदेव का सान्निध्य पाकर, मार्गदर्शन पाकर, उनका साहित्य पढ़कर लोगों की मान्यताओं तक में परिवर्तन आया, जिसमें सबसे बड़ा परिवर्तन नारी समाज के प्रति जो संकीर्ण दृष्टिकोण था, उसमें आया। लोगों ने अपने घर की बहु-बेटियों को न केवल गायत्री उपासना का अधिकार ही दिया, बल्कि उन्हें मिशन के कार्य के लिए घर से बाहर निकलने की अनुमति भी दी। इसके साथ ही नारी समाज के प्रति आदर, सहयोग और सम्मान का भाव भी बढ़ा। लाखों-करोड़ों परिवारों में नारी समाज को श्रेष्ठ जीवन जीने का अवसर मिला, जो अपने आपमें एक बहुत बड़ी क्रान्ति है।

जो भी गुरुदेव के सम्पर्क में आया, उसके चिन्तन, चरित्र एवं व्यवहार में असाधारण परिवर्तन आता चला गया। परिजनों ने शराब, माँस आदि दुर्व्यसन एवं अन्य अनेकों दुर्गुणों को छोड़कर श्रेष्ठ जीवन जीने का संकल्प लिया। उनके जीवन में आये परिवर्तन को देखकर नाते-रिश्तेदार तक दाँतों तले अँगुली दबाकर रह गये कि इनके जीवन में इतना सुधार कैसे आ गया, ये तो चमत्कार ही हो गया।

श्री शिव प्रसाद मिश्रा जी, शान्तिकुञ्ज

शान्तिकुञ्ज आ जाने पर मेरी ड्यूटी प्रतीक्षालय में लोगों को गुरुजी-माताजी से मिलाने में लगी। प्राण प्रत्यावर्तन शिविरों के समय लोग अपने दोष-दुर्गुण नि:संकोच गुरुजी के सामने प्रकट करते थे, कोई-कोई लिखकर भी देते थे। किसी बहुत बड़ी गलती पर पहले वे नाराज होते, फिर बड़े वैज्ञानिक ढंग से

प्रायश्चित भी बताते थे। जैसे जितना बड़ा गड्ढा खोदा है, उतनी ही मिट्टी लाकर भरना होगा। जितना किसी को नुकसान पहुँचाया है, शारीरिक, मानसिक या नैतिक, उससे अधिक लाभ पहुँचाना होगा।

एक बार रामसुभाग सिंह नाम का एक व्यक्ति उनके पास आया। वह वैगन ब्रेकर के नाम से प्रसिद्ध था, अर्थात् रेल के वैगन ही लूट कर ले जाता था। वह अपनी कमर में हमेशा दो पिस्तौल रखता था। गुरुजी से मिलने के बाद उसने हावड़ा में 108 कुण्डीय यज्ञ कराया तथा कितने ही अखण्ड ज्योति के सदस्य केवल धौंस के बलबूते पर बनाये। उसने डाका डालना छोड़ दिया और सुधर गया।

गुरुजी के पास जब आता तो कहता, ''गुरुजी मैं आपसे क्या कहूँ, आप तो सब जानते हैं।'' तब गुरुजी कहते कि मैं यदि तेरे अंदर देखूँगा तो मुझे बहुत कुछ दिख जायेगा, इसलिये तू वही बता जिसका समाधान तू चाहता है।

उठ! मेरे साथ चल

श्री देवी सिंह तोमर, शान्तिकुञ्ज

तोमर जी बताया करते थे कि कैसे उनके जीवन में गुरुजी के केवल एक प्रवचन से ही आमूल-चूल परिवर्तन आ गया। वे बताते थे कि ''मैं टैलीफोन विभाग में सुपरवाईजर था। मैं खूब माँस खाता था व शराब पीता था। एक दिन गाायत्री परिवार के कुछ लोग आये व मुझसे कहा कि गुरुजी आने वाले हैं। राजासाहब का एक महल राजगढ़ में शक्तिपीठ के लिये मिल गया है, उसको ठीक करने व सजाने के लिये हम चंदा इकट्ठा कर रहे हैं। गायत्री परिवार और गुरुजी से मैं परिचित था। मैंने उन्हें 1500 रुपये दिये। उन्होंने मुझे कार्यक्रम में बुलाया। मैंने कह दिया कि मैं शराब पीकर ही आऊँगा और सचमुच मैं शराब पीकर ही गया। मैंने गुरुजी का भाषण सुना। गुरुजी ने कहा, ''जो शराब पीता है वह अपना चरित्र सुरक्षित नहीं रख सकता। उसके लिये आत्मीयता, प्रेम, उत्तरदायित्व और परिवार कोई मायने नहीं रखते।'' मेरा दिमाग ठनका। मैं सामने ही बैठा था। गुरुजी फिर बोले, ''जो माँस खाते हैं, वे मुर्दा खाते हैं, क्योंकि जब उसे काटा जाता है तो उसके टुकड़े बिलखते हैं और उस दर्द चीत्कार के हार्मोन्स उसमें मिले होते हैं और मुर्दा तो वह हो ही जाता है।'' फिर तो मुझे ऐसा लगा कि आज मैंने जो माँस खाया है, शराब पी है,

उसको उँगली डालकर उल्टी कर दूँ। उसके बाद मैंने कभी माँस और शराब को नहीं छुआ। जब मैं रिटायर हो गया तो एक रात दो बजे नींद में गुरुजी ने मुझे एक थप्पड़ मारा और कहा ''उठ! मेरे साथ चल।'' मैंने पत्नी को जगाया और कहा, ''अब अपन शान्तिकुञ्ज चलते हैं और फिर हम लोग शान्तिकुञ्ज आ गये।''

जोरा सिंह का जीवन बदला

खीरी लखीमपुर जिले के श्री जोरा सिंह कभी एक प्रसिद्ध डाकू थे। खूब नशे आदि का सेवन भी करते थे। उनके गाँव में गायत्री परिवार द्वारा एक महायज्ञ सम्पन्न होना था। उनकी पत्नी ने परिजनों से निवेदन किया, कि मेरे पति की शराब आदि छुड़वा दो, तो बहुत कृपा होगी। परिजनों ने उन्हें यज्ञ में आने हेतु भावभरा निमंत्रण दिया व सपरिवार यज्ञ में आने का अनुरोध किया।

जब वे पत्नी सहित यज्ञ में बैठे, तो उनसे बहिनों ने कहा- ''आपसे एक देव दक्षिणा माँग रहे हैं। कोई एक बुराई छोड़ दीजिये।'' उन बहिनों ने आग्रह किया तो उन्होंने उस यज्ञ में शराब छोड़ने का संकल्प ले लिया।

बस एक छोटे से व्रत से उनका जीवन ही बदलता चला गया। धीरे-धीरे उन्होंने सभी दुर्गुण छोड़ दिये। आज वे एक सरपंच की भूमिका निभाते हुए गाँव वालों की नि:स्वार्थ भाव से सेवा करते रहते हैं। उनकी पत्नी मिशन की बहुत समर्पित कार्यकर्ता हैं।

वाड़िया बापू - डाकू से सन्त

बरवाड़ा बावीसी गाँव के रहने वाले वाड़िया बापू इतने खूँखार डाकू थे कि पूरे सौराष्ट्र में उनका आतंक छाया हुआ था। उनके गाँव में गायत्री परिवार का कार्यक्रम होने वाला था। कार्यकर्तागण कार्यक्रम के लिए चन्दा माँगने डरते-डरते उनके घर पहुँचे। उन्होंने हड़काकर सबको भगा दिया। वे नशे में धुत्त पड़े रहते थे। माँस, मदिरा आदि सभी दुर्गुण उनके अंदर थे। कार्यकत्ता एक छोटी सी पुस्तिका उनके घर में छोड़ आये।

अगले दिन वह पुस्तिका जब उन्होंने पढ़ी तो उन विचारों से बड़े प्रभावित हुए। उन्होंने कार्यकर्त्ताओं के पास जाकर उनसे पूज्यवर की कुछ पुस्तकें ले लीं। उन्हें जब गहराई से पढ़ने लगे, तो उनके विचारों में बड़ा बदलाव आने लगा। पूज्य गुरुदेव के सौराष्ट्र दौरे में जब वे उनके सम्पर्क में आये, तो पूरा जीवन ही बदल गया।

उन्होंने शराब, माँस आदि सब दुर्गुण छोड़ दिये, और अपना जीवन पूज्यवर का कार्य करते हुए बिताने का संकल्प लिया। आज वे अपने क्षेत्र में एक समर्पित एवं प्रतिष्ठित कार्यकर्ता के रूप में जाने जाते हैं। सभी उन्हें संत कहते हैं।

पूरा परिवार बदल गया

इन्दौर के डॉ. आनंद ढींगरा बताते हैं कि शान्तिकुञ्ज आने और माताजी से मिलने के पहले तक मेरा जीवन दिशाहीन था। मैं बिल्कुल निराश, हताश था। हमारे घर में भी नरक जैसा वातावरण था। आये दिन माता-पिता के बीच लड़ाई-झगड़ा, कलह-क्लेश होता ही रहता था। माँ ने कई बार आत्महत्या का प्रयास भी किया था। हम भाई-बहन सदा इसी टेन्शन में रहते कि कहीं दोनों में से किसी एक को खोना न पड़े। मेरा स्वास्थ भी ठीक नहीं रहता था। मुझे भूख बिलकुल नहीं लगती थी। मेरी हालत यह थी कि मुझे दिन भी में आधी रोटी पचाना भी मुश्किल पड़ता था। मैं बहुत कमजोर हो गया था। मुझे लगता था मैं शायद 6 महीने और जी पाऊँगा। इस सबका असर मेरी पढ़ाई पर भी पड़ा था।

सन् 1991 में मुझे कहीं से अखण्ड ज्योति मिली। उसे पढ़कर मुझे लगा कि अभी उम्मीद जगाई जा सकती है। जून 1991 में मैं एक माह के लिये शान्तिकुञ्ज आया। यहीं से मेरे जीवन में नया मोड़ आया। मुझे लगाा इससे अच्छी और कोई जगह नहीं हो सकती। मैं यहीं रह जाना चाहता था। माताजी से मिला, मैंने कहा, ''माताजी, मैं यहीं आना चाहता हूँ। मुझे यहाँ बहुत अच्छा लग रहा है। मेरा यहीं काम करने का मन है।'' माताजी ने कहा, ''अभी मत आओ। पहले पढ़-लिख कर कुछ बन जाओ। तब तुम हमारे ज्यादा काम के हो जाओगे।'' माताजी के इन शब्दों ने मेरे जीवन में आशीर्वाद से भी बढ़कर काम किया।

मेरा पूरा जीवन ही बदल गया। धीरे-धीरे घर में पूर्ण शांति हो गई। अगले वर्ष 12वीं कक्षा में मैंने अपने शहर में टॉप किया। मैं माता-पिता को शान्तिकुञ्ज लेकर आया। उनके जीवन में इतना परिवर्तन आया कि आज मेरे पिता जी प्रतिदिन 8-10 घण्टे मिशन का ही काम करते हैं। मेरा घर नरक से स्वर्ग बन गया। आज मैं एक प्रतिष्ठित डॉक्टर हूँ। मेरा पूरा परिवार गुरुदेव का ऋणी है। उनके अनुदानों का ऋण तो हम सर्वस्व न्यौछावर करके भी नहीं चुका सकते।

बेटे, क्या छोड़ा ?

श्री लक्ष्मण प्रसाद अग्रवाल, बिलासपुर (छत्तीसगढ़)

सन् 59 में पहली बार बिलासपुर छ.ग. में 51 कुण्डीय यज्ञ की घोषणा हुई। श्री छाजू लाल शर्मा वैद्यनाथ वाले मेरे यहाँ अनुदान लेने आए। श्रद्धापूर्वक एक सौ एक रु० दिया। रसीद देकर उन्होंने कहा, ''पीला कुर्ता पहन कर यज्ञ में भाग जरूर लेना और इसके लिये कुछ गायत्री मंत्र लेखन कर लें।'' जानकारी पाकर मैंने चौबीस सौ मंत्र लिखे, यज्ञ में भाग लिया, अच्छा लगा, श्रद्धा बढ़ती गई। एक दिन माँ से पूछा, ''माँ जीवन में गुरु बनाना आवश्यक होता है क्या ?'' माँ ने कहा, ''हाँ बेटे, शास्त्रों में कहा गया है कि बिना गुरु बनाये कोई भी पुण्य कार्य करने पर वे फलदायी नहीं होते।'' उसी दिन मैंने मन में ठाना कि मैं आचार्य जी को गुरु बनाऊँगा और सन् 70 के यज्ञ में गुरुदीक्षा ले ली पर किसी को बताया नहीं।

दुर्व्यसन छोड़ने की बात जब गुरुदक्षिणा में कही गई तब मैंने संकल्प लिया। गुरुजी ने पूछा, ''बेटे, क्या छोड़ा ?'' मैंने जवाब दिया, ''सिगरेट व तम्बाकू।'' इसके तत्काल बाद गुरुदेव ने 'एवमस्तु' कहा। मैं चुप रहा, क्योंकि मुझे लगता था यह छूट नहीं सकता। इस लत को छोड़ने के लिये मैंने डाक्टरों की मदद भी ली थी, पर सफलता नहीं मिली थी।

गुरुदेव के पास से लौटने के बाद न जाने क्या हुआ मैं तम्बाकू खा ही नहीं सका और मुझे लगने लगा जैसे सिगरेट में कोई टेस्ट ही नहीं रह गया है। अत: चमत्कारिक ढंग से दोनों ही छूट गये। मुझे आश्चर्य हुआ व गुरुदेव के प्रति मेरी श्रद्धा निरन्तर बढ़ती रही।

एक नए जीवन का प्रारम्भ

राजेश अग्रवाल, कुरुक्षेत्र

सन् 1991 में मैं जब शान्तिकुञ्ज आया तब मेरा स्वास्थ्य बहुत खराब रहता था। सुल्तानपुर इंजिनियरिंग कॉलेज में पढ़ते हुए छात्रावास के दूषित वातावरण में व गलत संगति के कारण मुझमें अनेक बुराइयाँ जन्म लेने लगी। मेरा शारीरिक व मानसिक संतुलन बिगड़ गया। चिकित्सकों को दिखाया तो नींद की गोलियाँ साल भर तक खाईं। उससे क्षणिक आराम तो मिला, परंतु 24 घंटों में 16 घंटे नींद आती रहती। किसी तरह गिरते-पड़ते इंजिनियरिंग पूरी की

और आर. ई. सी. कुरुक्षेत्र में प्रवक्ता के पद पर नौकरी मिली। सौभाग्य से उसी समय मैं शान्तिकुञ्ज गुरुदेव के साहित्य से जुड़ा। एक दिन रात्रि को मुझे विचित्र स्वप्न दिखाई दिया। एक तीव्र प्रकाश मेरे कमरे में उभरा फिर उसमें परम पूज्य गुरुदेव प्रकट हुए और मुझसे कहने लगे, ''तुम्हें मेरी योजना के क्रियान्वन में महत्वपूर्ण भूमिका निभानी है।'' मैंने उनसे कहा, ''मैं तो कुछ नहीं कर सकता, अपने स्वास्थ्य से लाचार हूँ।'' गुरुदेव बोले, ''उसकी चिंता मत करो। समय के साथ-साथ सब ठीक हो जाएगा।'' यह कहकर गुरुदेव चले गए। तुरंत मेरी नींद खुल गई। मैं उस समय अपने अंदर बहुत शक्ति व ताजगी महसूस कर रहा था। मैंने घड़ी देखी तो दो बजकर तीन मिनट हुए थे। उस दिन के बाद मुझे फिर कभी नींद की दवा खाने की आवश्यकता नहीं पड़ी और मेरा अधिकतर समय गुरुदेव का साहित्य पढ़ने एवं गुरुदेव का कार्य करने में बीतने लगा। अब मेरा गलत चिंतन धीरे-धीरे समाप्त होने लगा और दिव्यता, पवित्रता, गुरुभक्ति के अंकुर मुझमें फूटने लगे। इसी के साथ मेरी बीमारी समाप्त हो गई। ब्रह्मचर्य के प्रति अगाध श्रद्धा मेरे मन में उभरी। मुझे लगने लगा जैसे मुझसे अधिक प्रसन्न व सुखी व्यक्ति शायद ही इस दुनियाँ में कोई दूसरा हो। यदि गुरुदेव से न जुड़ा होता तो नींद की दवा खा-खाकर अब तक मात्र 25 वर्ष की उम्र में ही परलोक सिधार गया होता। अब जीवन में यही इच्छा है कि गुरुदेव के विचारों को अधिक से अधिक विद्यार्थियों, लोगों तक पहुँचा दिया जाए ताकि अज्ञानता के कारण मेरी जैसी दुर्गति किसी और की न हो।

सीतापुर की सीता आज आपके सामने है

उत्तर प्रदेश, सीतापुर की एक कार्यकर्ता सीता बहन, जब एक मासीय युग शिल्पी सत्र कर रही थीं तो कक्षा के दौरान नारी जागरण विषय पर चर्चा चल रही थी। किसी प्रसंग पर वह बहुत भावुक हो गईं और कहने लगीं बहन जी आज हमें अपने बारे में बताने का मन है। उन्होंने बताया कि मेरे पति मुझे बहुत परेशान करते थे। शराब, गाँजा, जुआ, वेश्यागमन आदि सभी दुर्गुण उनमें थे। मेरे साथ आये दिन मारपीट करना आम बात थी। मैं घर में कैदियों के जैसे रहती थी।

एक बार मैं कुछ बहनों के साथ शान्तिकुञ्ज आई। माताजी को अपनी व्यथा बताई। माताजी ने मुझे भस्मी दी और कहा, ''बेटी, नियमित साधना

करती रहना और चुटकी भर भस्मी को पति के भोजन अथवा जल में मिलाकर प्रार्थना करके कि इनके सब दुर्गुण दूर हों, प्रतिदिन देना।'' मैंने वैसा ही किया। नियम से अपने घर में बलिवैश्व यज्ञ करती और गुरुजी माताजी का ध्यान करते हुए, मंत्र जप करते हुए ही भोजन बनाती, उसमें चुटकी भर भस्मी भी डाल देती। माताजी के आशीर्वाद से मेरे पति में इतना सुधार आया कि उन्होंने सारे दुर्व्यसन छोड़ दिये। वे भी मेरे साथ उपासना-साधना करने लगे। पहले वे मुझे घर से बाहर नहीं निकलने देते थे अब वही मुझे गुरुदेव के कार्यों के लिये प्रेरित करने लगे।

सीता बहन की आँखों से आँसू बह रहे थे। उनकी हिचकी बँध गई। फिर थोड़ी देर बाद वो बोलीं, ''कहाँ जिस सीता को घर से एक कदम बाहर रखने की इजाजत नहीं मिलती थी, वहीं वह सीतापुर की सीता आज आपके सामने, एक माह से शान्तिकुञ्ज में है। देखिये माताजी के आशीर्वाद का कमाल। मेरा घर स्वर्ग बन गया। मेरे पति ने स्वयं ही मुझे एक मासीय सत्र के लिये शान्तिकुञ्ज भेजा है।'' ऐसे हजारों प्रसंग हैं जो हमें अक्सर ही सुनने को मिलते हैं। न केवल गुरुजी-माताजी के आशीर्वाद में बल्कि उनके साहित्य में भी वैसी ही शक्ति है कि जीवन बदल गया। उनके विचारों को एक बार जिसने आत्मसात् कर लिया उसका तो कायाकल्प ही हो गया।

माताजी ने स्वप्न में व्यसन छुड़ाये

सीताराम ग्रोवर मोदीनगर (यू.पी.)

मैं बहुत ही शराब पीता था। बड़ी विस्फोटक स्थिति थी मेरी। एक रात मैंने स्वप्न में माताजी के दर्शन किये। तब तक मैं माताजी से कभी मिला नहीं था। माताजी ने दर्शन दिया और मुझे शराब न पीने के लिए कहा और हरिद्वार आने का निर्देश दिया। सौभाग्य से कुछ दिन बाद मैं पत्नी सहित हरिद्वार आया और शान्तिकुञ्ज पहुँचा। वहाँ जब मैंने माताजी के दर्शन किए तो सबकुछ बिल्कुल वैसा ही पाया जैसा मुझे सपने में दिखाई दिया था। मैं देखकर हैरान रह गया। उस दिन से मैंने शराब पीना छोड़ दिया। अब बहुत खुश हूँ।

10. बच्चो! हम सदा तुम्हारे साथ रहेंगे

पूज्य गुरुदेव बार-बार कहते थे, ''बेटा, इस बार हम बहुत बड़ी नाव लेकर आये हैं। तुम सब लोगों को उसमें बिठाकर पार लगा देंगे। बस तुम लोग उसमें से उतरना नहीं। तुमको कुछ नहीं करना है, केवल हमारा काम करना है। हमारा मार्गदर्शन व संरक्षण तुम्हें सतत् मिलता रहेगा। तुम हमारा काम करो, हम तुम्हारा काम करेंगे। लाखों परिजनों ने पूज्य गुरुदेव के इस संरक्षण का अहसास किया है।''

गाड़ी रोको, बच्चे छूट गये हैं

श्रीमती सावित्री गुप्ता, शान्तिकुञ्ज

एक बार मैं, श्री रामस्वरूप अग्रवाल गंगानगर, राजस्थान वाले के साथ अपनी बेटी के घर इन्दौर जा रही थी। श्री अग्रवाल जी तब सावित्री ब्लाक शांतिकुंज में निवास करते थे।

गाजियाबाद स्टेशन आया तो मैंने उसे दिल्ली समझा व पानी लेने ट्रेन से उतर गई, दो बॉटल पानी भरा इतने में गाड़ी चल दी। मैं दौड़ी, बाटल कन्धे पर थी। मैंने ट्रेन का डंडा पकड़ लिया, किन्तु भीड़ के मारे पैर पायदान तक न पहुँच सका सो मैं लटकी हुई कुछ दूर तक गई। बाद में मेरे हाथ से डंडा भी छूट गया सो चलती ट्रेन से गिर पड़ी। इस समय गाड़ी धीमे ही चल रही थी। फिर भी मैं जैसे ही गिरी जाने कहाँ से दो लड़के आये। कहा-''माताजी चोट तो नहीं लगी।'' और जोर से गार्ड को चिल्लाये, गाड़ी रोको बच्चे छूट गये हैं। गार्ड ने हड़बड़ा कर देखा, पूछा ''कहाँ हैं बच्चे?'' और गाड़ी रोक दी।

इस बीच उन लड़कों ने मुझे उठाया और हाथ पकड़कर अपने साथ ले गये तथा सबसे पीछे गार्ड के डिब्बे में लगभग उठाते हुए चढ़ा दिया। चूंकि चलती ट्रेन से गिरी थी सो चोट तो थी ही। जैसे ही बैठी, गार्ड ने प्रश्नों की झड़ी

लगा दी। मैंने इशारे से कहा–''कृपया मुझे साँस लेने दें, मैं सब बताती हूँ।'' चढ़कर तुरन्त बच्चों को धन्यवाद देने हेतु पलटकर देखा तो वहाँ कोई नहीं था। थोड़ी देर बाद शान्त होकर मैंने गार्ड से सब हाल बताया। दूसरे स्टेशन पर जब गाड़ी रुकी तो गार्ड ने मुझे अपने साथियों के पास पहुँचा दिया। वे भी बहुत परेशान हो रहे थे। जब इन्दौर से वापस आई तब गुरुदेव ने कहा, ''तू खूब परेशान किया कर। देख के नहीं उतरा जाता क्या? समय देखकर ही उतरा-चढ़ा करो बेटा।''

मुझे लगा मैंने पत्र तो डाला नहीं पर पूज्यवर को कैसे मालूम? मुझे लगा निश्चित ही वे दो लड़के पूज्यवर के अंश होंगे। जिन्होंने मुझे हाथ पकड़ कर गार्ड के डिब्बे पर चढ़ाया था। तभी तुरन्त पलट कर देखने पर भी वे दृष्टि से ओझल हो गये थे। गुरुदेव का ऐसा संरक्षण पाकर मैं कृतकृत्य थी।

दुबई में करेन्ट से बचाया

चेन्नई की **शोभना बहिन** बड़ी श्रद्धा भावना के साथ पूज्य गुरुदेव से, गायत्री परिवार से जुड़ी थी। उनके पति गायत्री परिवार से नहीं जुड़े थे। वे दुबई में किसी कम्पनी में काम करते थे। वहाँ उन्हें एक दिन तैंतीस हजार वोल्टेज का करेण्ट लगा। बिजली तुरंत पाँव को चीरती हुई जमीन में धँस गयी। पाँव में बड़ा छेद हो गया था। तुरंत अस्पताल ले जाकर उपचार प्रारम्भ हुआ। प्रत्यक्षदर्शी हतप्रभ थे। ये करेण्ट तो कुछ सेकण्डों में जान ले लेता है। पर उनके जीवन पर आया संकट टल गया था। उनके सभी मित्र उन्हें देखने आते और कहते, ''आपके पीछे कोई बहुत बड़ी शक्ति है, जिसने आपको बचा लिया है।'' वे बोले, ''मैं तो कुछ करता नहीं हूँ, पर मेरी पत्नी गायत्री परिवार से जुड़ी है, वह कुछ न कुछ करती रहती है। निश्चय ही उनके गुरुजी ने मुझे बचा लिया है।''

ज्ञातव्य है कि तत्पश्चात् शोभना बहिन ने पूज्यवर की दो पुस्तकें ''माई विल एण्ड हैरीटेज''(वर्तमान में My life and its legacy) एवं ''सुपर साइन्स ऑफ गायत्री'' का तमिल भाषा में अनुवाद कर अपने पैसों से छपवाया। उन पुस्तकों को जिनने भी गहराई से पढ़ा, वे खोजते हुए उनके घर आने लगे, और पूज्य गुरुदेव एवं गायत्री परिवार के बारे में उनसे जानकारी लेकर युग निर्माण योजना के सदस्य बनते चले गये।

बिना बताये घर से क्यों चला आया

श्री श्रीकृष्ण अग्रवाल, शान्तिकुञ्ज

एक बार मैं शक्कर का कोटा लेने महासमुन्द आया हुआ था। जब भी मैं महासमुन्द आता तो ज्वालाप्रसाद जी से जरूर मिलता था। उस दिन उनसे मिला तो उन्होंने कहा, मैं कल शान्तिकुञ्ज जा रहा हूँ चलना हो तो तुम भी चलो। मैंने कहा, ''ज्वाला जी, न तो मैंने घर में बताया है, न कपड़े लाया हूँ। दुकान के लिये शक्कर उठाने आया हूँ। अभी मैं कैसे जा सकता हूँ?''

ज्वाला जी ने कहा, ''जाना है तो बहाना मत मारो। कपड़े मेरे पहन लेना, घर में खबर, मैं किसी के द्वारा करवा दूँगा। शक्कर हेतु लाया पैसा तुम्हारे पास है ही।'' बात मुझे भी जँच गई। गुरुजी जिसे बुलाना चाहें उसका इन्तजाम भी करते हैं। इतने में, बागबाहरा वाले श्री नरेन्द्र सिंह आ गये। बात बन गई। घर के लिये चिट्ठी दे दी। बाकी व्यवस्था थी ही, दो दिन बाद हरिद्वार पहुँचे।

श्री नरेन्द्र जी घर पर चिट्ठी देना भूल गये। पत्नी का रो-रो कर बुरा हाल था। कहाँ चले गये? क्या बात हुई? कोई संदेश नहीं? उनके देवर चिढ़ाने लगे, ''भाभी! भैय्या तो बाबा जी बन गये। चिमटा पकड़ लिया। घर-घर घूमेंगे, बस आप तो रोती रहो।'' माँ ने बच्चों को डाँटा, ''क्यों भाभी को रुलाते हो?'' बहू को सांत्वना देती रहीं पर स्वयं भी परेशान थीं। घर में स्थिति बड़ी दयनीय थी।

इधर जब हम शान्तिकुञ्ज पहुँचकर ऊपर गुरुजी के पास पहुँचे तो पहुँचते ही उन्होंने डाँट लगाई, ''बेटा! बिना बताये घर से क्यों चला आया? इस प्रकार तुझे नहीं आना चाहिए। तू नहीं जानता, मुझे कितनी तकलीफ हुई।'' मैं आश्चर्य में पड़ गया। मैंने कहा, ''गुरुजी, मैंने तो खबर भिजवा दी है। नरेन्द्र सिंह को चिट्ठी दी है।'' ''बेटा! उसने चिट्ठी नहीं दी। घर में खबर नहीं पहुँची है। तू आइन्दा, ऐसा काम कभी मत करना।'' मैं चुप हो गया। गुरुजी कैसे जान गये कि घर में खबर नहीं पहुँची? नरेन्द्र सिंह ने चिट्ठी नहीं दी? उन्हें तकलीफ हुई! आदि बातें मेरे मन को मथने लगीं। इधर घर आने पर पता चला कि नरेन्द्र सिंह जी को चौथे दिन चिट्ठी की बात याद आई और घर जाकर कहा- ''भाभी! मुझसे गलती हो गई। भैया चार दिन पहले चिट्ठी दिये थे। मैं भूल गया। वे हरिद्वार गये हैं।''

यह वही समय था जब चौथे दिन हमारी गुरुजी से बात हो रही थी। मुझे महसूस हुआ कि गुरुदेव सर्वज्ञ हैं। उनकी नजर हर तरफ रहती है।

ऑपरेशन सफल बनाया

नवाबगंज, बरेली के कपड़ा व्यवसायी श्री कपूर जी, गायत्री परिवार के पुराने सदस्य थे। एक बार उन्हें फेफड़ों में काफी तकलीफ हुई। उन्हें अस्पताल में भरती कराया गया। डॉक्टरों ने एक्सरे आदि लिया, तो देखा कि स्थिति बहुत खराब है। तत्काल ऑपरेशन करना होगा। जब डॉक्टरों ने ऑपरेशन करना शुरू किया तो अन्दर की हालत देखकर उन्होंने हाथ ऊपर उठा दिये। कहा कि फेफड़े बहुत गल गये हैं, ऑपरेशन भी नहीं हो पायेगा। उनकी पत्नी का पूज्यवर के ऊपर विश्वास बहुत प्रबल था। उन्होंने हिम्मत बनाये रखी। बिल्कुल भी घबरायीं नहीं और पूज्यवर से प्रार्थना करती रहीं। ।

उधर, ओ. टी. में, क्योंकि शरीर खुल चुका था। अत: बाहर भेजना भी संभव नहीं था। एक डॉक्टर ने थोड़ी हिम्मत की व कहा कि हम लोग प्रयास करते हैं, संभव है, सफलता मिल ही जाये। उन्होंने पूरी सावधानी के साथ कई घण्टे लगाकर ऑपरेशन किया। सबने महसूस किया कि एक अदृश्य शक्ति सहायता करती रही। उन्हें ऑपरेशन में पूरी सफलता मिली। रोगी की जान का खतरा खतम हुआ। सभी घर वाले ऐसा ही मानते हैं कि पूज्यवर ने ही उन्हें बचाया। उस ऑपरेशन के बाद कई वर्षों तक वे जीवित रहे व पूज्यवर का कार्य करते रहे।

दिव्यसत्ता का स्मरण

रामबाबू शर्मा, इंदौर

सन् 1975 के दीक्षा समारोह की विदाई के सुअवसर पर कहे गये शब्द–''बेटा, तू मेरा काम करना, तेरे सब काम मैं करूँगा'' मेरे मानस पटल पर चिरस्थाई होकर प्रतिक्षण गुजरते रहे।

एक घटना सन् 1986 की है। इंदौर के तिलकनगर में परिवार सहित रहते थे। एक रात अचानक स्वप्न आया, घर में कोई घुस आया है। उठकर देखा बाहर का दरवाजा खुला हुआ है, घबरा गये। पत्नी अपने कमरे में गई। देखा, गुरुदेव खड़े हैं। पत्नी चरण स्पर्श करके बाहर आई। घटना सुनाई पर विश्वास तब हुआ, जब कुछ महीने बाद हमारा हरिद्वार जाना हुआ। माताजी ने कहा ''बिटिया, पिताजी से डरना नहीं चाहिए।''

बेटा! तुमने दीक्षा ली है न!

मोहाली के कार्यकर्त्ता **श्री श्रीराम लखनपाल** जी बताते हैं कि 1980 में मैं गायत्री परिवार से जुड़ा। मेरा बेटा पोलियोग्रस्त है। 1983 में जब मैं परिवार सहित शान्तिकुञ्ज आया तो बेटा दस साल का होने पर भी हाथों और घुटनों के बल पर ही चलता था। जैसे कि 7-8 माह का बच्चा चलता है। हमने उसका बहुत इलाज करवाया। 6-7 आप्रेशन भी हो चुके थे। रोज गुरुजी को प्रणाम करते समय गुरुजी उस बालक को गौर से देखते। श्रीमती यशोदा बहिन जी (मोहाली) जो हमें लेकर आई थीं, प्रणाम के पश्चात् रोज हमें पूछतीं, ''आपने बालक के लिये गुरुजी से बात की?'' हम कहते-''नहीं।'' तो वह नाराज़ होतीं और कहतीं,'' गुरुजी से कहना था।''

वापस जाने का समय भी आ गया। विदाई में बस एक दिन शेष था। उस दिन यशोदा बहिन जी बोलीं, ''आज तो आप गुरुजी से बात करके ही लौटना। नहीं तो मैं कहूँगी।'' मैंने घर में बड़ों से सुना था कि गुरु से माँगा नहीं जाता। वह तो जानी-जान (जो जन्म-जन्मांतरों के रहस्य जानता है।)होते हैं। सो मैंने उनसे कहा, ''गुरु तो स्वयं सब जानते हैं, उनसे माँगा थोड़ी जाता है। मैं नहीं माँगता। उन्हें जो देना होगा, वे स्वयं दे देंगे।'' उस दिन जब हम गुरुजी के दर्शन करने गए, तो गुरुजी ने स्वयं ही मुझसे पूछा, ''आपका बच्चा है?'' मैंने हाँ में सिर हिलाया। फिर गुरुजी बोले, ''बेटा, इस बालक की चिन्ता मत करना। मैं इसे पूरा ठीक तो नहीं कर सकता, पर इसे इसके पैरों पर खड़ा कर दूँगा। एक दिन ये खूब दौड़ेगा। अपना सब काम खुद ही करता चला जायेगा। तुम बस, मेरा काम करते रहना।''

इसके कुछ महीनों बाद 1984 में, मैं बालक को एक बाबाजी के पास ले गया। उसने चण्डीगढ़ हाईकोर्ट के पास ही एक गांव 'कैंवाला' में अपना डेरा लगाया था। मेरी इच्छा तो नहीं थी पर मेरे सहकर्मियों ने मुझपर बहुत दबाव डाला। उन्होंने उन बाबाजी की बहुत ख्याति सुनी थी। कुछ संतान का मोह भी होता है। मैं भी उसे वहाँ ले गया। दूर-दूर से लोग अपने अंधे, अपंग बच्चों व परिजनों को लेकर आये हुये थे। वहाँ हम दो दिन रुके।

दूसरे दिन तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरागाँधी की हत्या हो गई और चारों ओर कर्फ्यू लग गया। वह बाबा भी कोई ढोंगी था। शायद आतंकवादियों

का ही कोई गिरोह रहा होगा। गाँव वालों को बाबाजी की पोल-पट्टी पता चल चुकी थी। दूसरी रात लगभग 12:00 बजे, उन सबने बाबाजी के डेरे को घेरकर आग लगा दी और बाबाजी के चेलों के साथ मार-पीट, लाठीचार्ज, पथराव आदि करने लगे। इधर आग तेजी से फैलने लगी और चारों ओर चीख पुकार मच गई। मैंने झट से अपने बच्चे को गेहूँ के कटे खेतों में फेंका, एक कम्बल ओढ़ा और आग में फँसे लोगों को पीठ पर लाद-लाद कर बाहर सुरक्षित स्थान पर ले जाता रहा। मेरे पैर लहू-लुहान हो रहे थे। पता नहीं कहाँ से मुझमें शक्ति आ गई थी। अनेक लोगों को आग से बचाया। बीच-बीच में गाँव वालों की लाठियाँ भी पीठ आदि पर पड़ती रहीं, पर गुरुजी रक्षा करते रहे। दर्द का कोई खास अहसास ही नहीं हुआ।

पर इस सबके बीच मैं अपने बेटे से बिछुड़ गया था। अब मैं पागलों के जैसे उसका नाम ले-लेकर, चिल्ला-चिल्ला कर उसे ढूँढ़ रहा था। मेरा गला बैठ गया था। लगभग दो घण्टे तक ढूँढ़ने के बाद सुबह होने पर जब वह मिला तो मेरी जान में जान आई।

जब हम घर पहुँचे तो पत्नी कुछ घबराई हुई और परेशान सी लगी। पूछने पर पता चला कि उसी दिन ब्रह्म मुहूर्त में जब वह जप कर रही थी, तो गुरुजी ने ध्यान में आकर कहा, ''बेटा! संकट तो बहुत बड़ा है, पर घबराना नहीं। तुमने दीक्षा ली है न, मैं हर समय तुम्हारे साथ हूँ।'' फिर वह बोली, ''पता नहीं कौन सा संकट आने वाला है, गुरुजी ने किस संकट का संकेत दिया है?''

रात की घटना अभी भी मुझे कँपा रही थी। मैंने कहा, ''संकट तो आकर चला गया'' और रात की सब घटना पत्नी को बताई। उस रात गुरुजी ने ही हमारी रक्षा की थी, पत्नी को इसका आभास कराकर शायद वह विश्वास दिलाना चाहते थे कि गुरु चरणों में समर्पित होने के बाद अन्यत्र भटकने की आवश्यकता नहीं है। फिर मैं कभी किसी के पास भटकने नहीं गया।

पूज्यवर के आशीर्वाद के अनुरूप धीरे-धीरे बेटे की हालत में सुधार होता गया। वह सहारे से खड़ा होने लगा फिर अपने पैरों पर चलने भी लगा। आज वह पढ़-लिख कर अपने पैरों पर खड़ा है। उसकी शादी भी हो गयी है और दो संतानें भी हैं।

पाँचवाँ डाक्टर

श्री श्रीकृष्ण अग्रवाल, शान्तिकुञ्ज

सन् 1980 के आसपास की घटना है। मुझे एक माह से बुखार आ रहा था। शान्तिकुञ्ज के तीन-चार डाक्टरों ने मेरा इलाज किया इसके बावजूद मेरा बुखार ठीक नहीं हो रहा था। अन्त में परेशान होकर अपनी पत्नी के हाथ एक पत्र लिखकर गुरुजी के पास भिजवाया। लिखा-

''गुरुजी,

सादर प्रणाम।

आपके यहाँ लोग हजार कि.मी. दूर से भी आकर अपने घर के लिये अनेक मनोकामनाएँ ले जाते हैं। मैंने तो कभी आपका 100 रु. भी इधर-उधर नहीं किया। फिर भी मैं कितना पापी हूँ, जो यहाँ रह कर भी एक माह से परेशान हूँ, बुखार उतर ही नहीं रहा।

आपका पुत्र''

प्रणाम के पश्चात् गुरुजी उठने ही वाले थे, कि मेरी पत्नी ने उन्हें पत्र दिया। गुरुजी ने पत्र पढ़ा। आश्चर्य से कहा-''बेटी! एक माह से बुखार नहीं उतरा। चल, मैं अभी आता हूँ।'' वह कमरे तक पहुँचती कि गुरुजी भी पहुँच गये और सीढ़ी चढ़ने लगे। उन्हें देखकर शान्तिकुञ्ज के अन्य कार्यकर्त्ता भी दौड़े। क्या बात हो गई? गुरुजी क्यों आये हैं?

गुरुजी आते ही मेरे बिस्तर के पास पहुँच कर बगल में बैठ गये और बोले-''हाँ! बता, क्या-क्या दवाई की बेटा?'' मुझे उस समय भी तेज बुखार था। बुखार में तप्त, परेशान, मैं बोला, ''गुरुजी! मुझे आपके चार-चार डॉक्टरों ने किलो भर गोलियाँ खिला डालीं, फिर भी कुछ आराम नहीं मिला।''

इस पर गुरुजी ने कहा, ''तू क्यों चिन्ता करता है? मैं पाँचवाँ डॉक्टर आ गया हूँ न। तुझे अब कभी बुखार नहीं आयेगा।'' मैंने कहा, ''गुरुजी, मेरा पेट भी भारी रहता है।'' गुरुजी का हाथ अनायास ही मेरे पेट की तरफ बढ़ा। गुरुजी ने मेरे पेट पर हाथ फिराया। उसी दिन मेरी सारी बीमारी दूर हो गई। फिर उस दिन के बाद मुझे कभी बुखार नहीं आया।

विपत्ति से रक्षा

एक कार्यकर्ता बहिन अपने परिजनों के साथ शान्तिकुञ्ज घूमने आयी। जब सब मंशा देवी मन्दिर घूमने जाने लगे तो ये भी साथ चली तो गयीं, पर वहाँ सीधी सीढ़ियों की चढ़ाई में जल्दी ही थक गयीं। उन्होंने सबसे कहा, ''मैं नहीं चढ़ पाऊँगी, तुम लोग दर्शन करके आ जाओ।'' वे एकांत में अकेली बैठी थीं, तो कुछ मनचले लड़कों का समूह उनके निकट आया। उन्हें उनकी नीयत अच्छी नहीं लगी। जब वे लड़के उन्हें छेड़ने के लिए और निकट आने लगे, तो वे घबराईं। पर अचानक कहीं से एक कुत्ता निकल आया, जो उन लड़कों को काटने के लिए दौड़ा। वे लोग बार-बार, थोड़ी-थोड़ी देर में उनके पास आने का प्रयास करते, पर वह कुत्ता तो जैसे वहाँ उनकी सुरक्षा के लिए ही तैनात था। उसने उन लड़कों को उनके पास नहीं फटकने दिया। जब तक उनके परिवार वाले आ नहीं गये, तब तक वह कुत्ता वहीं बैठा रहा, और परिवार वालों के आ जाने पर इधर-उधर निकल गया।

अगले दिन जब वह बहिन पूज्य गुरुदेव से मिलीं, तो गुरुजी ने कहा- ''बेटा! अपनी सुरक्षा अपने हाथ। तू अकेले वहाँ क्यों बैठ गयी थी?'' तब उन्हें समझ में आया कि गुरुजी ने ही उन्हें विपत्ति से बचाया था।

करेण्ट लगने पर जीवन रक्षा

गुना के **श्री सुरेश रघुवंशी**, उन दिनों शान्तिकुंज में समयदानी कार्यकर्त्ता थे। वे एक कार्यक्रम में मेरठ शहर गये। वहाँ जिस मकान में वे रुके थे, वहाँ छत के ऊपर से ग्यारह हजार वोल्टेज की हाई पॉवर लाइन किसी फैक्टरी में जाती थी। सुबह कपड़े सुखाने के लिए वे छत पर गये। जैसे ही उन्होंने तौलिया उछाला। जब तक वहाँ खड़ी उस परिवार की बहू कहती- ''भैया, यहाँ कपड़े मत डालना।'' तब तक तो करेण्ट लाइन ने तौलिया गीला होने के कारण उन्हें खींच लिया था। वे उस लाइन से चिपक गये। उनके सिर से अग्नि की ज्वालाएँ निकलने लगीं। बहू चिल्लाते हुए नीचे उतरी कि शान्तिकुंज वाले भैया को करेण्ट लग गया। घर वालों ने तुरन्त लाइन ऑफ करने के लिए फैक्टरी में फोन किया। इतने में पड़ोस की एक महिला ने उन्हें लाइन से चिपके देखा तो

दौड़कर ऊपर चढ़ गयी। जैसे ही लाइन ऑफ हुई, वे गिरे। वह महिला उन्हें तुरन्त नीचे ले आयीं। जमीन पर औंधे लिटाकर लगातार मुट्ठियाँ मारने लगी। आनन-फानन में गाड़ी की व्यवस्था की गयी। उन्हें अस्पताल ले जाया गया व तुरंत उपचार शुरू हुआ।

उनके सिर में गहरा घाव हो गया था। मेरठ के सारे कार्यकर्त्ता एकत्र हो गये। सभी गायत्री मंत्र जाप करते हुए उनके लिए प्रार्थना करने लगे। वहाँ उस फैक्टरी लाइन से पहले भी उस पूरी गली में 18 मौतें हो चुकी थीं। ये भाई उन्नीसवें नम्बर के थे। जिन्हें पूज्य गुरुदेव ने बचा लिया। कार्यकर्त्ता खुश भी थे, और गुरुसत्ता की सामर्थ्य पर हैरान भी। उन्हें ये विश्वास हो गया था कि हमारे गुरुदेव असंभव को भी संभव कर देने में पूरी तरह समर्थ हैं।

मेरा आध्यात्मिक उपचार

अनामिका पारिक, कुरुक्षेत्र

गुरुदेव से जुड़ने के पूर्व, लगभग तीस वर्ष की आयु में ही, मेरा शरीर बीमारियों का घर बना हुआ था। कभी दिल की धड़कन बढ़ जाती तो कभी पैरों में सूजन आ जाती थी। थकान व कमजोरी के कारण बुरा हाल रहता था। मेरे पति स्वयं एक बहुत अच्छे चिकित्सक हैं परन्तु बीमारी पर कोई इलाज कामयाब नहीं हो पाता था। अनेकों बड़े-बड़े, चिकित्सकों ने 'थायराइड ग्लैण्ड' में 'हार्मोन्स' का असन्तुलन घोषित कर दिया था। अपने पति के द्वारा बारम्बार कहने पर मैंने गायत्री जप शुरू किया एवं भावना पूर्वक गायत्री जप व गुरुदेव की तस्वीर रखकर ध्यान करना आरम्भ कर दिया। एक दिन मुझे अनुभूति हुई जैसे गुरुदेव कह रहे हों-''तुम हमारा काम करो, हम तुम्हारा आध्यात्मिक उपचार करेंगे।'' उस दिन के बाद मैंने महिला सत्संग व झोला पुस्तकालय चलाना आरंभ किया और कुछ ही दिनों में मेरी बीमारी गायब हो गई।

11. जिसने जो माँगा वो पाया

पूज्य गुरुदेव-माताजी दोनों एक ही थे। परम पूज्य गुरुदेव के स्थूल शरीर छोड़ने के बाद उनकी प्रत्यक्ष जिम्मेदारियाँ माताजी के कंधों पर आ गईं। उस समय उनके पास रहने वाले परिजन बताते हैं कि माताजी ने पूज्य गुरुदेव की कमी का अहसास नहीं होने दिया। उनमें पूज्य गुरुदेव की समस्त शक्तियाँ प्रारंभ से ही विद्यमान थीं, परंतु गुरुदेव के रहते तक उन्होंने इसका खास अहसास नहीं होने दिया। स्वयं को उनकी आड़ में छिपाये रखा। कभी-कभी आवश्यकता पड़ने पर परिजनों को उन्होंने उनका आभास भी कराया है। परंतु गुरुदेव के सूक्ष्म में विलीन होने के पश्चात् तो वे स्पष्ट रूप से सामने आईं। परिजनों को उन्होंने एहसास कराया कि वे गुरुदेव से भिन्न नहीं हैं। अर्धनारी नटेश्वर की तरह वे और गुरुदेव दोनों एक ही हैं।

जो भी उनके पास आया, वह निहाल हो गया। किसी को उन्होंने खाली हाथ नहीं लौटाया। अधिकतर लोग उनसे लौकिक चीजें ही माँगते रहे। जिसपर वे कभी-कभी खेद भी प्रकट करते थे। कहते कि मैं तो कठिन तप से कमाई आध्यात्मिक विभूतियाँ देना चाहता हूँ, पर हमारे बच्चे अभी तक बच्चे ही बने हुए हैं। लौकिक चीजें ही माँगते हैं। यह सब तो मेरे लिये टॉफी चॉकलेट बाँटने के समान है।

इसके अतिरिक्त किसी ने उनसे विद्या माँगी, किसी ने भक्ति। किसी ने पवित्रता तो किसी ने शक्ति भी। कोई-कोई भक्त तो शबरी, नरसिंह मेहता की नाईं उन्हें साक्षात् भगवान् मानते ही नहीं रहे अपितु दृढ़ विश्वास भी करते रहे। उन्होंने जब उनके दर्शनों की इच्छा की तो पूज्यवर ने उन्हें अपना स्वरूप भी दिखाया। जिसने जो माँगा वो पाया। उनके विषय में बस यही कहा जा सकता है-

''तेरे दरबार की गुरुवर निराली शान यह देखी,

तुझे देते नहीं देखा, मगर झोली भरी देखी।''

बायना (हुंडी) तो भरना ही पड़ेगा

श्री शिव प्रसाद मिश्र, शान्तिकुञ्ज

श्री रघुवीर सिंह चौहान जी की बड़ी लड़की की शादी तय हो चुकी थी। चूँकि श्री चौहान जी मेरे साथ ही गुरुदेव व वंदनीया माताजी से परिजनों को मिलाने के कार्य में व्यस्त रहते थे, अत: हम लोग प्राय: ही उनसे पूछते रहते–

''चौहान जी, लड़की की शादी की तैयारी हो गई ?''

वे कहते, ''सब गुरुजी ठीक करेंगे।'' शादी में मात्र दो माह का समय था। जब भी पूछते, उनका एक ही जवाब होता। ''सब गुरुजी ठीक करेंगे।''

अब शादी में मात्र चार–पाँच दिन ही बचे थे। चौहान जी पूर्ववत् ही अपने कार्य में लगे रहते। शादी की तैयारियों की बाबत पूछने पर अब भी उनका यही जवाब था। ''सब गुरुजी ठीक करेंगे।'' मैं किसी कार्यवश ज्वालापुर गया। अकस्मात् ही उनके घर पर नजर पड़ी। देखा, अरे! घर तो ज्यों का त्यों पड़ा है। न लिपाई–पुताई, न रंग–रोगन। चार दिन बाद शादी है लेकिन उसके एक भी लक्षण दिखाई नहीं पड़ रहे। मुझे चिंता हुई। आकर अन्य भाई–बहनों से चर्चा की। सोचा, अब गुरुजी–माताजी से कहे बिना काम नहीं चलेगा।

उस दिन भी चौहान जी से जब पूछा तो जवाब वही का वही। अब शादी में केवल तीन दिन शेष थे। मैंने पूज्य गुरुदेव से सब बात बताई। गुरुजी ने सारी बात सुनी। थोड़े गंभीर हुए, फिर बोले, ''बेटा, बायना तो भरना पड़ेगा'' उनकी बात सुनकर मुझे लगा कि 'कहीं ये पूर्व जन्म के नरसिंह मेहता तो नहीं हैं, जो अपने कृष्ण को हुंडी चुकाने को विवश कर रहे हैं। प्रभु की लीला प्रभु ही जाने।' मैं अभी सोच ही रहा था कि पूज्यवर का आदेश हो गया ''बेटा, तू देख। सारी व्यवस्था कर।''

मैंने नीचे आकर परम वंदनीया माताजी से परामर्श किया, उन्होंने भी सारी व्यवस्था हेतु स्वीकृति दे दी और अन्य परिजनों को भी सहयोग करने के लिये कहा।

हमने चौके से बर्तन आदि सभी आवश्यक सामग्री मेटाडोर में भरी और कुछ भाई–बहनों को साथ ले कर चौहान जी के घर पहुँचे। सावित्री जीजी चौके वाली कुछ बहनों को साथ लेकर गईं। उन सबने लिपाई पुताई से लेकर चौके की पूरी व्यवस्था सँभाली।

क्योंकि, बारात बहादराबाद से ही आनी थी, सो कितनी व्यवस्था करनी पड़ेगी, इसका पहले से ही अन्दाजा ले लिया जाय; यह सोचकर मैं समधी जी के यहाँ बहादराबाद चला गया। देखा तो मेरे नेत्र खुले के खुले रह गये। वे गाँव के मान्य ठाकुर थे। गाँव भर में उत्सव का माहौल था। वे उस समय पूरे गाँव को खाना खिला रहे थे। मैं कुछ देर रुका। फिर बात ही बात में पूछा, ''कितनी बारात जायगी?'' उत्तर मिला-''पूरा गाँव तैयार है। एक हजार तो हो ही जायेंगे।'' सुनकर मेरी तो सिट्टी-पिट्टी गुम थी। निवेदन किया। यह तो बहुत ज़्यादा है। आपके समधी शायद सँभाल न सकें। कृपया, उन पर इतना बोझ न डालें। कुछ आदर्श की भी बात की। वे पहले पाँच सौ, फिर तीन सौ; अंतत: बड़ी मुश्किल से डेढ़ सौ के लिये तैयार हुए। पर फिर भी तीन सौ बाराती हो ही गये थे। शायद इससे अधिक उनको भी नकारते न बन पड़ा हो।

ज्वालापुर आकर मैं किराना सामान लेने गया। यह सन् 77-78 की बात है। उस समय मैं 1345 रु. का किराने का सामान लाया। मिठाई गिनकर दो सौ पीस से कुछ उपर ही लिया था। तीन सौ बराती आए और लगभग तीन सौ ही घराती हो गये।

सावित्री जीजी, भारती अम्मा के जिम्मे चौके की सब व्यवस्था थी। फिर भी इतनी बड़ी व्यवस्था में जिससे जो बना पूरा सहयोग किया। श्री महेन्द्र शर्मा जी ने पूड़ी तली। श्री राम सहाय शुक्ला जी व मैं भी जो हाथ आया वही काम किया।

तीन दिन के अन्दर सब तैयारियाँ और व्यवस्था देखकर मुहल्ले वासी भी हैरान रह गये। सब के मुँह पर एक ही बात थी कि लक्ष्मी माँ का काम फटाफट होते सुना था पर देखा आज ही है।

मैं खुद आश्चर्य में था कि मैं जो किराना सामान लाया था, उसी में सब व्यवस्था कैसे पूरी हो गई? बारात की विदाई के बाद भी पूड़ी-सब्जी, लड्डू आदि बहुत बचा था। मानो माताजी स्वयं इसे पूर्ण करने आई थीं।

मिठाई तो मैं गिनकर लाया था। दो सौ, पर छ: सौ लोगों में कैसे पूरी हो गई, मैं हैरान था। चौहान जी की भक्ति और गुरुवर की शक्ति के आगे हम सब नत मस्तक थे।

लड़की जब ससुराल गई और यहाँ की बातें वहाँ तक पहुँचीं, तो उसे

चमत्कारी लड़की मानकर छः माह तक दूर-दूर से लोग उसे देखने आते रहे। इस प्रकार निष्ठा ने विजय पाई। भगवान को भक्त का बायना भरना पड़ा।

उनसे तो कहना भर ही काफी था

श्री सुदर्शन मित्तल जी, देहरादून

मैं अक्सर मथुरा आता जाता रहता हूँ। श्री द्वारिका प्रसाद चैतन्य जी से मेरी खूब बातचीत होती रहती है। एक दिन उन्होंने बताया कि जब मैं नया-नया मथुरा आया था तो एक दिन मैंने बातों-बातों में गुरुदेव से कह दिया, ''गुरुदेव मुझे केवल लड़की के विवाह की चिन्ता है।''

पूज्यवर ने तुरन्त कहा, ''बेटा, तू क्यों चिन्ता करता है, तेरी लड़की मेरी लड़की है, तू बिलकुल भी चिन्ता न कर।'' चैतन्य जी ने बताया कि उसके बाद मैं निश्चिन्त हो गया। बात आई-गई हो गई।

समय पर अचानक एक दिन एक लड़का आया, उसने एक चिट्ठी दी। मैंने खोलकर पढ़ी, पूज्यवर ने लिखा था- ''मैंने तो तिलक कर दिया है, तू लड़का देख ले।''

चिट्ठी पढ़कर मैं हैरान रह गया। लड़के को ऊपर से नीचे तक देखा। तुरन्त तिलक कर गुरुदेव ने भेजा था सो ओजस् चेहरे पर झलक रहा था। किन्तु बिना उसके बारे में कुछ भी जाने समझे अपनी लड़की के लिए कैसे हाँ कर दूँ, अजीब स्थिति हो गई थी। फिर भी लड़के को बिठाया, बातचीत किया। अन्दर गया, घर में चर्चा की व दोनों एक दूसरे का पता लेकर एक दूसरे के गृह-ग्राम गये। दोनों ने दोनों को पसंद किया, बात तय हुई।

इसी बीच लड़के के मामा ने विवाह की लिस्ट दी, जिसे मैंने मना कर दिया, कहा-''मैं इतना सामान नहीं दे सकता।'' अब तो उनके घर वाले सकते में आ गये। गुरुजी ने तिलक किया है, मना कैसे करते? अतः कहा ''गुरुजी गोत्र समान है। कहते हैं, ऐसे में दोनों की एक दूसरे से पटती नहीं।''

बहाना तो बहाना था। गुरुदेव ने उसी लहजे में लड़के से पूछा, ''ये लड़की मेरी है, मेरा गोत्र चमार है, तू बता शादी करेगा?''

लड़के ने हाँ कर दी व शादी धूम-धाम से हो गई।

बाद में चैतन्य जी अन्तर्मन से भाव-विभोर होकर कहते हैं- ''मित्तल जी, मैं अगर खोजता तो कितना भी खोजता, किन्तु मुझे ऐसा लड़का कदापि

नहीं मिलता। यह तो गुरुवर की असीम कृपा है जिन्होंने मुझे इतना अच्छा दामाद प्रदान किया।''

तुझे कुछ नहीं हुआ है बेटी

श्री सुदर्शन मित्तल जी, देहरादून

घटना सन् 1958 के ब्रह्मास्त्र अनुष्ठान यज्ञ के पहले की है। आगरा के अन्दर एक खान एस. पी. थे। उनकी पत्नी असाध्य बीमारी से पीड़ित थी। उन्हें एक कार्यकर्ता श्री फौजदार सिंह जी से गुरुजी के विषय में जानकारी मिली, तो उन्होंने कहलवाया, ''क्या मैं अपनी पत्नी को ला सकता हूँ?''

फौजदार सिंह जी ने गुरुदेव से पूछा, तो उन्होंने कह दिया, ''ले आना बेटा।'' दूसरे दिन वे अपनी गाड़ी से पत्नी को लेकर आये। गुरुदेव आँगन में ही दोनों हाथ पीछे बाँधे टहल रहे थे। उसी मुद्रा में कहा, ''उतार कर ले आ बेटा।'' खान साहब ने अपनी पत्नी को गोद में उठाया और गाड़ी से नीचे ले आए।

गुरुदेव ने उन्हें इशारे से ही मंदिर में ले जाने व गायत्री माता के समक्ष बरामदे में सुलाने को कहा व स्वयं कमर में हाथ बाँधे हुए उन्हीं के पीछे-पीछे चलते हुए कहते रहे, ''तुम मेरी अच्छी बेटी हो, तुम मेरी प्यारी बेटी हो, तुम्हें कुछ नहीं हुआ है, उठकर बैठ जा, देख धीरे-धीरे बैठना।'' देखते-देखते ही वह महिला अपने मन से उठने लगी व बैठ गई।

गुरुदेव ने कहा, ''खड़ी हो जा, धीरे-धीरे खड़ी होना।'' तो वह धीरे-धीरे खड़ी हो गई। उन्होंने कहा, ''अब चलकर अपने पिता के पास नहीं आयेगी?'' इतना कहने पर वह धीरे-धीरे पिताजी अर्थात् गुरुजी के पास आ गई।

अब गुरुजी ने कहा, ''कुछ खायेगी।''

उस महिला ने जवाब दिया,'' हाँ खाऊँगी।'' खान साहब ने उसे बोलते सुना तो दंग रह गये। वैसी आवाज उन्होंने कभी नहीं सुनी थी। उसके स्वास्थ में एकाएक इतना सुधार देखकर खान साहब हैरान रह गए व गुरुदेव के चरणों में गिर पड़े।

वह पत्नी जिसके रोग को डॉक्टरों ने असाध्य घोषित कर दिया हो, उसे ''तुझे कुछ नहीं हुआ है बेटी।'' कहकर, आधे घंटे से भी कम समय में उठाकर बैठा दें, खड़ा कर दें, व खिला कर घर भेज दें। ऐसे सिद्ध संत के चरणों में भला कौन नतमस्तक नहीं होगा?

खान साहब मन ही मन कृतज्ञ होकर जिस पत्नी को गोद में लाद कर लाये थे, उसे अपने पैरों चलाते हुए लेकर चले गये।

माँगो, क्या माँगते हो ?

राजनांदगाँव शहर के **बाबूभाई मानेक,** की अनुभूति उल्लेखनीय है। उन्होंने बताया कि उन्हें संतान नहीं थी। गुरुजी हमारे घर में आये, तो उन्होंने भोजन करते हुए पूछा, ''क्यों बाबूभाई! तुम्हें संतान नहीं है ?'' मैंने कहा, ''नहीं गुरुजी।'' तो पूछा, ''तुम्हें कामना भी नहीं है।'' मैं बोला, ''नहीं गुरुजी, अब हमारी कोई कामना नहीं है।'' ''तुम्हें नहीं होगी। माताजी को बुलाओ।'' पूज्य गुरुजी ने कहा। मैंने अपनी धर्मपत्नी को बुलाया।

धर्मपत्नी से गुरुजी ने पूछा, ''क्यों माताजी, तुम्हें संतान पाने की कामना नहीं होती।'' वे बोलीं, ''नहीं, गुरुजी।'' गुरुजी ने कहा, ''अगर मैं तुम्हें संतान दे दूँ तो।''

पत्नी ने कहा, ''गुरुजी अब आप संतान दे भी देंगे, तो हमारी आयु 55 साल की हो गयी है, 20 साल पालने-पोसने में लगेंगे। पता नहीं 75 साल तक हम जिएँ या न जिएँ, पता नहीं उतना सुख मिले या नहीं। जब कामना थी, तब पूरे देश में बहुत घूमे-भटके, हर संत-महन्त के पास गये। लेकिन अब अपनी कामना मिटा दी है।'' पूज्यवर खुश हुए, कहा, ''बहुत अच्छी बात।''

भोजन के बाद गुरुजी ने हमें गायत्री माता की मूर्ति के पास बिठाया और बोले, ''माताजी! माँगो, क्या माँगती हो ?''

पत्नी ने कहा, ''गुरुजी मुझे, ज्ञान, भक्ति और वैराग्य दे दो।''

पूज्यवर ने मुझसे कहा, ''बाबूभाई! माँगो, क्या माँगते हो ?'' मैंने भी यही माँगा, ''ज्ञान, भक्ति और वैराग्य।''

पूज्यवर ने हम दोनों के सिर पर हाथ रखा और दस मिनट तक रखा। ऐसी दिव्य अनुभूति हुई कि संसार भर का सारा सुख-वैभव उसके आगे मिट्टी के ढेले जैसा लगा और जिसकी चर्चा सत्संग में सुनते आये थे, वह दिव्य आत्मानन्द, परमानन्द, ब्रह्मानन्द आदि की अद्‌भुत अनुभूति हुई।

उस दिन के बाद से ऐसा हुआ कि अपने आप सन्त, मुनि एवं ऋषि स्तर की आत्माएँ हमारे घर आने लगीं। उनसे अमृत ज्ञान उपदेश मिलता रहा। उनकी सेवा में समय बीता और पदार्थों से वैराग्य सा हो गया, तो खूब सारा

दान-पुण्य करते रहे। अस्पताल खोला, डॉक्टर रखे। जो माँगा, वह गुरुजी ने दे दिया। हम तो धन्य हो गए।

अल्सर गायब हो गया

श्री आर. पी. त्रिपाठी, उज्जैन

1974 में अचानक मुझे पेट में भयंकर तकलीफ हुई। चैक कराने पर पता चला कि पैप्टिक अल्सर है और वह अल्सर इस स्थिति तक पहुँच चुका था कि कभी भी फूट सकता था। डॉक्टर ने कहा कि जितनी जल्दी हो सके आप्रेशन करा लो, यदि यह फूट गया तो आपकी जान भी जा सकती है। मुझे तकलीफ इतनी ज़्यादा थी कि मैं दो घूँट पानी भी नहीं पी सकता था। कुछ ही दिनों में मेरा वजन 20 किलो कम हो गया था। कानपुर के एक अनुभवी डॉक्टर से ऑप्रेशन का समय भी ले लिया था। गायत्री परिवार के समर्पित कार्यकता श्री मोतीलाल जी मेरे अच्छे मित्र थे। उन्होंने कहा, ''आप्रेशन तो कराना ही है, पर क्योंकि हम गुरुजी से जुड़े हैं, तो ऑप्रेशन के पहले गुरुदेव के दर्शन कर लें तो अच्छा रहेगा।'' हम गुरुदेव के दर्शन करने शान्तिकुञ्ज पहुँचे। गुरुदेव ने देखते ही पूछा, ''सब ठीक-ठाक है ?'' मैंने कुछ नहीं बताया, पर मेरी पत्नी ने सब हाल बताया और कहा, ''गुरुदेव, ऑप्रेशन कराना है, आपका आशीर्वाद चाहिये।''

सुनकर गुरुदेव ने कहा, ''बेटा, मैं भी तो डॉक्टर हूँ। अब तुम यहाँ आ गये हो तो ऑप्रेशन की कोई जरूरत नहीं है। मैं तुम्हारा पूरा इलाज करता हूँ। यहाँ से रोज हरकी पौड़ी पर स्नान करने जाना और रोज खूब पानी पीना। रोज शाम को मेरे प्रवचन में भाग लेना और कल मनसा देवी के दर्शन करना।''

उस समय मेरी स्थिति ऐसी थी कि मैं 10 कदम भी नहीं चल पाता था। दो घूँट पानी मुश्किल से पी पाता था। 1974 के समय में मनसा देवी के लिये पहाड़ पर चढ़ कर जाना स्वस्थ आदमी को भी कठिन जान पड़ता था। उस पर भी आश्चर्य की बात, गुरुजी बोले, ''हरकी पौड़ी पर दही-बड़े और गोलगप्पे खाना।'' यह तो मेरे मन की बात थी, क्योंकि दोनों ही मुझे बहुत अच्छे लगते थे।

मैंने गुरुजी के कहे अनुसार किया। हर की पौड़ी नहाने के लिये गया। मन में सोचा, जब गुरुदेव ने दही-बड़े खाने के लिये कहा है तो खा ही लेता हूँ। मैंने छक कर दही-बड़े खाये। मुझे कुछ नहीं हुआ। दूसरे दिन हम मनसा देवी

की चढ़ाई भी चढ़ गये। जैसा-जैसा गुरुजी ने कहा था, वैसा ही किया। 15 दिन का समय गुरुदेव ने दिया था। कहा था, कहीं अस्पताल जाने की जरूरत नहीं है, सब कैंसिल कर दो, बाद में जाना। 15 दिन बाद जब गुरुदेव के पास गये तो उन्होंने कहा, ''बेटा, अब तुम जाओ। डाक्टर के पास जाने की कोई जरूरत नहीं है। कभी पेट में दर्द हो तो चले जाना।'' उस समय से आज तक मुझे पैप्टिक अल्सर नहीं है।

अपने तप का एक अंश देंगे

अंजार, कच्छ की केशर बहन विश्राम भाई ठक्कर बहुत पुरानी कार्यकर्ता हैं। उन्हें 29 दिसंबर 1967 को गुरुजी ने एक पत्र लिखा जो इस प्रकार है-

''...प्रिय पुत्री, तुम्हारा पत्र पढ़ते समय लगा कि तुम हमारे सामने ही बैठी हो, हमारी गोदी में खेल रही हो। शरीर से तुम दूर हो, किन्तु आत्मा की दृष्टि से हमारे अतिनिकट हो। हमारा प्रकाश तुम्हारी आत्मा में निरंतर प्रवेश करता रहेगा और इसी जीवन में तुम्हें पूर्णता के लक्ष्य तक पहुँचा देगा। हम अपनी तपस्या का एक अंश तुम्हें देंगे और तुम्हें पूर्णता तक पहुँचा देंगे। हमारा सूक्ष्म शरीर तीन वर्ष बाद इतना प्रबल हो जायेगा कि बिना किसी कठिनाई के कहीं भी पहुँच सके और दर्शन दे सके।''

जो परिजन केशर बहिन को जानते हैं, वे उनकी भाव-समाधि की स्थिति से भी भली-भाँति परिचित हैं।

गुरुदेव हमारे शिवशंकर वरदाई

श्री गोविंद पाटीदार, शान्तिकुञ्ज

विगत 16 से 20 अप्रैल 1970 की तिथियों में खरगोन, ग्राम घेगाँव में 108 कुंडीय यज्ञ का आयोजन था। पूज्य गुरुदेव इस समारोह में पधारे थे। उन्हीं दिनों उनसे मंत्र दीक्षा ली थी। अपनी हिमालय यात्रा के बाद पूज्य गुरुदेव ने लौटकर शान्तिकुञ्ज हरिद्वार में साधना आरण्यक की स्थापना की। 'जीवन साधना' सत्रों की श्रृंखला चली। 1976 के एक सत्र में वहाँ जाने का सौभाग्य मुझे भी मिला। उनसे भेंट करने के लिए एक दिन उनके कमरे में गये। अन्य परिजन भी थे। सबसे बारी-बारी से पूज्य गुरुदेव ने कुशल समाचार पूछे। मेरी कुशलता भी पूछी। मैंने कहा, ''गुरुदेव और तो सब ठीक है, परन्तु एक दुःख है।'' उन्होंने करुणापूर्वक कहा, ''बेटा, जल्दी बता, क्या बात है ?'' मैंने बताया,

''पिताजी, मेरे बड़े भाई को हमेशा बाँध कर रखना पड़ता है। वे पागल हैं।'' पूज्य गुरुदेव ने क्षणभर के लिए आँख बंद की और कहा, ''बेटा, यह पूर्व जन्म के किन्हीं कर्मों के कारण है, इस प्रारब्ध को इसी जन्म में काट लेना अच्छा है। परन्तु उसे इतना जरूर ठीक कर देंगे कि वह खुला रह सके।'' मेरा हृदय भर आया, गला रुँध गया और आँखों से आँसू झरने लगे। गुरुदेव ने मेरे सिर पर हाथ फिराया और कहा, ''बेटा, सब ठीक ही होगा। चिन्ता मत करो। परिवार की जिम्मेदारी मेरे ऊपर छोड़ दो।''

नौ दिनों के शिविर के पश्चात् घर लौटना हुआ। ठीक 20 दिन बाद बड़े भाई अपने आप खुल गये। पूछने पर बताया कि जाने कौन सफेद खादी के कपड़े पहने बाबा आये थे। उन्होंने दूर से मेरे ऊपर बर्फ फेंक दी। उसी से सब जंजीरें अलग हो गईं।

आज भी मेरे बड़े भाई बंधनों से मुक्त अवस्था में प्रसन्नतापूर्वक रहते हैं। कभी-कभार कई महीनों में एकाध हल्का-सा दौरा आ जाता है, पर फिर ठीक हो जाते हैं। बड़े भाई के दोनों बालक चि. गजानंद एवं चि. रमेशचंद्र इंजीनियर के पद पर हैं तथा सपरिवार इंदौर ही रहते हैं। मैं अपने परिवार सहित 12 जून 1984 से गुरुदेव के चरणों में शान्तिकुञ्ज आ गया। पूज्य गुरुदेव वरदाई ही थे।

अब तो बराबर यह चिंतन रहता है कि उनके अनुदानों का ऋण चुकाने में ही जीवन के शेष दिन बीतें।

शब्द क्या - वरदान थे वे वचन

श्री मोतीलाल स्वर्णकार, उज्जैन

सन् 1964-65 में गुरुदेव नलखेड़ा जिला शाजापुर में आये थे। तब मैं माध्यमिक शाला नलखेड़ा में क्राफ्ट टीचर था। 5 कुण्डीय गायत्री यज्ञ आयोजित किये गये थे। घर पर ही गुरुदेव के ठहरने का इंतजाम था। एकांत पाते ही गुरुदेव ने मुझसे मेरी समस्या पूछी। मैंने कहा, ''गुरुदेव, पाँच कन्याएँ हैं, एक पुत्र है, इनकी शिक्षा-दीक्षा तथा विवाह संस्कार करना है। नलखेड़ा से स्थानांतरण करवा दीजिए।'' गुरुदेव ने कहा 9 दिन में उज्जैन ट्रांसफर बी. टी. आई. में होगा। वहाँ उज्जैन में कोई शाखा नहीं है, वहाँ सुरेशनारायण मेहता डी. ई. ओ. व जनार्दन देशमुख से मिलकर शाखा स्थापित कर युग निर्माण योजना का कार्य

करना। बात बेहद अविश्वसनीय थी। भला किसी व्यक्ति का कुछ ही दिनों के अंतर से दो बार स्थानांतरण कैसे हो सकता था? किन्तु गुरुदेव की महिमा। 9 दिन के अंदर ही बी. टी. आई. उज्जैन में मेरा ट्रांसफर हो गया। फिर मैं उज्जैन में ही रहा। यहाँ 5 कन्याओं व एकपुत्र की ग्रेजुएशन तक शिक्षा पूरी हुई। सभी की बिना दहेज के शादी कराई। उज्जैन से ही रिटायर हुआ। गायत्री परिवार की शाखा सन् 1964 में स्थापित की। गुरुकृपा से मेरा हर कार्य निर्विघ्न रूप से पूरा होता रहा है। उनके वचन मेरे जीवन में वरदान बन कर आये।

24000 मंत्र के एक लघु अनुष्ठान का पुण्य दिया है

एक बार, 5 कुण्डीय गायत्री यज्ञ के कार्यक्रम हेतु खास चौंक, उज्जैन में गुरुदेव श्री इन्दुमल लिखाणी के घर ठहरे थे। रात के वक्त जब मैं गुरुजी के चरणों के पास ही सोया हुआ था कि अचानक मेरी पसली में भयंकर दर्द उठा। मैं कराहने लगा। गुरुजी उठे और पूछा, ''मोतीलाल, कराह क्यों रहे हो?'' मैंने बताया, ''गुरुदेव, पसली में भयंकर दर्द हो रहा है।''

गुरुदेव बोले, ''मेरे पास आ।'' मैं उठ कर गुरुजी के पास गया। उन्होंने जहाँ दर्द हो रहा था वहाँ हाथ फिराया और पल भर में मेरा दर्द गायब हो गया। मुझे ऐसा लगा, जैसे गुरुदेव ने मुझे प्राण दान दिया हो। फिर गुरुदेव ने कहा, मैंने तुझे 24000 गायत्री मंत्र के एक लघु अनुष्ठान का पुण्य दे दिया है। घर जाकर अनुष्ठान कर लेना और मुझे सूचना कर देना, उसकी शक्ति मैंने तुझे दी है।

कमाल आशीर्वाद का

श्रीमती शांता सोनी, इंदौर

सन् 1966-67 में पूज्य गुरुदेव सिंहस्थ पर्व पर उज्जैन पधारे। लौटते समय प्रात: 6 बजे मेरे कालिया देह निवास से साइकिल रिक्शे में बैठकर जा रहे थे, मार्ग में श्री गोपालजी सोनी का घर था। उन्होंने व उनकी पत्नी ने फूलमालाओं से पूज्य गुरुदेव का स्वागत किया। जब गुरुदेव ने सबकी कुशलक्षेम पूछी तो उनकी पत्नी ने रोते हुए कहा, ''गुरुजी, मेरी गोद खाली है। जो संतान होती है, 2-4 माह में मर जाती है।'' फिर वह फूट-फूट कर रोने लगी। पूज्य गुरुदेव द्रवीभूत हो उठे और उन्हें आशीर्वाद दिया। उनके आशीर्वाद स्वरूप आज उनके दो पुत्र हैं, जो स्वस्थ, सुखी और संपन्न हैं।

जाकी कृपा पंगु गिरि लाँघै

श्री दयाशंकर रस्तोगी, शाहजहाँपुर, उ.प्र.

शान्तिकुञ्ज में उन दिनों प्राण प्रत्यावर्तन सत्र चल रहे थे। वेदमूर्ति तपोनिष्ठ परम पूज्य गुरुदेव की तप ऊर्जा से नित नए अनुदानों-वरदानों की सृष्टि व वृष्टि हो रही थी। उन्हीं दिनों जाड़े की एक दोपहर में उत्तरप्रदेश के खीरी लखीमपुर जिले के मोहम्मदी कस्बे के प्रतिष्ठित कपड़ा व्यवसायी श्री दयाशंकर रस्तोगी अपनी पत्नी श्रीमती शकुन्तला रस्तोगी के साथ पूज्य गुरुदेव से मिलने के लिए पहुँचे। उनके साथ उनका विकलांग पुत्र सुनील भी था। गुरुदेव ने उन्हें प्रेम से बिठाने के साथ घर के हाल समाचार पूछे। उत्तर में सुनील की माँ श्रीमती शकुन्तला ने बताया, ''गुरुदेव! मेरे तीन लड़के-सुनील, इन्द्रकिशोर व आनन्द एवं दो लड़कियाँ आदर्श व विद्योत्तमा हैं। यह सुनील ही सबसे बड़ा है।'' इसी के साथ ही उन्होंने सुनील के विकलांग होने की सारी कथा सुना डाली। श्री दयाशंकर जी ने बताया, ''गुरुजी! यह लड़का जन्म के समय तो स्वस्थ-सामान्य था। पर जन्म के पन्द्रहवें दिन इसे तीव्र ज्वर हुआ, तब से यह हाल हो गया है। चिकित्सा के सारे प्रयास भी निष्फल गए।''

सारी बातें सुनने के बाद गुरुदेव ने सुनील की ओर देखा। ग्यारह वर्षीय इस बालक के चेहरे पर एक अद्‌भुत भोलापन था। उसकी आँखों में एक अनूठी चमक थी। गुरुदेव ने इन सबको समझाते हुए कहा, ''जन्म-जन्मान्तर के कर्म प्रारब्ध का रूप लेते हैं और यह प्रारब्ध ही अच्छी-बुरी परिस्थितियों के रूप में प्रकट होता है। बुरे प्रारब्ध को धैर्यपूर्वक सह जाना तप है। तुम्हारा बच्चा यही तप कर रहा है। पर तुम निराश न हो, हम इसे प्रतिभा का वरदान देते हैं। यह विकलांग होने के बावजूद किसी पर बोझ नहीं बनेगा। स्वयं कमाकर खाएगा और तुम लोगों का भी नाम उज्ज्वल करेगा। इसके कारण लोग तुम्हें और इसके भाई-बहिनों को पहचानेंगे।'' गुरुदेव की बातें सुनकर सुनील के माता-पिता को आश्चर्य हुआ, पर उन्हें गुरुदेव की तप शक्ति पर श्रद्धा थी और सचमुच घर पहुँचकर सुनील में चित्रकला का अंकुरण हुआ। पूज्य गुरुदेव का वरदान साकार होने लगा। उसकी बनायी पेंटिंग्स चर्चित एवं प्रशंसित होने लगी। रेडियो एवं टी० वी० पर उसकी वार्ताएँ प्रसारित हुई। समाचार पत्र समय-समय पर उसके व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व को प्रकाशित करने लगे। श्री

दयाशंकर रस्तोगी एवं शकुन्तला रस्तोगी तो इस गुरु कृपा पर भाव विभोर हो गए। उन्होंने संकल्प लिया कि वे अपनी एक पुत्री का विवाह शान्तिकुञ्ज के ही किसी योग्य कार्यकर्त्ता से करेंगे। सन् 1994 में उन्होंने ब्रह्मवर्चस शोध संस्थान में कार्यरत, श्री सुरेश वर्णवाल से अपनी कन्या विद्योत्तमा का विवाह किया। गुरुदेव की कृपा के प्रति निष्ठावान् सुनील रस्तोगी अपनी अनुभूति महात्मा सूरदास के इन शब्दों में बयान करते हैं–

'जाकी कृपा पंगु गिरि लाँघै।'

मात्र आशीर्वाद से बच्ची स्वस्थ हुई

श्री वरदीचंद चौधरी, सुवासरामंडी मंदसौर

मेरी लड़की निर्मला मोदी की डिलेवरी हुई थी, जिसमें उसका दिमाग पागल जैसा हो गया था, फलतः मैं इलाज हेतु भटकता फिरा। 5 माह तक 25 डाक्टरों को दिल्ली में दिखाया, किन्तु वे भी किसी निर्णय पर नहीं पहुँच सके। एक दिन रात्रि को सोते हुए गुरुदेव की याद आई और सुबह ही मैं शान्तिकुञ्ज पहुँचने हेतु रवाना हो गया। शान्तिकुञ्ज में पहुँचकर गुरुदेव से मिला। उन्होंने कहा कि आपकी बच्ची ठीक होकर 15 दिन पश्चात् नोएडा से मुझसे मिलने स्वयं आवेगी। मेरी बच्ची गुरुदेव की वाणी से स्वस्थ हो गई व 15 दिन पश्चात् गुरुदेव से स्वयं मिलने गई। इस बीमारी के दौरान उसने बड़ी तादाद में गायत्री मंत्र लेखन किया। आज मेरी बच्ची पूर्ण स्वस्थ व प्रसन्न है। यह गुरुदेव की कृपा का ही फल है।

ऋण लौटाने हेतु मजबूर किया

चेन्नई के **श्री रामलाल खण्डेलवाल** जी ने अपने दस लाख रुपये एक मुसलमान व्यक्ति को ब्याज पर दे दिये। फिर वे जब भी अपने पैसे उनसे वापस माँगते, वह चाकू दिखाकर धमकी दे देता। वह किसी प्रकार भी पैसा लौटाने को तैयार नहीं था। रामलाल जी सोचने लगे कि अब तो हमारे दस लाख रुपये डूब गये। अब हमें, हमारा पैसा वापस नहीं मिलेगा। संयोग से शान्तिकुञ्ज की टोली वहाँ चेन्नई पहुँची। उन्होंने टोली के भाईयों से निवेदन किया, कि एक व्यक्ति मेरे दस लाख रुपये वापस नहीं कर रहा है। आप गुरुजी से निवेदन करना कि मुझे मेरा पैसा वापस मिल जाये। शान्तिकुञ्ज के भाईयों ने आश्वासन दिलाया कि आप चिन्ता न करें। हम गुरुजी से निवेदन करेंगे।

कुछ ही दिनों में उस मुसलमान व्यक्ति को एक भयावह स्वप्न हुआ। उसमें निर्देश मिला, ''तुमने जो दस लाख रुपये लिये हैं, उन्हें ब्याज सहित वापस कर दो।'' वह सुबह-सुबह तुरंत उनके सारे पैसे ब्याज सहित वापस करने पहुँच गया। उनके घर में गुरुदेव के चित्र को देखकर उसने स्वप्न के विषय में बताया और क्षमा याचना कर लौट गया। इस प्रकार गुरुजी पग-पग पर अपने बच्चों के हितों की भी रक्षा करते रहते हैं।

ऑपरेशन टला

राजस्थान के एक कार्यकर्ता अपनी कन्या के ऑपरेशन के लिए 13 हजार रुपये लेकर जयपुर जा रहे थे। अचानक मन में भाव उठने लगे, ''गुरुजी, कन्या के ऑपरेशन की जरूरत ही न पड़े। रास्ते में ही कन्या ठीक हो जाये। ऑपरेशन होने से शरीर पर निशान रह जाते हैं, फिर उसकी शादी के समय कहीं कोई दिक्कत न आये। अगर ऑपरेशन न हो, तो ये पूरे रुपये जो मैंने ऑपरेशन के लिए लाये हैं, शान्तिकुञ्ज में दान कर दूँगा।''

उनके प्रार्थना के शब्द पूज्य गुरुजी तक पहुँच गये। वे जयपुर पहुँचकर ऑपरेशन के पूर्व पुनः टैस्टिंग के लिए कन्या को अन्दर ले गये, इस बार जो भी मेडिकल रिपोर्ट आयीं, कुछ समय पहले कराये गये टैस्ट से उलट, सब नार्मल थीं। डॉक्टरों ने कहा, ''ऑपरेशन की कोई जरूरत नहीं है।'' उन्होंने अन्तर्हृदय से पूज्यवर के प्रति कृतज्ञता के भाव प्रकट किये और अपने आप से किये वायदे के अनुसार उन्होंने पूरे 13 हजार रुपये शान्तिकुञ्ज में दान कर दिये।

समाज निन्दा नहीं होने दूँगा

श्रीकृष्ण अग्रवाल कहते हैं कि मेरे चाचा श्री दाताराम को आँख व नाक के पास फोड़ा हो गया था। लोग उसे कोढ़ कहते थे। उनका पैर सुन्न हो गया था। चप्पल पहनते तो चप्पल कब पैर से निकल गई है, होश ही नहीं रहता। गुरुजी के पास गये उन्हें बताया, उन्होंने कहा, ''बेटे! मेरे रहते समाज निन्दा नहीं होने दूँगा। उसे कोढ़ नहीं होगा, तू निश्चिंत रह।'' और ऐसा ही हुआ वे उसके बाद स्वास्थ्य लाभ प्राप्त कर बहुत दिन जिए। जिनने भी गुरुवर का काम किया, उनके पूरे परिवार का पूज्यवर ने ध्यान रखा। सभी कृतार्थ हुए। वे अक्सर कहते भी रहे, ''तू मेरा काम कर, तेरा काम मैं करूँगा।''

नेत्र ज्योतिदान

श्री विश्वप्रकाश त्रिपाठी, शान्तिकुञ्ज

उन दिनों की बात है, जब मैं अल्मोड़ा में पोस्टेड था। उस कॉलेज के वीसी साहब की एक आँख की ज्योति चली गई थी। मैंने उन्हें गुरुदेव के विषय में बताया और उन्हें टैक्सी से शान्तिकुञ्ज ले आया। पूज्यवर से सब बात बताई और निवेदन किया। वे कृपालु तो थे ही, विनती मान गये। स्वयं दीक्षा की मुद्रा में बैठे व वी. सी. साहब को भी बैठाया। थोड़ी देर में उनके नेत्रों में करेण्ट सा प्रवाहित हुआ और उनकी नेत्र ज्योति आ गई।

उन्होंने स्वयं को धन्य माना तथा मिशन के कार्यों में सहयोग करते रहे।

मेरे कथन का मान रखा

श्री राजेन्द्र अग्रवाल, बिलासपुर

दिनांक 12 मई सन् 1980 को पूज्य गुरुदेव सरकण्डा प्रज्ञा पीठ के उद्घाटन हेतु बिलासपुर आये हुए थे। रात्रि विश्राम हमारे घर पर ही किया था।

रात लगभग 8 बजे मेरे मित्र श्री शिवकुमार चतुर्वेदी आए और मुझसे कहा कि मेरे पिताजी को डॉक्टर ने जवाब दे दिया है। वे पिछले कई दिनों से हॉस्पिटल में भर्ती थे।

मैंने अपने दोस्त से कहा, ''आपके पिता जी को कुछ नहीं होगा, मैं गुरुजी से आशीर्वाद लेकर आता हूँ।'' उसके पश्चात् गुरुजी से आशीर्वाद लेने के लिए पहुँचा। पूरी घटना की जानकारी दी।

गुरुजी ध्यानस्थ हो गये। थोड़ी देर बाद उन्होंने आशीर्वाद देने से मना कर दिया, बोले-''बेटा! उनका समय पूरा हो गया है, परिवार के प्रति सारी जिम्मेदारी भी पूरी हो गई है।''

उनके आशीर्वाद देने से मना करने के पश्चात् मेरी आँखों में आँसू आ गये। सोचने लगा-''दोस्त को क्या जवाब दूँगा? मैंने तो ठीक हो जायेंगे, कह दिया था।''

भला विधाता से मन की बात कैसे छिपी रह सकती थी? मेरे आँसू देखकर उन्होंने कहा-''बेटे! तूने मुझसे पूछे बिना ही उसे ठीक होने के लिये कह दिया।''

और पुनः मौन हो गये। थोड़ी देर बाद उन्होंने कहा-''अच्छा तूने कह ही दिया है तो उन्हें एक वर्ष कुछ नहीं होगा। जा, मैंने एक वर्ष हेतु जीवन दान दिया।''

''इस प्रकार गुरुजी ने मेरे कथन का मान रख लिया और उन्हें एक वर्ष के लिये ठीक कर दिया। हम सबने देखा। उनकी स्थिति दिनोंदिन सुधरने लगी व ठीक हो गये। ठीक एक वर्ष बाद उनकी तबीयत पुनः बिगड़ी और उन्होंने शरीर त्याग दिया।''

ऐसे थे हमारे पूज्य गुरुदेव। इतने कृपालु कि हमारे वचन का मान रखने के लिये एक वर्ष हेतु अपने विधान को रोक दिया, किन्तु हमारे वचन को असत्य नहीं होने दिया। उन्होंने हमें जितना दिया उसका एक कण भी हम नहीं चुका सकते।

गुरुदेव का परिचय मेरे पाठ्यक्रम में शामिल हुआ

अरुण कुमार शैव्य, शुजालपुर

दिनांक 13 से 16 अप्रैल 1974 को प्रथम बार हरदा में गायत्री महायज्ञ था। बैतूल से श्री भुवनेश्वर जी उपाध्याय इस आयोजन को सम्पन्न करने आए, सहयोगी के रूप में मैं भी उनके साथ आया था। विरोधी मानसिकता के लोगों ने वहाँ इन्हीं तारीखों में विष्णु महायज्ञ रखा। हमारे महायज्ञ को उन्होंने शूद्रों का यज्ञ कहकर नगर में प्रचारित करवा दिया। स्थानीय कार्यकर्त्ता निराश थे, चन्दा एकत्रित करना बड़ा कठिन था। गुरुदेव स्वयं हमारी परीक्षा ले रहे थे। 16 अप्रैल को ही मेरा सागर में एम. ए. संस्कृत अंतिम वर्ष का एक पेपर मौखिक परीक्षा का था। अब परीक्षा की घड़ी यहाँ भी थी और वहाँ भी। सायंकाल प्रवचन में पंडित समुदाय उपस्थित था। उन लोगों ने विरोध करने की नीयत से आड़े-तिरछे प्रश्न किये। जीवन में प्रथम बार प्रवचन करने मैं मंच पर बैठा। इस दौरान उनके प्रश्नों का उत्तर, शंका-समाधान सप्रभाव प्रस्तुत किया। उसी समय रात्रि को गोरखपुर एक्सप्रेस से सागर रवाना हुआ। यज्ञ की व्यस्तता के कारण पढ़ाई न हो सकी थी। भीड़ में सारी रात रेल के दरवाजे पर खड़े-खड़े जागते रहे, एवं परीक्षा में आने के लिए सारी रात गुरुदेव का आह्वान करते रहे।

मैं 3 घंटे देरी से विश्वविद्यालय पहुँचा। संस्कृत विभाग अध्यक्ष डॉ. रामजी उपाध्याय मेरे परीक्षक थे। वे देर से आने के कारण नाराज हुए। मैंने क्षमा

याचना की एवं कहा, ''सर, मैं हरदा में गायत्री महायज्ञ में गया था।'' ''यज्ञ करते हो?'' ''हाँ।'' ''क्यों करते हो? वर्ण एवं संस्कार कौन-कौन से हैं। आपके गुरुदेव कौन हैं? उनका जीवन परिचय दीजिए, वे किस तरह युग निर्माण करना चाहते हैं?'' मैंने सभी प्रश्नों का उत्तर बड़ी कुशलता से दिया। वे हँसते हुए बोले, ''आपकी परीक्षा समाप्त हुई।'' फिर उन्होंने अलमारी से एक पुस्तक निकालकर मुझे भेंट की। उनकी स्वरचित पुस्तक का नाम ''द्वासुपर्णा'' था। इसे ध्यान से पढ़कर लिखना, गुरुदेव की 'युग निर्माण योजना' को हमने 'कृष्ण-सुदामा' नाटक के माध्यम से प्रस्तुत किया है।

बाद में मुझे अहसास हुआ कि गुरुदेव ही परीक्षक के मस्तिष्क में प्रवेश कर मेरी परीक्षा ले रहे थे। रात भर मैंने उनका आह्वान जो किया था। अब तक गुरुदेव का जीवन परिचय किसी भी विश्वविद्यालय के कोर्स में नहीं था, लेकिन मेरी व्यक्तिगत परीक्षा के कोर्स में अवश्य था।

पुस्तक में नहीं पढ़ा, वह ज्ञान मिला

श्री शिव पूजन सिंह, शान्तिकुञ्ज

घटना सन् 1976 की है। एक लड़का मुम्बई से आया था। मैं भी शिविर में था। तब कभी भी कोई भी गुरुदेव के पास मिलते-बैठते थे। मैं भी ऊपर ही बैठा था कि वह लड़का आया। बोला, ''गुरुजी, मैं रिसर्च कर रहा हूँ।'' गुरुदेव ने पूछा, ''किस पर?'' वह बोला, ''सुषुम्ना नाड़ी पर।'' इतना सुनते ही पूज्य गुरुदेव ने सुषुम्ना नाड़ी की पूरी व्याख्या कर दी।

वह लड़का हतप्रभ होकर देखता रह गया। उस दिव्य ज्ञान को प्राप्त कर गदगद हो उठा और गुरुदेव को प्रणाम कर नीचे आकर कहने लगा, ''मैंने आज तक जो ज्ञान पुस्तकों में कहीं नहीं पढ़ा, वह अद्‌भुत ज्ञान गुरुजी ने मुझे दे दिया।''

ऐसे परम ज्ञाता थे पूज्यवर। जिसने जिस विषय पर समाधान प्राप्त करना चाहा, वह उसे प्राप्त हुआ।

ऐसे ही एक बार एक वैज्ञानिक अणुविज्ञान पर रिसर्च कर रहे थे। वे अपनी व्यक्तिगत समस्या पर आशीर्वाद लेने आये थे। पूज्य गुरुदेव ने उनसे उनके कार्य के विषय में पूछा तो उस विषय पर थोड़े से ही पलों में गुरुजी ने इतना सारगर्भित ज्ञान दे दिया, जो पुस्तकीय ज्ञान से परे का ज्ञान था। वे पूज्यवर

की अतीन्द्रिय क्षमता एवं दिव्य ज्ञान संपदा से अत्यधिक प्रभावित हुए। फिर गुरुजी से पूछा, ''गुरुजी, यह तो वैज्ञानिकों का विषय है। आपको इतना सब कुछ कैसे पता?'' गुरुजी बोले, ''बेटा! अध्यात्म में सब कुछ है। जहाँ विज्ञान की सीमा समाप्त हो जाती है। अध्यात्म, वहाँ से शुरू होता है। वह सबसे बड़ा विज्ञान है।''

माताजी का आशीर्वाद

श्री ओमप्रकाश गुप्ता, इन्दौर

प्रसंग नंदनवन यात्रा के समय का है, शपथ समारोह के ठीक बाद मैं और मेरे चार अन्य साथी माताजी से नन्दन वन यात्रा के लिए आशीर्वाद लेने गए। माताजी ने मुस्कराते हुए नन्दन वन यात्रा सकुशल होने के लिए आशीर्वाद दिया। नन्दन वन से तपोवन के लिए जब हम चल रहे थे कि अचानक मेरा पैर फिसलने की वजह से मैं नीचे गहरे हिमकुण्ड में फिसलने लगा। 4-5 फीट नीचे फिसलने के बाद ऐसा लगा मानो किसी ने सहारा देकर रोक दिया हो। तभी हमारे साथ चल रहे गाइड ने मुझ तक पहुँचने का रास्ता बनाया और मुझे मौत के मुँह से वापस ऊपर खींच लिया। वास्तव में माताजी के आशीर्वाद की वजह से ही हमारी हिमालय यात्रा सकुशल हो पाई व मैं मौत के मुँह से वापस लौट सका।

गठान गायब हो गई

नीता एम. भट्ट, इन्दौर

बात उन दिनों की है, जब गुरुदेव झाबुआ के कार्यक्रम में आये थे। मैंने पूज्यवर के प्रथम दर्शन तब किये थे। सौभाग्य से मेरा विवाह गायत्री परिवार में ही हुआ। बात फरवरी 1992 की है, हमारे यहाँ द्वितीय पुत्र का जन्म हुआ। जन्म से ही बेटे को एक गठान थी। चिकित्सकों ने उसे हार्निया की गठान बतलाकर आपरेशन करने की सलाह दी।

बच्चा अभी तीन माह का ही था और डाक्टर आप्रेशन करने के लिये कह रहे थे। मैं सोच-सोच कर परेशान थी। इस दौरान पतिदेव ने कहा, ''क्यों नहीं, यह बात माताजी से कही जाए।'' हम लोग शान्तिकुञ्ज, हरिद्वार गये। दोपहर में 1.00 बजे जब माताजी से मिलने गए, तब हम लोगों ने बच्चे के कष्ट

के बारे में माताजी से कहा। माताजी बोलीं, ''क्या बेटा! आपरेशन करवाना पड़ेगा।'' मैंने कहा, ''हाँ माताजी, इसीलिये हम चिन्तित हैं।'' माताजी बोलीं, ''बेटा तुमने शान्तिकुञ्ज के डॉक्टरों को दिखाया क्या? जा बेटा जा, नीचे शान्तिकुञ्ज के डॉक्टर बैठे हैं। उन्हें दिखा दे, सब ठीक हो जायेगा।''

इधर माताजी के श्रीमुख से शब्दों का निकलना हुआ और तुरन्त ही बच्चे की गठान गायब हो गई। घर आकर भी हम लोग ढूँढते रहे। गठान कहाँ गई? किसका आपरेशन करना है? ऐसे वरदान बाँटती थीं माताजी, जिनसे हम भी धन्य हुए।

माताजी की दिव्य दृष्टि

श्री डी. पी. सिंह, श्री बी. के. शर्मा, इन्दौर

बात सन् 77-78 की है। इन्दौर से हम लोग हरिद्वार जा रहे थे। हमारे एक साथी श्रीकृष्ण राठौर जो कि स्वभाव से गरम और व्यवहार में नरम थे। नागदा स्टेशन पर बिना बताये उतर कर भीड़ को देखने लगे। उनसे कहा भी गया था कि यहाँ उतरना नहीं, क्योंकि डिब्बे कटकर दूसरी गाड़ी में लग जाते हैं और गाड़ी रवाना हो जाती है। बताने के बावजूद वे उतरे और गाड़ी रवाना हो गई। वे वहीं छूट गये। हम सब लोग परेशान होने लगे पर कर क्या सकते थे।

कोटा पहुँचे वहाँ उद्घोषणा हो रही थी कि यदि डी. पी. सिंह सुनते हों तो उनका एक साथी श्री कृष्णसिंह राठौर नागदा में ही रह गया है। फरवरी का महीना था। ठंड खूब पड़ रही थी। कोई रुकने को तैयार नहीं था। आखिर गाड़ी चलती गई और हरिद्वार पहुँची।

नियमानुसार प्रथमत: माताजी के दर्शनों को गये। जैसे ही चरण स्पर्श किये माताजी ने कहा, ''बेटा, एक को कहाँ छोड़ आये?'' मैंने सोचा, माताजी को हमारे किसी साथी ने पहले ही कह दिया होगा। मैंने उत्तर दिया, ''माताजी, वह नागदा रेलवे स्टेशन पर रह गया। हमने पहले ही उसे उतरने से मना किया था।'' माताजी गंभीर होकर बोलीं, ''अच्छा बेटा! वह आ जाएगा।''

श्री राठौर दूसरी गाड़ी से अगले दिन सुबह आ गये। चार बजे की प्रार्थना में हमें मिले। हम लोगों ने भगवान को धन्यवाद दिया और माताजी की बात बताई। राठौर जी ने कहा, ''जब मैंने देखा कि गाड़ी चल दी है, तो मेरे होश

उड़ गए। उसी दरम्यान मुझे गुरुजी और माताजी के दर्शन हुए। क्या अद्‌भुत संयोग था कि इतने में दूसरी गाड़ी आ गई। शायद वह लेट थी और मैं उसमें चढ़ गया।''

हम सब उनके मुँह की ओर देखते रह गये। माताजी के पूछने व उनकी गंभीरता का रहस्य भी हमें समझ में आ गया था।

बच्चा बोल उठा

श्री श्यामलाल बंसल, असन्ध

मेरे बच्चे के सिर की हड्डियों में बचपन से ही गड़बड़ी थी। पी.जी.आई. चण्डीगढ़ में डॉक्टरों ने सी.टी.स्कैन करके आप्रेशन के लिए बोल दिया था। जिसमें एक लाख रु. व्यय होना था। प्राणों का भय अलग से था। उस समय मैं मिशन से नया-नया जुड़ा था। मैं और जैन साहब बच्चे को लेकर माताजी के पास पहुँचे। हम पंक्ति में खड़े थे। अचानक बच्चा बोला ''पापाजी, अब मुझे आप्रेशन नहीं कराना पड़ेगा।'' जबकि उसकी आयु केवल तीन वर्ष की थी। सुनकर हमें बहुत हैरानी हुई। जब हमने माताजी को सब समस्या बताई तो माताजी ने बच्चे के सर पर हाथ फेरा और ठीक होने का आश्वासन दिया। लौटने पर जब पुनः सी.टी. स्कैन हुआ तो डॉक्टर आश्चर्यचकित रह गए। बीमारी छू-मन्तर हो चुकी थी। यह सब माताजी की कृपा ही थी।

12. भागीदारी की, नफे में रहे

परम पूज्य गुरुदेव ने अपने एक प्रवचन में कहा है कि बेटा मैं किसी का ऋणी नहीं रहूँगा। वे अति विनम्र होकर कहते हैं, '' जिनने भी हमारी कुछ सेवा सहायता की है, उनकी हम पाई-पाई चुका देंगे। न हमें स्वर्ग जाना है न मुक्ति लेनी है। चौरासी लाख योनियों के चक्र में एक बार भगवान से प्रार्थना करके इसलिये प्रवेश करेंगे कि इस जन्म में जिस-जिस ने जितना-जितना उपकार हमारा किया हो, जितनी सहायता की हो उसका एक-एक कण ब्याज सहित हमारे उस चौरासी लाख चक्र में भुगतान करा दिया जाय।'' ''इच्छा प्रबल है कि अपना हृदय कोई बादल जैसा बना दे और उसमें प्यार का इतना जल भर दे कि जहाँ से एक बूँद स्नेह की मिली हो, वहाँ एक प्रहर की वर्षा करते रह सकें।'' प्रेम तो पूज्यवर ने इतना लुटाया कि हर कोई उनका गुणगान करते नहीं थकता। अनुदान वरदान भी कम नहीं दिये। यहाँ कुछ ऐसे प्रसंग दिये जा रहे हैं जब उन्होंने साधारण से व्यक्ति को कहाँ से कहाँ पहुँचा दिया।

25 परसेण्ट निष्ठापूर्वक लगाते रहे

पालीताणा (भावनगर) के **श्री जनकभाई सोमपुरा** एक मामूली मूर्तिकार थे। जब पूज्यवर से जुड़े, तब मात्र 1400 रुपये में घर के पाँच सदस्यों का जीवन निर्वाह मुश्किल से होता था। उन्होंने श्रद्धा भावना से अंशदान देना शुरू किया। पहले थोड़ा-थोड़ा देते थे। फिर महीने में एक दिन का वेतन देने लगे। जैसे-जैसे पूज्यवर के कार्य में उन्होंने धन लगाना शुरू किया, वैसे-वैसे उनके घर में भी समृद्धि बढ़ने लगी। वे एक ठेकेदार बन गये। अब जैन मन्दिर बनाने के बड़े-बड़े ठेके भी मिलने लगे। वे अपनी शुद्ध कमाई का 10 परसेण्ट निकालने लगे। गायत्री शक्तिपीठ के निर्माण एवं व्यवस्था से लेकर पूज्यवर की पुस्तकें गुजराती भाषा में छपवाने एवं उनके प्रचार-प्रसार में काफी धन लगाते

रहे। फिर निश्चय किया कि मैं 25 परसेण्ट लगाया करूँगा। इस प्रकार जितना लगाते उससे कई गुना गुरुजी उन्हें देते रहे। उन्हें बड़े-बड़े मन्दिरों के ठेके मिलने लगे। वे लाखों रुपये गुरुजी के कार्य में खर्च करने लगे।

एक बार उनके मन में कंजूसी के विचार आये, ''कोई और तो इतना पैसा लगाता नहीं है। मैं ही इतना पैसा क्यों लगाऊँ ?'' फिर उनके छोटे-छोटे काम जो सहज होते जाते थे, कभी पता ही नहीं चलता था, अटकने लगे। वे घबराये। फिर एक दिन आत्म चेतना ने झकझोरा, ''तुमने निश्चय किया था, 25 परसेण्ट लगाने का। तुमने पूज्यवर को 25 परसेण्ट का पार्टनर बनाया था। सो तुम्हारे काम में घाटा या बाधा कैसे आ सकती थी ? सब काम सहज होते रहते थे। अब तुम गुरुजी के साथ कंजूसी करोगे, तो वे क्यों न करेंगे ? तुम अपने संकल्प से हट रहे हो, इसीलिए छोटे-छोटे काम अटक रहे हैं।'' उन्होंने अपनी भूल सुधारी और पुनः 25 परसेण्ट निकालने लगे। अब पुनः उनके सब काम सहज ढँग से होने लगे।

सराहनीय निष्ठा एवं समर्पण

लखनऊ के **श्री लोकनाथ रुद्रा** जी की पूज्यवर के कार्यों में बड़ी अद्‌भुत निष्ठा एवं समर्पण भावना थी। उन्होंने सन् 1958 के सहस्र कुण्डीय यज्ञ में भाग लिया था। वे गुरुजी के पास गए और कहा, ''गुरुजी ! मैं क्या सेवा करूँ ?'' तो गुरुजी ने कहा, ''तुम, लंगर की व्यवस्था सँभाल लो।'' तब वे बोले, ''गुरुजी ! तब तो मैं यज्ञ नहीं कर पाऊँगा। सुबह से रात तक उसी में लगना पड़ेगा।'' गुरुजी बोले, ''बेटा ! वही असली यज्ञ है। तुम्हें यज्ञ का सम्पूर्ण पुण्य उसी से मिल जायेगा।''

उस समय तक स्टोर में केवल बीस बोरे चावल ही इकट्ठे हो पाये थे। सुबह सब निकाल लिये गये। हमें चिंता हुई कि अभी तो पहला ही दिन है, आगे कैसे काम चलेगा ? गुरुजी से कहा, तो गुरुजी बोले, ''चिंता मत करो। बस काम करते रहो।'' लोग यज्ञ करने आते, साथ में अपने घर से पोटली बाँध कर लाते, शाम तक पूरा भण्डार भर जाता। रोज ऐसा ही होता रहा। यज्ञ पूरा हो गया था। भण्डार फिर भी भरा था। यज्ञ पूरा होने पर मैंने गुरुजी से पूछा, ''गुरुजी ! अब मेरे लिए क्या आदेश है ?'' तो गुरुजी ने कहा, ''बेटा ! मेरा काम करोगे ? तो मेरी गायत्री को घर-घर पहुँचा दो।'' मैंने गुरुजी से पूछा, ''इसके

लिए मुझे क्या करना होगा?'' गुरुजी ने कहा, ''बेटा! इसके लिए अपना आपा ही उड़ेल दो। बेटा, जो भी छुट्टी मिले, उसे हमारे काम में लगाना।''

वे कहते हैं, ''हमने गुरुजी का आदेश माना। जो भी छुट्टी मिलती, उसे पूरी निष्ठा से गुरुजी के काम में ही लगाते रहे। कभी ऐसा नहीं हुआ, कि हम कभी छुट्टी में पत्नी को स्कूटर पर बिठाकर कहीं घुमाने ले गये हों। शनिवार, रविवार और जो भी छुट्टी मिलती, उसमें गुरुजी के कार्य हेतु लखनऊ शहर के मुहल्ले-मुहल्ले, गली-गली में निकल जाते। आसपास के गाँवों में निकल जाते।''

गुरुजी ने उन्हें इतना सम्मान दिया कि शान्तिकुञ्ज से जो भी कार्यकर्त्ता लखनऊ जाते, उससे गुरुजी कहते, ''बेटा! वहाँ मेरे जैसी एक तड़पती आत्मा बैठी है। उससे जरूर मिलकर आना।'' जीवन के अन्तिम समय तक, बिस्तर पर रहते हुए भी गुरुजी के कार्य के प्रति उनके अन्दर बड़ी तड़पन बनी रहती थी। सन् 2008 में वे गुरुजी में विलीन हो गये।

पूज्यवर ने नये युग का नया इतिहास रचा है।

गारियाधार (भावनगर) के कार्यकर्त्ता दामजी भाई एस. पटेल

पूज्यवर के कार्यों हेतु बहुत समर्पित थे। वे बताते थे, सन् 1999 में 87 वर्ष की उम्र में उन्हें सीवियर हार्ट अटैक हुआ था। जल्दी से अस्पताल ले गये। वहाँ डॉक्टरों ने नब्ज देखी, तो पाया कि वे शरीर छोड़ चुके हैं। उन्होंने बताया, ''जैसे ही मेरी मृत्यु हुई, मैंने देखा, मेरी चेतना सीधे पूज्य गुरुजी के पास गयी। गुरुजी मुझे छाती से लगाकर खूब प्यार देने लगे। उन्होंने कहा, 'बेटे तुमने हमारा खूब काम किया है, मैं बहुत खुश हूँ, तुम्हारे काम से।' मैंने गुरुजी से कहा, 'गुरुजी हमने आपका काम किया है, तो उसका प्रमाण क्या है?' बोले, 'बेटा! प्रमाण माँगता है? तो देख!' उन्होंने एक मोटी इतिहास की पुस्तक आगे की। (वह इतिहास अभी लिखा नहीं गया है, पूज्य गुरुदेव ने सूक्ष्म स्तर पर वह नये युग का नया इतिहास लिख कर रख दिया है।) उसमें लिखा था, 'गारियाधार के सर्वश्रेष्ठ कार्यकर्त्ता, श्री दामजी भाई एस. पटेल के सम्पूर्ण त्याग-पुरुषार्थ की सारी कथा-गाथाएँ।' मैं पढ़कर बहुत खुश हुआ। फिर गुरुजी कहते हैं, 'बेटा!

इस निन्यानवे के वर्ष में, मैं तुम्हें एक उपहार देता हूँ, नया जीवन दान। जा, तू हमारा काम करना।'

तुरन्त मेरी चेतना वापस शरीर में लौट आयी, कुछ पल ही बीते थे, मैं मृत से फिर जीवित हो उठा था। सभी आश्चर्यचकित थे।''

(फिर इस उम्र में भी वे नाती-पोतों के मोह में नहीं फँसे। जब तक जिये, पूज्यवर का कार्य निष्ठापूर्वक घर-घर जाकर करते रहे। लगभग आठ वर्षों के उपरान्त उनकी मृत्यु सुखद रूप से हुई।)

पाँच परसेण्ट का पार्टनर बनाया

चेन्नई के तेजराजसिंह राजपुरोहित जी ने नई दुकान खोली। वन्दनीया शैल जीजी से बात की, ''जीजी, मैं नई दुकान खोल रहा हूँ, टोपी की।'' जीजी ने कहा, ''तुम्हारी टोपी बहुत चलेगी। चिन्ता मत करना। कमाई का एक अंश गुरुजी के चरणों में रखते जाना।'' उन्होंने कहा, ''हाँ जीजी! मैंने गुरुजी को पाँच परसेण्ट का पार्टनर बनाया है।'' फिर पहले वर्ष ही उन्हें बीस लाख का फायदा हुआ। दूसरे वर्ष चालीस लाख का। इस प्रकार तीसरे, चौथे वर्ष भी उन्हें फायदा हुआ। वे निष्ठापूर्वक अपनी कमाई का 5 परसेण्ट गुरुदेव के कार्यों हेतु निकालते रहते हैं। उनका कार्य बढ़ता ही गया, क्योंकि उन्होंने गुरुजी को पार्टनर जो बना दिया था, वे दुकान में मंदी कैसे होने देते?

यह तो ब्याज भी नहीं है

जयपुर के श्री वीरेन्द्र अग्रवाल जी मिशन के कार्यों के लिये खूब अनुदान देते रहते हैं। उनकी पत्नी से शान्तिकुञ्ज की एक कार्यकर्ता बहन ने चर्चा के दौरान कहा, ''आप तो खूब दान करते रहते हैं।'' इस पर उन्होंने श्रद्धापूर्वक हाथ जोड़ते हुए कहा, ''हम क्या दे सकते हैं? गुरुजी ने हमें जो दिया है, यह तो उसका ब्याज भी नहीं है।''

ऐसे लाखों कार्यकर्ता हैं, जो यह कहते हैं कि गुरुजी ने उन्हें दुकान, मकान, तरक्की, संतान, स्वास्थ आदि जिसकी उनके पास कमी थी, वह दिया। ऐसे औघड़दानी हैं पूज्य गुरुदेव। उनके खेत में जिसने भी कुछ बोया है, गुरुजी ने उसे हजारगुना करके लौटाया है।

13. उनकी चेतना आज भी सक्रिय है

सन् 1990 में जहाँ पूज्य गुरुदेव अपने स्थूल शरीर को समेट रहे थे, वहीं सूक्ष्म शरीर से उनकी चेतना अति सक्रिय थी। अनेकों परिजनों के पास वे सूक्ष्म शरीर से गये, उनसे बातचीत की। स्वप्नों में लोगों की समस्याओं का समाधान किया। इतना ही नहीं, हजारों ऐसे लोगों से भी मिले, (सूक्ष्म शरीर एवं स्वप्न में) जो उन्हें पहचानते भी नहीं थे। उनके पास जाकर उनकी समस्याओं का समाधान किया। बाद में वे लोग उनके चित्र को देखकर उन्हें ढूँढ़ते हुए शान्तिकुञ्ज पहुँचे व सक्रिय कार्यकर्ता बन गये। गुरुदेव ने लिखा था, ''ये कारवाँ रुकेगा नहीं'' और इसकी व्यवस्था भी वे स्वयं ही करते रहे हैं। इसी का परिणाम है कि उनके स्थूल शरीर छोड़ने के बाद भी 'युग निर्माण योजना' का विस्तार पच्चीस गुनी शक्ति से बढ़ता चला गया है।

क्रान्तिधर्मी साहित्य की अनेकों पुस्तकों में उन्होंने लिखा है, जो कार्य इस शरीर से बन पड़ा है, वह एक परसेण्ट ही है। शेष 99 प्रतिशत कार्य तो अदृश्य सत्ताओं ने ही किया है। अपनी गोष्ठियों में उन्होंने आश्वासन दिया था, ''बेटा, हम कहीं नहीं जा रहे। यहीं रहेंगे। अखण्ड-दीपक में, सजल श्रद्धा-प्रखर प्रज्ञा में निवास करेंगे। जब चाहो हमसे बात कर लेना।''

आज भी उनकी चेतना पहले की भाँति सक्रिय है। अपने हीरे-मोतियों को ढूँढ़-ढूँढ़ कर इकट्ठा करती रहती है। आज भी परिजनों से मिलती है, कहीं स्वप्न में, कहीं ध्यान में, कभी-कभी स्थूल में भी तो कभी विचार प्रवाह के रूप में। वह अपने बच्चों का मार्गदर्शन करती रहती है। और ये कारवाँ बढ़ता चला जा रहा है। यहाँ ऐसे ही कुछ प्रसंग हैं, जिनमें गुरुदेव ने स्वप्नों आदि के माध्यम से परिजनों का समाधान किया है।

मत जाना बेटी

डॉ. मंजू जीजी अपना अनुभव बताते हुए कहती हैं कि मैंने सन् 1972 में एम.बी.बी. एस. किया एवं सन् 1979 में एम.डी.।

मुझे गुरुदेव ने ही ढूँढ कर स्वयं मिशन से जोड़ा है। उड़िया अनुवाद हेतु बिना चिट्ठी पत्री के ही मेरे पास उन्होंने स्वयं मैटर भिजवाया था। दूसरी घटना सन् 1990, श्रद्धांजलि समारोह की है। मैं इस कार्यक्रम में सम्मिलित होने आई थी। एक हफ्ते रही। कार्यक्रम समाप्त होने के बाद का मेरा रिजर्वेशन था, अत: माताजी से मिलने गई। माताजी ने मुझे ऊपर गुरुजी के कमरे में प्रणाम करने भेजा। वहाँ गई, तो अचानक मुझे गुरुजी की स्पष्ट आवाज सुनाई दी- 'मत जाना बेटी।'

मैं आवाज सुनकर बड़े पशोपेश में पड़ गई। मेरी टिकट हो चुकी है। फिर सर्विस का क्या होगा? डॉ. साहब(पति) भी नाराज होंगे। क्या करूँ? सोचते हुए नीचे उतरी। माताजी से बताया। तब माताजी ने कहा-''तेरी इच्छा, देख ले बेटी।''

अब निर्णय पूर्णतया मेरे ऊपर ही था। मन को कड़ा किया और जो होगा देखा जायगा, कह कर यहीं शान्तिकुञ्ज में रह गयी। उस समय मैं सात महीने रही। बाद में डॉ. साहब श्री प्रसन्न कुमार जी स्वयं आये व मुझे लेकर गये। उन्होंने कुछ नहीं कहा। इसे मैं पूज्य गुरुदेव की ही कृपा मानती हूँ।

तू कहाँ रुक गया ?

डॉ० शिवानंद साहू, शान्तिकुञ्ज

1970 में जब मैं मेडिकल का छात्र था, उन्हीं दिनों पूज्य गुरुदेव द्वारा बिलासपुर के एक कार्यक्रम में मैंने दीक्षा ली थी। डाक्टर बनने के बाद हर यज्ञ आयोजन के साथ नि:शुल्क चिकित्सा व उत्तम स्वास्थ्य पर गोष्ठियाँ लेने लगा और ज्ञानरथ भी चलाता रहा। शान्तिकुञ्ज भी आता रहता था।

1991 में सितम्बर माह में रात्रि लगभग 2:30 बजे निद्रा अवस्था में ही पूज्य गुरुदेव की आवाज अंतरात्मा में सुनाई पड़ी, लगा जैसे गुरुदेव बोल रहे हैं, ''बेटा उठ! चल आ जा। कहाँ रुका हुआ है? तुझे तो किसी और काम के लिए

भेजा गया है और तू कहाँ रुक गया? इस रूप में तो एक बार में एक की ही नाड़ी पकड़ पाता है। पर तू तो एक बार में एक साथ हजारों का इलाज कर सकता है।'' इस आवाज़ में मेरी नींद खुल गई। चारों ओर देखा, कहीं कुछ दिखाई नहीं पड़ा। फिर सोने का प्रयास किया पर नींद ही नहीं आई। यह क्रम लगातार 3 दिनों तक चला।

मैंने माताजी को पत्र लिखा। जवाब आया, ''बेटा! शान्तिकुञ्ज तो तेरा घोंसला है। अपने घोंसले में जल्दी आ जा।'' तब मैं मध्य भारत पेपर मिल में मेडिकल एडवाइजर के रूप में कार्यरत था। एक माह के अन्दर ही वहाँ का हिसाब कर मैं, 3 नवम्बर 1991 को स्थायी रूप से शान्तिकुञ्ज आ गया।

तेरी माँ बुला रही है

बहन, **श्रीमती ऊषा श्रीवास्तव**, आजमगढ़, गुरुटोला, उ.प्र. बताती हैं कि मेरे जीवन में कई परेशानियाँ आईं। बहुत बार ऐसा आभास हुआ कि गुरुदेव ने साक्षात रूप में स्वयं आकर सहायता की। 1992 में मेरी तीनों बच्चियों को एक साथ बड़े दाने वाली चेचक निकली। मेरी बड़ी बेटी कक्षा दस में पढ़ती थी। उसकी बोर्ड की परीक्षा थी। दो-तीन पेपर हो चुके थे। इसी बीच वंदनीया माताजी का समयदान हेतु पत्र आया। घर की परेशानी देख कर मेरे पति ने कहा कि मैं शान्तिकुञ्ज पत्र भेज देता हूँ कि घर में परेशानी है, बच्चे ठीक हो जाऐंगे, तब मैं समयदान में आऊँगा। हम लोग बातचीत करके सोये ही थे कि पतिदेव ने देखा, ''गुरुजी आये हैं और कह रहे हैं, तेरी माँ बुला रही है और तू जाने से इन्कार कर रहा है। तू जा समय दे। तेरे बच्चों को मैं देख लूँगा।''

मेरे पति समयदान के लिये चले गये। मैं अकेले ही बच्चों को, घर एवं बाहर के सब कामों को देखती। बड़ी बेटी की परीक्षा दिलवाने उसे कालेज भी ले जाती रही। गुरुजी की शक्ति का एहसास भी होता रहा और उनकी कृपा से मेरे बच्चे बहुत जल्दी ठीक हो गये। बड़ी बेटी का हाई स्कूल का रिजल्ट भी बहुत अच्छा रहा। ऐसे ही जीवन में अनेकों बार मुझे एहसास हुआ है कि गुरुजी ने अपने बच्चों से जो वादा किया है कि 'बेटा तू मेरा काम कर, तेरा काम मैं करूँगा' तो उसे वह समय आने पर निभाते भी हैं। बस! हमारे विश्वास और समर्पण में कहीं कमी नहीं रहनी चाहिये।

जब मैं स्वप्न के ऋषि को ढूँढ़ती रही

पटियाला की **अनीता शर्मा** बहिन ने बताया कि बात मई-जून 1990 की है। अचानक ही हमारे परिवार पर जैसे मुसीबतों का पहाड़ टूट पड़ा। मेरे पति का बिजनेस फेल हो गया। वे जिस भी काम में हाथ डालते उसी में घाटा हो जाता। घर में कलह क्लेश रहने लगा। मैं रोज ही किसी न किसी ज्योतिषी के चक्कर काटने लगी। मैं बहुत परेशान थी। एक रात को मैं रोते-रोते सो गई, तो सपने में क्या देखती हूँ कि एक ऋषि बहुत ही शांत मुद्रा में पहाड़ी पर बैठे हुए कुछ लिखते ही जा रहे हैं। मन हुआ कि उनसे पूछूँ कि हमसे क्या गलती हुई है ? हमारे ऊपर, क्यों इतने कष्ट आ पड़े हैं ? पर वह तो आँख ही नहीं उठाते, उनकी कलम ही नहीं रुक रही। काफी देर बाद जब उन्होंने लिखना छोड़ कर सिर उठाकर मेरी ओर देखा, तो मैंने उन्हें प्रणाम किया। वे बोले, ''सब क्या कहते हैं, तेरे पति का काम बाँध दिया है।'' मैंने 'हाँ' में सिर हिलाया। फिर वे बोले, ''तू कल मेरे पास आ जाना।'' इससे पहले कि मैं उनसे पूछती कि क्या-क्या लेकर आऊँ ? वे फिर लिखने लगे। सुबह जब आँख खुली तो उन ऋषि का आभा मंडित चेहरा मेरी आँखों के सामने घूमने लगा। मैंने दैनिक उपासना के क्रम में गीताजी की समाप्ति के बाद उसमें लिखा गायत्री मंत्र पढ़ा और उस दिन से मैं गायत्री मंत्र का पाठ करने लगी। फिर कहीं से गायत्री महाविज्ञान की किताब हाथ लगी तो उसमें से गायत्री चालीसा का पाठ रोज करने लगी। गायत्री माँ का पँचमुखी चित्र भी घर में स्थापित कर लिया। पर वह ऋषि मुझे कहीं नहीं मिले। मैं हर जगह, हर व्यक्ति में उस चेहरे को ढूँढती रहती। दिन, महीने और साल बीत गए। जिस दिन मेरे चालीसा पाठ की निश्चित संख्या पूर्ण हुई, मैं कुछ सामान खरीदने बाजार गई तो एक दुकान पर एक पर्चा लगा देखा। लिखा था, 'गायत्री यज्ञ एवं दीपयज्ञ का कार्यक्रम पटियाला के नौहरियाँ मंदिर में, बसंत पंचमी 1994 को हो रहा है।'

मैंने उस कार्यक्रम में भाग लिया। आखिर में श्री शुक्ला जी, जो मुख्य वक्ता थे, ने सभी से देवस्थापना का आग्रह किया। जब मैंने देवस्थापना चित्र लिया और उसमें गुरुदेव की फोटो देखी तो मैं हैरान रह गई। यह वही ऋषि थे जो चार साल पहले मुझे सपने में दिखाई दिये थे। मैं खुशी से नाच उठी। मैंने आयोजकों से गुरुदेव के विषय में पूछा तो पता चला कि उन्होंने तो 1990 में

शरीर छोड़ दिया है। मुझे ऐसा लगा जैसे वर्षों के प्यासे को पानी तो मिला पर पीने से पहले ही छिन गया। मेरी आँखों से बरबस अश्रुधारा बहने लगी। जब हम शान्तिकुञ्ज आये तो पता चला कि एक महीने पहले ही माताजी गुरुसत्ता में विलीन हुई हैं। मेरी पीड़ा का कोई अंत नहीं था। मेरे आँसू थम नहीं रहे थे। मेरे पति नाराज भी हुए, ''बस भी करो, कितना रोओगी ?''

जब हम अखण्ड दीप दर्शन करने गए तो जीजी, डॉ. साहब वहीं पर बैठे थे। जीजी ने मुझसे पूछा, ''मैं इतना क्यों रो रही हूँ ?'' मैं और भी फूट-फूट कर रोने लगी और बताया कि मैं कितनी अभागी हूँ, जो गुरुजी-माताजी से मिल नहीं पाई। तब जीजी ने कहा, ''वे तो अब भी तुम्हारे साथ हैं। उन्हें अपने से अलग मत समझो। शांत हो जाओ। वे ही तुम्हें यहाँ लेकर आये हैं। अब भोजन किये बिना मत जाना।'' उस क्षण मुझे ऐसा लगा जैसे वास्तव में मुझे मेरे गुरुदेव मिल गए हैं। अब तो बस यही प्रर्थना है कि यह जीवन मन, वचन और कर्म से समर्पित ही रहे, तभी जीवन सार्थक है।

मैं खड़ा हूँ, कुछ नहीं होगा

डॉ. ओ.डी.भारद्वाज, ब्रह्मपुरी, मेरठ

घटना सन् 1994 की है। 20 अगस्त 1994 को रिठानी निवासी ओमप्रकाश नाम का रोगी मेरे क्लिनिक पर आया। उसकी नाक से 3 दिन से निरंतर रक्त स्राव हो रहा था। मैंने दवा दी व नाक की पट्टी (इन्टीरिअर नेज़ल पैकिंग)भी की किन्तु रक्त बहना बंद नहीं हुआ। अगले दिन वही रोगी गंभीर अवस्था में फिर आया। एक्सरे कराया, रक्त की जाँच कराई, तत्पश्चात् ग्लूकोज़, इंजेक्शन तथा दवा दी और लगभग 6 मीटर लंबी पट्टी से नाक की पैकिंग की। 48 घंटे पश्चात् 23 अगस्त को सायंकाल 3:00 से 6:00 बजे के बीच उसे पुन: आने के लिये कहा।

रोगी ओमप्रकाश नगरपालिका मेरठ में अल्पवेतन भोगी स्वच्छता कर्मचारी है। वह इतना साधन संपन्न नहीं था कि दिल्ली आदि के नामी-गिरामी अस्पतालों में चिकित्सा कराता। बड़े विश्वास के साथ ई.एन.टी. विशेषज्ञ होने के नाते मेरे पास आया था। मैं स्वयं उसकी ओर से बहुत चिंतित था।

23 अगस्त को दोपहर लगभग 3:45 का समय था। मैं विश्राम कर रहा था। स्वप्न के धुँधलके में मैंने देखा कि वही ओमप्रकाश आ गया है। पूज्य

गुरुदेव उसका हाथ पकड़े हुए हैं। गुरुदेव बोले, ''इसकी पट्टी निकाल।'' मैंने चकित होकर कहा, ''गुरुदेव आप? इसकी नाक से रक्त स्राव की 99 प्रतिशत आशंका है।'' वह बोले, ''मैं खड़ा हूँ, कुछ नहीं होगा। तू इसकी पट्टी निकाल।''

स्वप्न में यह बात चल ही रही थी कि मेरे कम्पाउण्डर ने मुझे यह सूचित करते हुए उठा दिया कि क्लिनिक में मरीज आपकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। स्वप्न की अनुभूति को मन में लिये हुए जैसे ही मैं क्लिनिक में पहुँचा, मैंने देखा ओमप्रकाश भी बैठा हुआ है। उसने बताया कि वह लगभग 15 मिनट से बैठा हुआ है। मुझे अनुमान हुआ कि जब स्वप्न में गुरुदेव उसे लेकर आये थे उसी समय वह भी क्लिनिक में आया था। मैंने उसकी नाक की पैकिंग निकाली, नाक से एक भी बूंद खून नहीं आया। चलते समय वह मुझे पैसे देने लगा। मैंने कहा, ''मैं तुमसे पैसे नहीं ले सकता, क्योंकि तुम कोई पुण्यआत्मा हो। मेरे गुरुदेव ने तुम्हारा हाथ पकड़ा है। तुम्हारे बहाने से मेरी गुरुदेव से बातें हुईं। मैं जब तक तुम्हारा ईलाज होगा, तुमसे पैसे नहीं लूँगा।'' आज भी वह पूर्णत: स्वस्थ है। गुरुसत्ता ने स्वयं उसका कष्ट दूर कर श्रेय मुझे दे दिया।

उस दिन के बाद मैं गुरुदेव के कार्यों के लिये और अधिक समर्पित हो गया तथा प्रतिदिन 4 घण्टे का समय (10:00 से 2:00) गरीबों की नि:स्वार्थ चिकित्सा सेवा में लगाता हूँ। तब से अनुदानों की भी वर्षा होने लगी है, जिसे मैं नित्य अपने जीवन तथा अपने रोगियों पर अनुभव करता हूँ।

1999 में फोटो खींचा

बड़ौदा के **श्री नारसिंह भाई परमार**, बताते हैं कि वे वसंत पंचमी 1999 में अपनी बेटी के साथ शान्तिकुञ्ज आये थे। उनकी बेटी के मन में आया कि क्या अब गुरुजी यहाँ नहीं हैं? अब हम उन्हें कैसे मिल सकेंगे? और इस भाव को लेकर वह बहुत अधिक व्याकुल हो रही थी। उसे गुरुदेव के दर्शनों की प्रबल इच्छा थी। वे प्रवचन के बाद अखण्ड दीप दर्शन हेतु लाईन में लगे थे। जब तक उनका नम्बर आया, तब तक दोपहर की साधना का समय हो चुका था। 15 मिनट के लिए अखण्ड ज्योति के दर्शन के कपाट बन्द हो गये। 15 मिनट बाद जब कपाट खुले, और वे सीढ़ियों पर चढ़े, तो जहाँ गुरुजी-माताजी के चरणों का चित्र लगा है, वहाँ उन्हें पूज्य गुरुदेव उतरते हुए दिखाई दिये। वे ऊनी टोपी सिर पर लगाये हुए थे। हम उन्हें देख कर हतप्रभ रह गये।

एक क्षण को लगा, क्या हम सत्य देख रहे हैं ? इतने में पूज्यवर ने मेरी बेटी से कहा, ''बेटी ! मैं यहीं रहता हूँ। केवल दुनिया वालों को दिखाई नहीं देता, तू चाहे तो मुझे अपने कैमरे में कैद कर डाल।'' उनके ऐसा कहने पर मैंने भी उसे कहा, ''बेटा, फोटो खींच लो।'' उसने फोटो खींच लिया।

वे फोटो दिखाते भी हैं। उस फोटो में लोगों की लाइन ऊपर प्रणाम हेतु जा रही है, और गुरुजी आशीर्वाद की मुद्रा में नीचे उतरते हुए नजर आ रहे हैं। नारसिंह भाई का कहना है कि मुझे गुरुजी के साथ सातों ऋषि भी दिखाई दिये, पर वे फोटो में नहीं आये।

जब हमारी गाड़ी 40 फुट गहरे गड्ढे में थी

(श्री ओंकार पाटीदार जी सन् 1970 के दशक में मिशन के संपर्क में आये और सन् 1982 में स्थाई रूप से शान्तिकुञ्ज आ गये।)

हम लोग श्रद्धेय डॉ. प्रणव पण्ड्या जी के साथ कनाडा में 23.6.2000 को कार्यक्रम समाप्त कर रात्रि लगभग 12.00 बजे ओटावा से मान्ट्रियल लौट रहे थे गाड़ी में मैं, श्री जमुना साहू, श्री राजकुमार वैष्णव एवं श्रद्धेय डॉक्टर साहब बैठे थे। गाड़ी को छगन भाई पटेल चला रहे थे। दो बहिनें भी गाड़ी में थीं। गाड़ी बिल्कुल नई थी। 100 कि.मी. की गति से घनघोर घने जंगल में दौड़ती हुई गाड़ी ने आधा रास्ता तय कर लिया था। आचानक छगन भाई पटेल को झपकी आई और देखते ही देखते गाड़ी एकाएक सड़क से नीचे उतर गई। घरघराहट की ज़ोर से आवाज़ आने लगी। गाड़ी उछलते-उछलते गेंद की तरह नीचे जा रही थी घनघोर जंगल में बड़ी-बड़ी घास के बीचों-बीच गाड़ी खड़ी हो गई। इंजन के बोनट से धुँआ आने लगा। दूसरी गाड़ी के परिजन आवाज देकर हमें गाड़ी से बाहर आने को कह रहे थे। हमारी गाड़ी 40 फुट गड्ढे में थी और आटोमैटिक दरवाजे खुल नहीं रहे थे। श्रद्धेय डॉ० साहब हम सबको हिम्मत बँधा रहे थे। धीरे-धीरे उन्होंने ही दरवाज़े खोले। बाहर आकर देखा कि गाड़ी के पास ही गहरा नाला बह रहा है और सामने पत्थर है। कनाडा जैसे देश में इतनी गति से दुर्घटना सुनिश्चित थी। श्रद्धेय डॉ० साहब ने बताया उन्हें अनुभूति हुई कि दो विशालकाय हाथ सहारा देकर गाड़ी को रोक रहे हैं। गाड़ी बिना पलटे, टकराये, बगैर नुकसान के स्वयं रुक गई और उस महाकाल की सत्ता ने सभी को नया जीवन प्रदान किया।

बड़ी एकादशी को दरवाजा खोलेंगे

श्रीमती मणी दाश, शान्तिकुञ्ज

सुल्तानपुर उ० प्र० के श्री श्याम सुन्दर सिंघल जी शान्तिकुंज में कई वर्षों तक रहे। सन् 2003 में उनकी पत्नी 40 प्रतिशत जल गई थीं। जलने की असह्य पीड़ा होती है। फिर भी वे शान्तिकुंज चिकित्सालय में धैर्य पूर्वक सब सहती रहीं। इतने कष्ट में भी वह प्रतिक्षण गायत्री मंत्र जपती रहतीं। बीच-बीच में कराहती भी थीं, पर सहनशीलता की प्रतिमूर्ति बनी रहीं। कभी-कभी वे बेहोश भी रहतीं।

एक दिन जब हम लोग उनके पास बैठे थे तो वे बोलीं ''गुरुजी-माताजी आये थे।'' उन्होंने कहा है, ''बेटी! अभी तुम्हारा समय पूरा नहीं हुआ है। 3-4 दिन बाद बड़ी एकादशी को हम तुझे लेने आयेंगे। अभी 3-4 दरवाजे खोले हैं। शेष दरवाजे उसी दिन खोलेंगें।'' और सचमुच ही अपने कथनानुसार बड़ी एकादशी को उन्होंने शरीर त्याग दिया।

उस पल हमें वे क्षण याद आ गये जब गुरुदेव व्यक्तिगत चर्चा में व प्रवचनों में कार्यकर्ताओं से कहा करते थे-''बेटा! तेरे अन्तिम क्षण में हम तेरे साथ रहेंगे व तुझे भौतिक कष्टों से मुक्ति दिलायेंगे।'' और वास्तव में समय आने पर अनेकों परिजनों को अनेकों प्रकार से वे इसका आभास कराते रहते हैं।

मुझे उसे बचाना है।

राजनांदगाँव के **श्री जुगल किशोर लड्ढा जी** बताते हैं कि 2003 में उनके शहर में नव चेतना शिखर यज्ञ था। हम लोग उसकी तैयारी में लगे थे। हमारा संकल्प था कि सुबह पहले दो घंटा गुरुदेव का काम करेंगे तब अपनी दुकान आदि खोलेंगे। इस समय में हम लोग प्रचार करने व चंदा आदि लेने का काम करते थे।

एक दिन सुबह मेरे मन में आया कि आज सुबह न जाकर शाम को चलेंगे। मैं दुकान खोलने ही जा रहा था कि श्री यशवंत भाई ठक्कर जी का फोन आ गया। मैंने कहा, ''शाम को चलेंगे।'' इस पर वे बोले कि हमारा संकल्प तो सुबह का है। कम से कम दो घर में तो जाना ही है। मैंने कहा, ''ठीक है। मैं आता हूँ,'' और दुकान का शटर जो आधा खोला था, बंद करके मैंने अपनी मोटरसाइकिल उठायी और उनके घर की ओर चल दिया।

रास्ते में शमशानघाट पड़ता था। उस तरफ ज्यादा भीड़ नहीं रहती इसलिये मैंने मोटरसाइकिल की रफ्तार थोड़ी तेज कर दी। जैसे ही मैं शमशान घाट के सामने से निकल रहा था कि एक साइकिल सवार ने सड़क क्रास किया। सामने से एक व्यक्ति हीरो पुक पर तेज स्पीड से आ रहा था। साइकिल सवार के चक्कर में हम दोनों ही एक दूसरे को देख नहीं पाए और आपस में टकरा गए। मैं इतना ही देख पाया था कि सामने वाले व्यक्ति को काफी चोट आई है। इतने में मुझे ख्याल आया कि मैं तो गुरुजी का काम करने जा रहा हूँ। मुझे चोट आई होगी तो मेरे काम का क्या होगा? मैंने गुरुजी का ध्यान किया और गायत्री मंत्र जपने लगा। मैं भी गिर पड़ा था मोटर साइकिल मेरे ऊपर थी। मुझे चक्कर भी आ रहा था। इतने में हमारे आस-पास कुछ लोग इकट्ठे हो गये। उन्होंने हीरोपुक सवार को रिक्शा पर बिठाया और अस्पताल भेज दिया। उसे काफी चोट लगी थी। मुझे भी उठा कर पानी पिलाया। मेरे कपड़े आदि व्यवस्थित किये। मोटरसाइकिल को खड़ा किया। जब मुझे थोड़ा होश आया तो मैंने देखा मेरे कपड़े फट गये हैं पर मुझे खास चोट नहीं आई है। मैंने खुद को व्यवस्थित किया और फिर यशवंत भाई के घर चला गया। उन्होंने मेरी हालत देखी और सारा वृतांत सुना तो कॉफी पिलाने के बाद बोले, ''आज रहने देते हैं, कल चलेंगे'' तो मैंने कहा कि अब मैं ठीक हूँ। आ ही गया हूँ तो काम करके ही लौटूँगा। हम दोनों ने उस दिन 4-5 घरों में से चंदा लिया। जब मैं घर लौटा तो मेरे कपड़ों की हालत देखकर सबने प्रश्नों की झड़ी लगा दी। मैंने सब हाल बताया।

मेरे छोटे भाई को जब पता चला तो वो बड़ी हैरानी से बोला, ''अरे! भइया का ऐक्सीडेन्ट हो भी गया।'' उसकी बात सुनकर सबको बड़ी हैरानी हुई। वह दौड़ा-दौड़ा मेरे पास आया। हैरानी से मुझे ऊपर से नीचे तक देखते हुए बोला, ''आपका ऐक्सीडेन्ट हो भी गया! सुबह पाँच बजे ही तो गुरुजी मेरे सपने में आये थे और मुझे बोले कि आज जुगल का ऐक्सीडेन्ट होने वाला है। मुझे उसे बचाने जाना है। क्योंकि वह मेरा काम करता रहता है।''

''मैं आपको बताने ही वाला था। पर मुझे क्या पता था कि इतनी जल्दी आपका ऐक्सीडेन्ट हो जाएगा।''

श्री जुगल किशोर लड्ढा जी कहते हैं कि उनके पास गुरुजी के इतने संस्मरण हैं कि उनकी एक डायरी भरी हुई है।

यह जीवन ही उनका है

श्री रामप्रकाश जेसलानी, श्रीमती शालिनी जेसलानी

कानपुर के श्री रामप्रकाश जेसलानी जी कहते हैं कि मैं, सन् 1995 में गायत्री परिवार के सम्पर्क में आया। सन् 1998 में मुझे विचित्र प्रकार की तकलीफ हुई। मुझे अचानक ही खून की उल्टियाँ होने लगीं। मेरा पूरा परिवार घबरा गया कि अचानक यह क्या हो गया? दिन में चार-पाँच बार मुझे खून की उल्टी हो जाती थी। मेरा मुँह कड़वा होता और एकाएक लगभग आधा गिलास खून निकल जाता। मेरी तकलीफ देखकर हमारे तीनों बच्चों ने पूजा घर में अनवरत् गायत्री महामंत्र का जप प्रारंभ कर दिया। यह क्रम चलते हुए जब तीन दिन हो गये तो मुझे लगने लगा कि अब शायद मेरा अंतिम समय आ गया है। मैंने पत्नी से कहा कि मुझे अस्पताल में भर्ती करा दो, शायद खून की जरूरत पड़े। हमने हमारे पड़ोसी मित्र जो कि डॉक्टर हैं, उनसे चर्चा की। उन्होंने मेरे खून की जाँच की। मेरा हीमोग्लोबिन ठीक था। वह हैरान हो कर कहने लगे ऐसा कैसे हो सकता है? इतने दिन से खून की उल्टी हो रही है और हीमोग्लोबिन नार्मल है? मुझे खून की उल्टियाँ बराबर हो रही थीं, सो अगले दिन हम दिल्ली में एम्स अस्पताल में दिखाने गये।

इस बीच हमारे घर पर अखण्ड जप भी चलता रहा। कानपुर के गायत्री परिवार के बहुत से भाई-बहनों ने अपने घर पर ही मेरे लिये जप प्रारंभ कर दिया। शक्तिपीठ पर भी मेरी जीवन रक्षा के लिये जप होने लगा।

मुझे एम्स में भर्ती करा दिया गया। अंतर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त डाक्टर ने मेरा ब्रॉन्कोस्कोपी टैस्ट किया। सप्ताह भर बाद रिपोर्ट आई, पर रिपोर्ट के आने के बाद मुझे दुबारा टैस्टिंग के लिये बुलाया गया और दुबारा मेरे टैस्ट हुए। दुबारा टैस्ट करने का करण पता करने पर मालूम हुआ, दोनों ही बार मेरी रिपोर्ट नार्मल थी।

वहाँ के सबसे बड़े डाक्टर ने मेरी पूरी रिपोर्ट पर एम्स के बड़े डाक्टरों की मीटिंग बुलाकर चर्चा की, फिर मुझसे मेरी सारी तकलीफ के बारे में चर्चा की। मेरी सारी जाँच रिपोर्ट नार्मल थी, अत: डाक्टरों ने मुझे स्वस्थ घोषित कर दिया।

लगभग 24 दिन तक मुझे खून की उल्टियाँ आती रहीं फिर अकस्मात् ही 24वें दिन खून की उल्टियाँ बंद हो गईं। किन्तु मेरी सब रिपोर्ट नार्मल कैसे आई, इसका पूरा-पूरा श्रेय मैं पूज्य गुरुदेव को देता हूँ। क्योंकि जैसे ही मेरी तबीयत बिगड़ी तो हमारे परिवार में सबने मिलकर अखण्ड जप प्रारंभ कर दिया। जेसलानी जी कहते हैं कि मैं अन्तर्हृदय से समझ रहा था कि जब गुरु कृपा हो गयी, तो असंभव भी संभव हो जाता है।

उसके बाद मैं सक्रिय हो गया। जो कोई भी नया आफिसर कानपुर आता, मैं उन्हें दो गायत्री मंत्र की कैसेट देता था। एक घर में सुनने के लिए, दूसरी वाहन में। कुछ वर्षों में समर्पण का भाव परिपक्व हुआ, और अपनी ''पशुपति बिस्किट'' की पूरी फैक्टरी बंद करके फरवरी, 2006 में हरिद्वार, शान्तिकुञ्ज में सेवा के लिए आ गया। सभी मित्रों, सम्बन्धियों ने कहा, 'तुम पागल हो गये हो क्या? दिमाग सरक गया है क्या? जो तुम अपनी जमी जमायी फैक्टरी बन्द कर रहे हो।'' लेकिन मेरी अन्तर्स्थिति को कोई कहाँ समझ सकता था?

फरवरी सन् 2006 में हम हरिद्वार आ गये और शान्तिकुञ्ज में अपना पूरा समय देने लगे। दो-तीन माह बाद हम अपनी कम्पनी के सेल टैक्स-इन्कम टैक्स के मामले निपटाने के लिए कानपुर गये। 5 जून 2006 को हम अपने सब मामले निपटाकर, अपनी कार द्वारा सपत्नीक हरिद्वार लौट रहे थे कि दिन में 12.30 बजे के लगभग अलीगढ़ से 15 किमी० पहले जशरथपुर कस्बे में हमारी कार का एक्सीडेण्ट हो गया। इस जबर्दस्त एक्सीडेंट में मुझे स्पष्ट अनुभव हुआ कि हमें पूज्यवर ने ही नया जीवन दिया है।

मैं गाड़ी चला रहा था और मेरी पत्नी मेरे बगल में बैठी थी। एक टाटा सफारी गाड़ी तीव्र गति से सामने आ रही थी। उस गाड़ी ने हमारी गाड़ी में जोरदार टक्कर मारी। हमारी गाड़ी एकदम पिचक गयी और हम दोनों को काफी गंभीर चोटें आयीं। टाटा सफारी का ड्रायवर अपनी गाड़ी लेकर फरार हो गया। मैं तो एक्सीडेंट होते ही बेहोश हो गया। मेरी पत्नी को कुछ-कुछ होश था, पर हम दोनों गाड़ी में बुरी तरह फँस गये थे।

अलीगढ़ जिले में उस दिन साम्प्रदायिक दंगों की वजह से कर्फ्यू लगा हुआ था। सड़क पर एकदम सन्नाटा था, न कोई आदमी कहीं नजर आ रहा था,

न ही कोई गाड़ी आ जा रही थी। इतनी देर में मेरी पत्नी ने देखा कि पूज्य गुरुदेव उनके पास खड़े हैं। गुरुदेव को वहाँ देखकर वह आश्चर्यचकित रह गयी, और अर्धमूर्च्छित सी अवस्था में वह गुरुदेव को बस देखती रही। उसके आस-पास जो कुछ हो रहा था, वह सब देख पा रही थी।

उसने देखा कि गुरुदेव कार के बाहर लगातार टहल रहे थे, इतने में दो व्यक्ति आये और उन्होंने हम दोनों को हमारी कार का दरवाजा तोड़कर बाहर निकाला। मेरी जेब में लगभग 20,000 रु. थे। वो भी उन्होंने निकाले। मैं 3 सोने की अँगूठियाँ पहने हुए था, वे उतारीं। फिर उन्होंने मेरी पत्नी के हाथों से चूड़ियाँ एवं अन्य गहने उतारे। साथ ही मेरी पत्नी से कहा कि बहन, किसी भी बात की चिन्ता मत करना। आपका एक भी रुपया व गहना गुम नहीं होगा। कुछ और भी है, तो हमें दे दो। 'आपका कुछ भी सामान गुम नहीं होगा' इस बात को उन्होंने 3-4 बार दुहराया ताकि मेरी पत्नी को विश्वास हो जाये। मेरी पत्नी ने आँखों से इशारा करके बताया कि मेरे पति की ड्राइविंग सीट के नीचे सामान रखा है। उसमें एक अखबार में लपेटे हुए 4 लाख रु. रखे थे। उन दोनों ने वह धन भी निकाल लिया। मेरी पत्नी का पर्स भी सँभाला। गहने और पैसे मिलाकर लगभग 8 लाख रु. की सम्पत्ति थी। फिर उन्होंने हम दोनों को अपनी गाड़ी में लादा। उस समय तक पूज्य गुरुवर बराबर मेरी पत्नी को हमारे पास खड़े दिखाई देते रहे। जब हम लोगों को वह व्यक्ति गाड़ी में लाद कर चल दिये, तो गुरुवर अन्तर्ध्यान हो गये। गुरुवर के अन्तर्ध्यान होने तक मेरी पत्नी ने उन्हें देखा। उसके बाद वह कब बेहोश हो गई, उसे नहीं पता। उन लोगों ने हमारे मोबाइल से ही हमारे सब रिश्तेदारों व मित्रों को हमारे ऐक्सीडेंट की सूचना भी कर दी।

मेरी दिल्ली वाली बेटी ने उन लोगों से कहा कि हम आपके बहुत-बहुत ऋणी हैं। मैं तुरंत पहुँच रही हूँ पर मुझे पहुँचने में कम से कम तीन घंटे लगेंगे, तब तक आप कृपाकर वहीं रहियेगा। हमसे मिले बिना नहीं जाइयेगा। वह लोग बोले कि हम लोग मुस्लिम हैं और यहाँ दंगा चल रहा है। हम दोनों पुलिस के किसी पचड़े में नहीं पड़ना चाहते। मेरी बेटी ने जब बहुत अनुनय-विनय किया, तो उन लोगों ने कहा कि ठीक है, तुम्हारे आने तक हम तुम्हारे मम्मी-पापा की देखभाल कर रहे हैं, पर हम तुमसे मिलेंगे नहीं। इसके बाद उन लोगों ने हमारा सब सामान, गहने व पैसे आदि नर्सिंग होम के डॉक्टर को दे दिये

व कहा, ''डॉ. साहब यह इन दोनों घायलों की अमानत है। इनके बेटी-दामाद कुछ देर में आने वाले हैं, आप कृपाकर सब सामान उन्हें दे दीजियेगा।'' जैसे ही हमारी बेटी व दामाद नर्सिंग होम में पहुँचे, वैसे ही वे लोग दूसरे दरवाजे से निकल गये। हमारी बेटी व दामाद ने उन्हें बहुत खोजा, पर वे कहीं नहीं मिले।

हमें आज भी यही आभास होता है कि वह दोनों व्यक्ति और कोई नहीं पुज्य गुरुदेव के भेजे देवदूत ही होंगे, जिन्हें पूज्यवर ने हमें अस्पताल तक पहुँचाने का माध्यम बनाया। इसीलिये वे हमारे बच्चों के पहुँचते ही वहाँ से चले गये। कोई सामान्य व्यक्ति होते, तो हमारे बच्चों से अवश्य मिलते।

शाम तक हमारे सभी परिजन अलीगढ़ पहुँच गये और हमारी यथोचित चिकित्सा व्यवस्था हो गई। हमें इतनी गंभीर चोटें लगी थीं कि हमारे बचने की कोई उम्मीद नहीं दिख रही थी। परंतु गुरुदेव ने हमारे चारों ओर सुरक्षा चक्र बना दिया था, तो भला मृत्यु कैसे पास फटकती?

हम दोनों को अपोलो हॉस्पिटल में भर्ती कराया गया। 28 दिन तक वहाँ भर्ती रहे। पत्नी और मेरे, दोनों के पैरों में रॉड डालनी पड़ी, कई ऑपरेशन हुए। हड्डियों के छोटे-छोटे टुकड़े प्लेट में रखकर जोड़े गये, फिर वह प्लेट अन्दर डाली गयी। कई महीने हमें स्वस्थ होने में लग गये।

1 जून 2008 से मैंने फिर अपना समयदान शान्तिकुंज में प्रारंभ कर दिया। अपने इस जीवन को मैं पूज्य गुरुदेव का अनुदान ही मानता हूँ। शेष जीवन उनके कार्य में ही लग जाये, बस यही गुरुवर से नित्य प्रार्थना करता हूँ।

गोली पीछे चली जायेगी

श्रीमती उर्मिला श्याग (सुनीता) किक्करवाली, फाजिलका, पंजाब

उर्मिला बहन जी ने बताया कि श्री मनमोहन जी श्याग की वह दूसरी पत्नी हैं। पहली पत्नी से उन्हें तीन संतानें हैं। एक बेटी, दो बेटे। बेटी की वे शादी कर चुके थे। मेरे पति की तीन सौ कीले जमीन है। दामाद के मन में उनकी जायदाद को लेकर लालच आ गया था। एक दिन उसने मेरे सामने प्रस्ताव रखा कि इनके दोनों बेटों की शादी तो मैं होने ही नहीं दूँगा। यदि तुम मेरे साथ मिल जाओ तो मनमोहन जी को मैं देख लूँगा। सब पैसा हम दोनों लोग आपस में बाँट लेंगे। मैंने उसको डाँट लगाई और भगा दिया। पति के आने पर उसकी सारी

योजना उन्हें बता दी। उन्हें जब यह बात पता चली तो उन्हें बहुत कष्ट हुआ और ससुर-दामाद की आपस में थोड़ी कहासुनी भी हो गई। विक्रम इस बात से मुझसे बहुत नाराज था, पर हमने उससे यह आशा नहीं की थी कि वह इस हद तक गिर जायेगा।

यह घटना 4 जून 2007 की है। विक्रम शाम को चार बजे शराब पीकर, मेरे घर आया। उसके दोनों हाथों में दो पिस्टल थी। मैं हॉल में बैठी थी। उसने दरवाजे से ही तीन गोलियाँ मेरे ऊपर चलाईं। एक गोली मेरे पेट के आर-पार हो गई। एक पेट के अन्दर, नाभी के नीचे धँस गई और एक गोली दिल के वॉल्व के पास लगी। सामने दीवार पर गुरुदेव का चित्र लगा था। जैसे ही उसने मुझपर हमला किया, मेरी निगाहें उस चित्र से टकरायीं और मैंने कहा हे गुरुदेव! मुझे बचाओ। यह कहते ही मेरी आँखें बंद हो गईं। मुझे गुरुदेव के स्पष्ट दर्शन हुये और गुरुदेव आशीर्वाद मुद्रा में दिखाई दिये। बोले, ''बेटा तुझे कुछ नहीं होगा, मेरा आशीर्वाद तुम्हारे साथ है।''

मुझे तुरंत लुधियाना के डी.एम.सी. अस्पताल ले जाया गया। लुधियाना पहुँचने में हमें चार घण्टे लगे। इस बीच मुझे पूरा होश था, मैं सबसे बात कर रही थी और सबको धीरज बँधा रही थी कि मुझे कुछ नहीं होगा। मेरे अन्दर पता नहीं कहाँ से ताकत आ गई थी। मुझे बिल्कुल डर नहीं लग रहा था।

हॉस्पिटल में पहुँचने पर डॉक्टरों ने तुरंत पेट का ऑपरेशन करके गोली निकाल दी। लेकिन हार्ट के ऑपरेशन के लिए साफ मना कर दिया। कहा कि गोली वॉल्व के बिल्कुल पास है, ऑपरेशन करने से खतरा है, इसे हम नहीं कर सकते। मैं चार दिन बेहोश रही। डॉक्टर हर तीसरे घण्टे में मेरे हार्ट का एक्सरे लेते थे, कि क्या स्थिति है। पाँचवे दिन मुझे होश आया। जब मुझे पता चला कि दिल के पास लगी गोली तो वहीं पर है, अभी संकट टला नहीं है। यह जानकर कि मेरे बचने की कोई उम्मीद नहीं है, मुझे बहुत निराशा हुई। मैं रातभर रोती रही और गुरुजी से प्रार्थना करने लगी कि इससे तो अच्छा था मैं उसी समय मर गई होती। मेरी छोटी सी बेटी है, उसका क्या होगा? रोते-रोते पूरी रात बीत गई, मेरे आँसू थमने का नाम नहीं ले रहे थे।

सुबह चार बजे मुझे गुरुजी के दर्शन हुये। वे मेरे सामने खड़े थे। उन्होंने कहा, ''बेटा, कुछ नहीं होगा। गोली पीछे चली जायेगी। चिंता मत करो तुम्हें कुछ नहीं होगा।'' सुबह जब डॉ. चैक करने आये तो डॉ. ने पीठ में देखा कुछ सूजन है। एक जगह थोड़ी फूल गई है। डॉ. ने छू कर देखा। गोली अपनी जगह से खिसक कर पीठ में चमड़ी की ऊपरी परत में आ गई थी। डॉ. ने तुरंत नर्स को बुलाया और वहीं बिस्तर पर ही एक हल्का सा चीरा लगाकर गोली को निकाल दिया।

डॉ. हैरान थे, ऐसा कैसे हो गया? थोड़ी देर बाद डॉक्टरों की पूरी टीम ने मुझे घेर लिया। दुबारा एक्स-रे लिया गया। पहले के सब एक्स-रे को वे बार-बार देख रहे थे। रात्रि 3:00 बजे भी जो एक्स-रे लिया गया था, उसमें भी गोली अपनी जगह पर ही थी। सब हैरान थे कि अचानक सुबह तक गोली इतनी पीछे कैसे पहुँच गई? डी.एम.सी. हॉस्पिटल की पूरी टीम बैठी। फिर से उन्होंने कई ऐंगल से एक्स-रे करके देखा, पर कुछ रहस्य समझ नहीं आया।

फिर मुझसे बोले, ''आश्चर्य है! हमारी समझ से बाहर है कि ऐसा कैसे हो गया? आप बहुत भाग्यशाली हैं।'' तब मैंने उन्हें गुरुदेव के दर्शनों के बारे में बताया। मेरे सिरहाने गायत्री महाविज्ञान रखा था। अस्पताल का हैड डॉ., ''क्या मैं इसे देख सकता हूँ?'' कहकर उसे मुझसे माँग कर ले गया। अगले दिन वह पुनः आया और मुझे उस पुस्तक का पैसा यह कहकर दे गया कि इसे तो मैं अपने पास रखूँगा, आप और ले लेना।

उर्मिला बहन भावुक होकर कहने लगीं, ''मैं तो मर गई थी। मेरा यह जीवन गुरुजी का दिया हुआ जीवन है।'' कौन कह सकता है गुरुदेव नहीं हैं? वे आज भी हैं, मैं इसका प्रमाण हूँ। उर्मिला बहनजी ने गोली के निशान भी दिखाये।

जीवन सार्थक जीना चाहिये

श्री रमेसर कुमार निर्मलकर रैता, रायपुर के नये जुड़े परिजन हैं। वे सन् 1991 से ड्राईविंग का काम करते रहे हैं। वे कहते हैं कि मेरा जीवन बहुत घटिया हो गया था। जीवन में शराब, माँस आदि अनेक विकार जुड़ गये थे। मैं अधिकाँश घर से बाहर ही रहा, देश भर में भटकते हुए ही जीवन कटा। घर पर तो मैं बस, पत्नी-बच्चों के लिए पैसा भेजता रहता था।

घर जाता तो पत्नी आवेशित होती, झगड़ा करती, ढेरों उलाहने देती। मेरे जीवन में शांति नहीं थी। पत्नी के झगड़े व तानों से तंग आकर मैं आत्महत्या करने का विचार करने लगा। मुझे अपने जीवन से घृणा होने लगी थी। फाँसी लगाकर या विष खाकर आत्महत्या करने का विचार, बार-बार मन में आता। एक दिन पत्नी ने भोजन तो परोसा, पर खूब खरी-खोटी भी सुनायी। मन में आया, अब तो बिल्कुल जीना ही नहीं है। भोजन सम्मुख रखा था, पर खाने का मन नहीं हो रहा था। आत्महत्या का विचार प्रबल होता जा रहा था।

यह घटना दिसम्बर माह, 2010 की है। थाली मेरे सामने परोसी रखी थी और मैं आत्महत्या के विचारों में खोया हुआ था। तभी मैंने देखा, पूज्य गुरुदेव-वन्दनीया माताजी सम्मुख आकर बैठ गये हैं। मैं हैरान रह गया। वे मुस्कुराते हुए कहने लगे, ''बेटा! भोजन क्यों नहीं करता, चल भोजन कर।'' फिर प्रेरणा देते हैं कि ''बेटे, यह जीवन गँवा देने के लिए नहीं है, जीवन सार्थक जीना चाहिए।'' मैं जब तक भोजन करता रहा मुझे बराबर उनकी उपस्थिति का अहसास होता रहा। आत्महत्या का विचार मन से तिरोहित हो गया और उसी क्षण से मेरा जीवन बदल गया। जीने की उमंग पैदा हो गई और उसके बाद मैंने सब दुर्व्यसन छोड़ दिये।

गुरुसत्ता का परिजनों से-

आश्वासन एवं अनुरोध

इन पंक्तियों में परम वंदनीया माताजी ने अपने पुत्रों के लिये अपने उद्‌गार को केवल लेखनी ही नहीं दी अपितु अपनी आवाज भी दी है। इस गीत के एक-एक शब्द में वंदनीया माताजी ने अपने प्राण फूँके हैं। पूज्य गुरुदेव एवं वंदनीया माताजी ने अपने कार्यकर्त्ताओं को 'अपने अंग-अवयव' कहा है। प्रस्तुत गीत में उसी भाव को और पुष्ट करते हुए गुरुसत्ता ने आश्वासन दिया है कि दिये हुए उत्तरदायित्वों को पूरा करने के क्रम में जब भी मार्गदर्शन, शक्ति एवं सहायता की आवश्यकता अनुभव होगी, परिजन उनका स्पष्ट संरक्षण और मार्गदर्शन भरा साथ अनुभव करेंगे। हमारी श्रद्धा और समर्पण जितना गहरा होगा, उतनी ही सघनता से हमें यह अनुभूति होगी कि वास्तव में गुरुसत्ता हमारा उतना ही ध्यान रखती है जितना कोई अपने शरीर के एक-एक अंग का।

जब स्वयं को विकल तुम अनुभव करोगे।
तब हमारा स्नेह देता साथ होगा॥
आर्त स्वर में जब कभी कुछ भी कहोगे।
घाव पर मरहम लगाता हाथ होगा॥

ण्कष्ट या कठिनाइयों से तुम न डरना।
भँवर से मझधार से संघर्ष करना॥
जीत होगी जिन्दगी की हर डगर में।
लोक जीवन में नया उत्साह भरना॥
पुत्र तुमको जब अकेलापन खलेगा।
माँ-पिता का कवच भी तब साथ होगा॥

हम तुम्हारी श्वाँस में ऊर्जा भरेंगे।
खून की हर बूँद तक नव प्राण देंगे॥
यह मधुर सम्बन्ध जन्मों तक निभेगा।
सूक्ष्म में रहकर तुम्हें वरदान देंगे॥
जब कभी हारे थके अनुभव करोगे।
पीठ को थपकी लगाता हाथ होगा।।

आस है तुम हर दुखी को प्यार दोगे।
आँसुओं को तुम नई मुस्कान दोगे।।
जो भटकते हैं यहाँ जीवन समर में।
दीप बनकर ज्योति का अनुदान दोगे।।
जब तुम्हारी ज्योति डगमग सी दिखेगी।
दिव्य आँचल का सहारा साथ होगा।।

साधको श्रम बिन्दु जब भू पर गिरेंगे।
तब धरा पर प्यार के उपवन खिलेंगे।।
उस सुवासित शांति के वातावरण में।
इस जगत को स्वर्ग जैसा सुख मिलेगा।।
कार्य जब उत्साह से पूरा करोगे।
शक्ति आशीर्वाद देता हाथ होगा।।

पुत्र तुम मजबूत कन्धे हो हमारे।
अंग-अवयव हो तुम्हीं दो नयन प्यारे॥
भार तुम पर आज गुरुतर सौंपते हैं।
पूर्णतः निश्चिन्त तुम सबके सहारे॥
शक्ति की तुमको कमी अनुभव न होगी।
ब्रह्मबल निश्चय तुम्हारे साथ होगा।।

एक थे पहले! पुनः अब एक होंगे।
द्वैत के बन्धन को हम अब तोड़ देंगे।।
सूक्ष्मता को देखकर आहें न भरना।
हम तुम्हारे थे तुम्हारे ही रहेंगे।।
नयन मूँदे ध्यान में आओ कहोगे।
दर्श देता प्रखर सविता पुँज होगा।।

संपर्क सूत्र-

गायत्रीतीर्थ- शान्तिकुञ्ज, हरिद्वार (उत्तराखण्ड) भारत

फोन-(01334) 260602, 260309, 260328 **फैक्स-**260866